दीर्घायु कैसे प्राप्त हो ?

लेखक

ब्रह्मर्षि पं. श्रीपाद दामोदर सातवलेकर

विद्यामार्तण्ड, साहित्य-वाचस्पति, गीतालङ्कार,

अध्यक्ष- स्वाध्यायमण्डल

सहायक लेखक

श्रुतिशील शर्मा, तर्कशिरोमणि, शास्त्री, एम. ए.

पारडी [जि. वलसाड]

दो शब्द

मनुष्य जीवनका उद्देश्य

मनुष्य इस पृथ्वीपर जन्म लेता है उसके पीछे कुछ हेतु होता है। वह हेतु है उसके अन्दरकी अपूर्णता दूर हो और वह पूर्ण हो जाये। पूर्ण विकासका अर्थ है पुरुषसे उत्तम पुरुष बनना, अथवा पुरुषोत्तम बनना। पर यह स्थिति बडी कष्ट साध्य है।

मानव जीवनके उद्देश्यको अथर्ववेदके एक मंत्रभागमें इस प्रकार बताया है—

सहस्रायुः सुकृतश्चरेयम्। अथर्व. १७।१।२७

'मैं हजारों वर्षकी आयुतक उत्तम कर्म करता रहूँ।'

देवताका आदर्श

मनुष्यको पुरुषसे पुरुषोत्तम बनानेके लिए वेद एक मार्ग बताता है, देवताओंका अनुकरण। 'यत् देवा अकुर्वंस्तत्करवाणि' (शतपथ ब्राह्मण) जो कुछ देवोंने किया उसे मैं भी करूं। मनुष्य देवताओंके आदर्श सामने रखकर उनके सदृश वर्तन करता हुआ प्रगतिके मार्ग पर बढता चला जाए। देवताओंके गुण अपने जीवनमें ढाले।

जीवात्मा परमात्माके अत्यन्त समीप है। परमात्मा और जीवात्माका सम्बन्ध शास्त्रोंमें अग्नि और चिनगारीका बताया है। आवश्यकता केवल इस बातकी है कि चिनगारी बढकर दावानलका रूप धारण कर ले अर्थात् अपूर्ण जीवात्मा परमात्माके संसर्गसे पूर्णता प्राप्त कर ले।

मनुष्य इस स्थिति तक 'सुकृत' अर्थात् उत्तम करके ही पहुंच सकता है। जिस प्रकार देवता सर्वदा उत्तम कर्म ही करते हैं, उसी प्रकार मनुष्यको भी उत्तम कर्म ही करने चाहिए। वेदका आदेश है—

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेत् शतं समाः। यजु. ४०।२

+

मनुष्य (उत्तम) कर्म करता हुआ ही इस संसारमें सौ वर्ष जीनेकी इच्छा करे।

मनुष्यकी आयु

छान्दोग्य उपनिषद्ने मनुष्यकी आयु ११६ वर्षकी निश्चित की है, और उसने ११६ वर्ष तक काम करनेकी योजना भी बनाकर प्रस्तुत की है, जो इस प्रकार है—

पुरुषो वाव यज्ञस्तस्य यानि चतुर्विंशतिवर्षाणि तत्प्रातःसवनम्।
अथ यानि चतुश्चत्वारिं शद्वर्षाणि तन्माध्यन्दिनं सवनम्।
अथ यान्यष्टाचत्वारिंशद्वर्षाणि तत् तृतीयं सवनम्।

छां. उ. ३।१६।१–३

'पुरुष एक यज्ञ है, उसके जो प्रथम २४ वर्ष हैं वह उस यज्ञका प्रातः सवन है।'

'जो ४४ वर्ष हैं वह उस यज्ञका माध्यन्दिन सवन है।'

'जो ४८ वर्ष हैं वह उसका तृतीय सवन या सायं सवन है।'

इस प्रकार २४ + ४४ + ४८ = ११६ वर्ष तकका कार्यक्रम छान्दोग्य उपनिषद्ने बनाकर दिया है। इतना तो काम करना मनुष्यके लिए आवश्यक है ही, पर इसके बाद भी उसका कर्तव्य है कि वह इधर उधर भ्रमण करता हुआ लोगोंमें ज्ञान फैलाये। वेदोंमें आए हुए– 'भूयश्च शरदः शतात्' का भी यही अर्थ है, मनुष्यको १०० वर्ष तो जीना ही जीना चाहिए, पर वह अपने कर्मोंसे इसे बढा भी सकता है और यदि वह अपने कर्मोंसे १०० वर्षको १५० या २०० कर सकता है तो वह ही अपने कर्मोंसे १०० को ७५ या ५० भी कर सकता है। तात्पर्य यह कि मनुष्यकी आयु उसके कर्मोंपर निर्भर होती है।

प्रस्तुत पुस्तकमें इसी विषयपर प्रकाश डाला गया है कि मनुष्य दीर्घायु कैसे प्राप्त कर सकता है। इस पुस्तकमें दीर्घायुके कई साधन

बताये हैं। उनको करनेसे मनुष्यकी आयु लम्बी हो सकती है। विचारार्थ उनमेंसे कुछ यहां देते हैं—

ईश्वरभक्तिसे आयुप्राप्ति

महाभारतमें एक स्थल पर महाराज युधिष्ठिर द्वारा दीर्घायु प्राप्तिके मार्गको पूछनेपर भीष्मने कहा था—

ऋषयो दीर्घसन्ध्यत्वाद्दीर्घमायुरवाप्नुयुः।

'ऋषियोंने दीर्घ संन्ध्यासे दीर्घायु प्राप्त की थी।' वेदमें भी इस बातका संकेत है—

१ आयुः प्रजावत् तस्मै इत् अर्चन्ति ॥ २९ ॥

आयु और प्रजाकी कामना करनेवाले इसी ऐश्वर्यवान् परमात्माकी पूजा करते हैं।

२ एषां भृत्यं ऋणधत् स जीवात् ॥ १८ ॥

जो इन देवोंको (देववाचक एक परमेश्वरकी) सेवा करता है– वह जीवित रहता है। परमात्माकी सेवा उतनी ही लगनसे करनी चाहिए, जितनी लगनसे एक (भृत्य) नौकर अपने स्वामीकी करता है।

३ देवानां सख्यं नः आयुः प्रतिरन्तु ॥ १९ ॥

देवोंकी मित्रता हमारी आयु बढावे।

४ उपस्तुतस्य आयुः द्राघीयः ॥ ९३ ॥

ईश्वरकी स्तुति करनेवालेकी आयु लम्बी होती है।

५ वरुण! ब्रह्मणा वन्दमानः त्वा तत् यामि, आयुः मा प्रमोषीः ॥ २३५ ॥

हे वरुण! स्तोत्रोंसे तेरी वन्दना करता हुआ मैं तुझसे आयु मांगता हूं। तू मेरी आयु कम न कर।

६ वरुण! अयं तव शरदः शतं जीवाति ॥ १४७ ॥

यह तेरा होकर ही १०० वर्षतक जीवित रह सकता है।

७ अस्य सखा न हन्यते ॥ १४८ ॥

इस ईश्वरका सखा मरता नहीं।

इस प्रकार ईश्वरकी भक्ति करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है।

दानसे दीर्घायुकी प्राप्ति

हर पदार्थका उपभोग त्यागभावसे करनेसे भी दीर्घायुकी प्राप्ति होती है—

१ शतं हिमाय गोनाम् ॥ २८ ॥

सौ वर्षतक जीनेके लिए गौओंका दान किया।

२ दक्षिणावन्तो अमृतत्वं भजन्ते, दक्षिणावन्तः प्रतिरन्त आयुः ॥ २७ ॥

दानशील पुरुष अमरताको प्राप्त करते हैं, दान देनेवालोंकी आयु बढती है।

३ त्वं दाशुषे अदितिः ॥ ३१ ॥

तू दानशीलको अदिति बनाता है।

४ सहस्रसावे प्रतिरन्त आयुः ॥ ३३ ॥

हजारों दान देनेवाले दीर्घायु प्राप्त करते हैं।

अपने स्वार्थके लिये विषयोंका उपभोग करना आयुको कम करनेवाला होता है। सामवेदमें एक मंत्रमें कहा है।

अन्नं अदन्तं अहमन्नमद्मि। (सा. ५९४)

'किसीको न देकर स्वयं ही अन्न खानेवालेको अन्न खुद खा जाता है।' ऋग्वेदके एक मंत्रमें कहा है कि जो स्वयंके लिए अन्न पकाता व खाता है, वह मानो पाप ही खाता है। वह मंत्र इस प्रकार है—

मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत् स तस्य।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी॥

ऋ. १०।११७।६

'(अप्रचेताः) मूर्ख या कंजूस पुरुष व्यर्थ ही अन्न प्राप्त करते हैं, मैं सत्य कहता हूँ, कि कंजूसको अन्न प्राप्त होना अन्नका नाश ही है, जो देवोंको और मित्रोंको अन्न न देता हुआ स्वयं ही खाता है, ऐसा

अकेला ही खानेवाला मानों पाप ही खाता है अर्थात् स्वार्थसे खाया गया अन्न विषरूप ही है। मनुस्मृतिमें भी कहा है—

भुंजते ते त्वघं पापं ये पचन्त्यात्मकारणात्।

'जो स्वयंके लिए ही अन्न पकाता है वह पापका ही उपभोग करता है।'

इस प्रकार स्वार्थवश भोगा हुआ विषय उस मनुष्यके अल्पायुका कारण होता है। अतः दानसे दीर्घायु प्राप्त होती है।

पापभावनासे दूर हों

पापभावनासे भी मनुष्यकी आयु कम हो जाती है। पापभावनासे मन बिगडता है और मनके बिगाडसे इन्द्रियां कुमार्गमें चलना शुरू कर देती हैं, परिणामस्वरूप मनुष्य अल्पायुमें ही मर जाता है, इसलिए वेदमें स्थान स्थान पर प्रार्थना की गई है कि हम पापभावनासे दूर रहें—

१ व्यस्मद्वेषो वितरं व्यंहो॥ ३२॥
हे रुद्र! हमसे द्वेष और पाप दूर कर।

२ सु-पक्षः नः आयूंषि प्रतारिषत्॥ ७॥
उत्तम मार्गसे जानेसे आयु बढती है।

३ देवानां भद्रा सुमतिः नः आयुः प्रतिरतु॥ १९॥
देवोंकी उत्तम बुद्धि हमारी आयु बढावे।

४ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः...व्यशेम देवहितं यदायुः॥२०॥
हम इन्द्रियोंसे उत्तम कर्म करें और देवोंके हितकारी आयुको भोगें।

५ अंहः अस्मत् वि मुंचत नः आयुः प्रतारीः॥ ३७॥
हे प्रभो! हमसे पाप दूर करो और हमारी आयु बढाओ!

ज्ञानसे दीर्घायु

विद्या और तपसे आत्माकी शुद्धि होती है (विद्यातपोभ्यां भूतात्मा— मनु०) और आत्मशक्तिसे आयु बढती है।

१ प्रजापतेरावृतो ब्रह्मणा वर्मणाहं ... सहस्रायुः सुकृतश्चरेयम् ॥ २६७ ॥

प्रजापतिके ज्ञान रूपी कवचसे सुरक्षित हुआ मैं हजार वर्षतक उत्तम कर्म करता रहूं।

२ देव्या धिया तव सन्दृशि, आयुः मा प्रमोषीः ॥ १२५ ॥

अपनी दिव्यबुद्धिसे तेरे निरीक्षणमें रहनेवाले मेरी आयु कम न कर।

३ हे जातवेदः ! अयं तव शरदः शतं जीवाति ॥ १६१ ॥

हे ज्ञान देव ! तेरा बनकर यह सौ वर्षतक जीवित रहे।

यज्ञसे दीर्घायु

प्राचीन कालमें रोगोंको दूर करनेका यज्ञ एक उत्तम साधना था। यज्ञमें रोगनाशक औषधियां डाली जातीं थीं और वे औषधियां सूक्ष्म होकर लोगोंके शरीरमें श्वास द्वारा प्रविष्ट होकर रोगाणुओंको नष्ट करती थी, और इस प्रकार मनुष्य स्वस्थ रहकर दीर्घायु प्राप्त करते थे। वेदमें भी कहा है—

१ यः हविष्कृतिं आहुतिं दाशात् सः विश्वमायुर्व्यश्नवत् ॥ २२ ॥

जो यज्ञमें हवनीय आहुति देता है, वह दीर्घायुवाला होता है।

२ प्रयक्षे दीर्घं आयुः प्रसर्त्राते ॥ ३५ ॥

यज्ञ करनेवालेको दीर्घायु मिलती है।

३ यजथाय विश्वायुः धेहि ॥ २२ ॥

यज्ञ करनेवालेको दीर्घायु दो।

४ यज्ञियासः मृत्योः पदं योपयन्तः द्राघीयः आयुः प्रतरं दधानाः ॥ ६९ ॥

यज्ञ करनेवाले मृत्युके पदको दूर करके लम्बी आयुको और लम्बी बनाते हैं।

५ यज्ञस्य पुरुत्रा दोहः वितत, हे यज्ञ ! विश्वं आयुः अशीय ॥ १२१ ॥

यज्ञ सबकी रक्षा करनेवाला हैं, ये यज्ञ ! मैं दीर्घायु प्राप्त करूं।

दीर्घायु कैसे प्राप्त हो ?

मधुच्छन्दः वैश्वामित्रः । इन्द्रः । गायत्री ।

१ इन्द्रो दीर्घाय चक्षसे आ सूर्यं रोहयद्दिवि ।
वि गोभिरद्रिमैरयत् ॥ ऋ० १।७।३

(इन्द्रः) इन्द्रने (दीर्घाय चक्षसे) दीर्घ काल तक देखनेके लिए (दिवि सूर्यं आरोहयत्) द्युलोकमें सूर्यको ऊपर चढाया और (गोभिः) उसकी किरणोंसे (अद्रिं ऐरयत्) बादलोंको प्रेरित किया ॥ १ ॥

१ दीर्घ काल तक देखना– दीर्घायु प्राप्त करना ।

२ चक्षुके आरोग्य संवर्धनके लिए सूर्य–दर्शन एक उत्तम साधन है । प्रथम एक निमेष देखना और बादमें क्रमशः अभ्यास बढाना चाहिये । " सूर्यश्चक्षुर्भूत्वा अक्षिणी प्राविशत् " (ऐ. उ.) सूर्यका अंश आंखमें है । इसलिए सूर्य दर्शनसे नेत्रका आरोग्य बढता है ।

मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । इन्द्रः । अनुष्टुप् ।

२ एहि स्तोमाँ अभि स्वराभि गृणीह्याऽरुव ।
ब्रह्म च नो वसो सचेन्द्र यज्ञं च वर्धय ॥ ऋ० १।१०।४

हे (वसो इन्द्र) सबको बसानेवाले इन्द्र ! (एहि) आ, (स्तोमान् अभि स्वर) स्तोत्रोंको प्रेरित कर, (अभि गृणीहि) उनको सुन और (अभि रुव) उनकी प्रशंसा कर तथा (ब्रह्म यज्ञं च वर्धय) हमारे ज्ञान तथा जीवनकी वृद्धि कर ॥ २ ॥

१ ब्रह्म यज्ञं च वर्धय– लोग ज्ञान और जीवन यज्ञको बढावें। ज्ञान भौतिक और आध्यात्मिक दो प्रकारका होता है। वे दोनों प्रकारके ज्ञान जब बढते हैं, तब दीर्घायु प्राप्त होती है। आयु बढानेके ये दो साधन हैं।

२ यज्ञ– यह जीवन रूपी यज्ञ है। यह शत सांवत्सरिक यज्ञ है। इसे बढाना चाहिए। अपना जीवन यज्ञ रूप बनाना चाहिये। जीवन यज्ञरूप बनानेसे आयु बढती है।

मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः । इन्द्रः । अनुष्टुप् ।

३ आ तू न इन्द्र कौशिक मन्दसानः सुतं पिब ।
नव्यमायुः प्र सू तिर कृधी सहस्रसामृषिम् ॥ ऋ. १।१०।११

हे कौशिक इन्द्र ! तू (मन्दसानः) प्रसन्न होते हुए (सुतं आ पिब) तैय्यार किए गए सोमको पी तथा (नः नव्यं आयुः प्र सू तिर) हमारी नवीन आयुको दीर्घ कर और (सहस्रसां ऋषिं कृधि) हजारों ऐश्वर्यसे युक्त ऋषि पद मुझे दे ॥ ३ ॥

१ नः नव्यं आयुः प्र सू तिर– हमारी नई आयुको प्रकर्ष रूपसे उत्तम उपायोंके द्वारा दुःखोंसे पार करके अतिदीर्घ करो। आयु प्रतिदिन नवीन प्राप्त होती है। वह तारुण्यकी नवीन आयु मुझे प्राप्त हो रही है ऐसा विचार अपने मनमें स्थिर करके (प्र) प्रकर्षसे (सु) उत्तम आयु बढानेके साधनोंसे (तिर) दुःख सागरसे तैर जाओ। जिससे आयु बढेगी। आयु बढानेका यह साधन है।

मधुच्छन्दः वैश्वामित्रः । इन्द्रः । गायत्री ।

४ सं गोम॑दिन्द्र॒ वाज॑वद॒स्मे पृ॒थु श्रवो॑ बृ॒हत् ।
वि॒श्वायु॑र्धे॒ह्यक्षि॑तम् ॥ ऋ. १।९।७

हे इन्द्र ! (अस्मे गोमत् वाजवत्) हमें गायोंवाले, बल बढानेवाले (बृहत् पृथु अक्षितं श्रवः) बृहत्, विस्तृत, क्षय रहित अन्नको तथा (विश्वायुः) सम्पूर्ण आयुको (सं धेहि) अच्छी प्रकार दे ॥ ४ ॥

१ अस्मे गोमत् वाजवत् बृहत् पृथु अक्षितं श्रवः विश्वायुः सं धेहि– हमें गायोंसे प्राप्त होनेवाले, बल बढानेवाले, क्षय न करनेवाले बहुत अन्न दो जिससे हमारी आयु बढे। गायके दूध, दही, मक्खन, छांछ आदिके सेवनसे आयु बढती है। इसके साथ बल बढानेवाला अन्न खाना चाहिए। शरीरके किसी भागको क्षय न हो ऐसा अन्न लेना चाहिए।

२ विश्व–आयु– पूर्ण आयु एक सौ बीस वर्षोंकी होती है, इस कारण ज्योतिर्गणितका नाम "विंशोत्तरी" गणित है। इस आयुको इससे अधिक बढाना और उसको धारण करना चाहिये।

मेधातिथिः काण्वः । आपः । प्रतिष्ठा ।

५ आपः॑ पृणी॒त भे॑ष॒जं वरू॑थं त॒न्वे॒३॒॑ममम॑ ।
ज्योक् च॒ सूर्यं॑ दृ॒शे ॥ ऋ. १।२३।२१

हे (आपः) जलो ! तुम (मम तन्वे) मेरे शरीरकी पुष्टिके लिए (ज्योक् च सूर्यं दृशे) दीर्घ काल तक सूर्यको देखनेके लिए (वरूथं भेषजं) रोगको हटानेवाली औषधिको (पृणीत) पूर्ण रूपसे दो ॥ ५ ॥

सूर्य किरणोंसे अंगोंकी पुष्टि होती है और देखनेकी शक्ति मिलती है। जलोंमें औषधिके गुण हैं। अतः जलोंका योग्य रीतिसे सेवन करनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है। स्नान करना, कपडे स्वच्छ करना, पानी पीना आदि जलके बहुत उपयोग हैं। जलसे चिकित्सा भी होती है। इससे रोग दूर होते हैं और आयु दीर्घ होती है।

+

मेधातिथिः काण्वः आंगिरसः प्रियमेधश्च । इन्द्रः । गायत्री ।

६ इन्द्र इत् सोमपा एक इन्द्रः सुतपा विश्वायुः ।
अन्तर्देवान् मर्त्यांश्च ॥ ऋ. ८।२।४

(देवान् मर्त्यान् च अन्तः) देवों और मनुष्योंके मध्यमें (एकः इन्द्रः इत् सोमपाः) अकेला इन्द्र ही सोमको पीनेवाला है और (सुतपाः) निचोडे गए सोम रसोंको पीता है, इसलिए वही (विश्व आयुः) सम्पूर्ण आयुका उपयोग करता है ॥ ६ ॥

सोमरसका सेवन करनेसे आयु बढती है। हिमालयके ऊंचे शिखर पर सोमवल्ली उगती है। वह रातके अन्धेरेमें चमकती है। उसके १५ पत्ते आते हैं। उस सोमवल्लीका रस कूटकर निकालते हैं। वह रस अन्धेरेमें चमकता है। उसमें पानी मिलाकर छानते है और उसमें गायका दुध मिलाकर पीते हैं। यह सोमरस आयुको बढानेवाला है।

आजीगर्तिः शुनः शेषः स कृत्रिमो वैश्वामित्रो देवरातः। वरुणः। गायत्री।

७ स नो विश्वाहा सुक्रतुरादित्यः सुपथा करत् ।
प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥ ऋ. १।२५।१२

(सुक्रतुः) उत्तम कर्म करनेवाला (आदित्यः) आदित्य (विश्वाहा) सब दिन (नः) हमें (सुपथा करत्) उत्तम मार्ग पर चलावे, और (नः आयूंषि प्रतारिषत्) हमारे जीवनोंको बढावे ॥ ७ ॥

सूर्य आयुष्य बढाता है। उत्तम मार्गसे जानेसे आयुष्य बढता है।

१ सुपथा नः आयूंषि प्रतारिषत्- उत्तम मार्गसे जानेसे हमारे आयुष्य सुदीर्घ होते हैं।

(सुक्रतुः) उत्तम कर्म करनेवाला अपनी आयु बढाता है। उत्तम कर्म करना और उत्तम मार्गसे जाना ये दो दीर्घायुके साधन हैं।

कण्वो घौरः । मरुतः । गायत्री ।

८ अस्ति हि ष्मा मदाय वः स्मसि ष्मा वयमेषाम् ।
विश्वं चिदायुर्जीवसे ॥ ऋ. १।३७।१५

(वः) तुम लोगोंके (मदाय) आनन्दके लिए (विश्वं चित्) समस्त पदार्थ (अस्ति हि स्म) हैं और (वयं) हम भी (आयुः जीवसे) दीर्घायुके जीवनके लिए (एषां स्मसि स्म) इनका उपयोग करते रहें ॥ ८ ॥

१ वः मदाय विश्वं अस्ति– तुम्हारे आनन्दके लिए सब विश्व है।

२ वयं आयुः जीवसे एषां स्मसि– हम अपने दीर्घ जीवनके लिए इन विश्वके पदार्थोंका उपयोग योग्य रीतिसे करके दीर्घायु प्राप्त करें।

विश्वमें उत्पन्न हुए पदार्थोंका योग्य रीतिसे उपयोग करनेसे दीर्घायु प्राप्त हो सकती है।

प्रगाथो घौरः काण्वः । सोमः । त्रिष्टुप् ।

९ शं नो भव हृद आ पीत इन्दो पितेव सोम सूनवे सुशेवः ।
सखेव सख्ये उरुशंस धीरः प्र ण आयुर्जीवसे सोम तारीः ॥
ऋ. ८।४८।४

हे सोम ! (सूनवे पिता इव सुशेवः) पुत्रके लिए जिस प्रकार पिता सुखदायक होता है, (सख्युः सखा इव) और जिस प्रकार मित्र मित्रके लिए कल्याणकारी होता है, उसी प्रकार (उरुशंसः धीरः) बहुतों द्वारा प्रशंसित धैर्यवाला तू (पीतः) पिया जाने पर (नः हृदि शं भव) हमारे हृदयोंमें सुखकर हो तथा (नः आयुः) हमारी आयुको (जीवसे) जीनेके लिए (प्रतारीः) बढा ॥ ९ ॥

पुत्रके लिए पिता आनंद देता है और मित्र मित्रका आनंद बढाता है। उस तरह सोमरस हमारे अन्तः करणको सुखदायक हो और अन्तः करणको शान्ति सुख मिले। इससे आयु दीर्घ होती है।

हृदि शं नः आयुः प्रतारीः– हृदयकी शान्ति हमारी आयुको बढाती है। हृदयकी अशान्ति आयुको कम करती है।

प्रगाथो घौरः काण्वः । सोमः । त्रिष्टुप् ।

१० इषिरेण ते मनसा सुतस्य भक्षीमहि पित्र्यस्येव रायः ।
सोम राजन् प्र ण आयूंषि तारीरहानीव सूर्यो वासराणि ॥

ऋ. ८।४८।७

(पित्र्यस्य रायः इव) पिताकी सम्पत्तिका जैसे पुत्र उपभोग करता है, उसी प्रकार (ते सुतस्य) तेरे निकाले रसको (इषिरेण मनसा) शक्तियुक्त मनसे (भक्षीमहि) हम पीते हैं, हे (राजन् सोम) चमकनेवाले सोम ! (सूर्यः वासराणि अहानि) जिस प्रकार सूर्य सबके निवासके हेतु दिनोंको बढाता है, उसी प्रकार (नः आयूंषि प्र तारीः) हमारी आयुओंको बढा ॥ १० ॥

हे सोम ! नः आयूंषि प्रतारीः– हे सोम ! हमारी आयुको बढा । सोम रस आयुष्य बढाता है ।

पिताका धन जैसे पुत्रको जन्मके अधिकारसे मिलता है, वैसे सोमका आयु बढानेका गुण हमारी आयु बढावे । सूर्य जैसे दिनमें प्रकाशको बढाता है वैसे ही सूर्य हमारी आयु बढावे ।

प्रगाथो घोरः काण्वः । सोमः । त्रिष्टुप् ।

११ ऋदूदरेण सख्या सचेय यो मा न रिष्येद्धर्यश्व पीतः ।
अयं यः सोमो न्यधायि यस्मे तस्मा इन्द्रं प्रतिरमेम्यायुः ॥

ऋ. ८।४८।१०

(उदरेण ऋत् उ) पेटके लिए सुखकारक सोमकी (सख्या) मित्रताको मैं (सचेय) प्राप्त करता हूँ, हे (हर्यश्व) लाल घोडोंवाले इन्द्र ! (यः) जो यह सोम है, वह (पीतः) पिया जानेपर (नः मा रिष्येत्) हमें दुःखी न करे । (यः अयं सोमः) जो यह सोम (अस्मे निधायि) हममें स्थापित किया जाता है, (तस्मै) उसके लिए मैं (आयुः प्रतिरं) आयुको दीर्घ करता हूँ, और (इन्द्रं एमि) इन्द्रको प्राप्त करता हूँ ॥ ११ ॥

१ उदरेण ऋत् सख्या सचेय— जो पेटके लिये हितकारक है वही मैं स्वीकारता हूं ।

२ पीतः मा नः रिष्येत्— जो पीनेपर हमारा दुःख न बढावे, उसको मैं स्वीकार करता हूं ।

३ यः अस्मे निधायि तस्मै आयुः प्रतिर— जो हमारे अन्दर जाता है उससे हमारी आयु बढे ।

(१) पेटके लिए हितकारक हो, (२) खाने या पीनेपर पेटमें दोष उत्पन्न न करे । वही हम पेटमें डालें जिससे हमारी आयु बढे ।

प्रगाथो घौरः काण्वः । सोमः । त्रिष्टुप् ।

१२ अप त्या अस्थुरनिरा अमीवा निरत्रसन् तमिषीचीरमैषुः।
आ सोमो अस्माँ अरुहद्विहाया अगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः॥
ऋ. ८।४८।११

जो हमें (निः अत्रसन् अमैषुः) कष्ट देते और डर दिखाते हैं । (त्याः तमिषीचीः) वे अन्धकारमें रहनेवाले तथा (अनिराः अमीवाः) सर्वदा रहनेवाले रोग (अप अस्थुः) दूर हों, (सोमः) सोम (विहाय) बहुत दूरसे (अस्मान् आरुहत्) हमारे पास आया है और हमने भी (यत्र) जिस सोमसे (आयुः प्रतिरन्तः) आयु बढाते हैं, उसे (अगन्म) प्राप्त किया है ॥ १२ ॥

'अमी-व' पेटके अपचनसे होनेवाला आम बनानेवाला रोग 'अमी-व' कहलाता है । पेटमें आम अर्थात् अपचन न हो । अन्धकारमें भी हमें रहना न पडे । पेटकी पचन शक्ति अच्छी स्थितिमें रहे और हमें विपुल सूर्य प्रकाश मिले । इससे आयु दीर्घ होती है । सोमरस पीनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है क्योंकि इससे पेटमें आम नहीं होता और यह सोमरस स्वयं तेजस्वी है ।

प्रस्कण्वः काण्वः । अग्निः । प्रगाथः = विषमा बृहती–समा सतो बृहती ।

१३ सुशंसो बोधि गृणते यविष्ठ्य मधुजिह्वः स्वाहुतः ।
प्रस्कण्वस्य प्रतिरन्नायुर्जीवसे नमस्या दैव्यं जनम् ॥

ऋ. १।४४।६

हे (यविष्ठ्य) अत्यन्त तरुण अग्ने ! (मधुजिह्वः) मधुर भाषण करनेवाला (सु–आहुतः) अच्छी तरह हवन किया गया तू (गृणते सुशंसः बोधि) स्तुति करनेवाले मुझसे प्रसन्न हो । (जीवसे) दीर्घजीवन जीनेके लिए (प्रस्कण्वस्य आयुः प्रतिरत्) प्रस्कण्वकी आयुको बढा, ऐसे तू (दैव्य जनं) दिव्य मनुष्यका (नमस्य) सन्मान कर ॥ १३ ॥

सु–आहुतः अग्निः— जिसमें उत्तम हवनीय पदार्थोंकी आहुतियां डाली गई हैं, ऐसा अग्नि, यज्ञ करनेवाले पर प्रसन्न होता है और 'जीवसे आयुः प्रतिरत्' दीर्घ जीवनके लिये आयु बढाता है। जो ऐसा हवन करता है वह दिव्यजन नमस्कारके लिए योग्य है। योग्य पदार्थोंके हवनसे याजककी दीर्घायु होती है और उसके साथवालोंको भी लाभ प्राप्त होता है।

प्रस्कण्वः काण्वः । सूर्यः । अनुष्टुप् ।

१४ उद्यन्नद्य मित्रमह आरोहन्नुत्तरां दिवम् ।
हृद्रोगं मम सूर्य हरिमाणं च नाशय ॥ ऋ. १।५०।११

(मित्र–मह सूर्य) हे महान् ज्योतिवाले सूर्य ! (अद्य) आज (उद्यन्) उदय होते हुए और (उत्तरां दिवं आरोहन्) ऊंचे द्युलोक पर चढते हुए (मम हृद्रोगं हरिमाणं च नाशय) मेरे हृदयके रोगको तथा शरीरको पीले करनेवाले रोगको नष्ट कर ॥ १४ ॥

'हृदयका रोग और कामिला– पीलक– रोग सूर्य किरणोंके स्नानसे दूर होते हैं। सूर्य किरणोंमें इन रोगोंको हटानेकी शक्ति है। ये रोगी प्रथम थोडा समय सूर्य किरणोंमें बैठें। पश्चात् अधिक देर तक बैठें। शरीर नंगा रहे और सब शरीर सूर्यके किरणोंके संपर्कमें आजाय।

'सूर्य किरण चिकित्सा' नामक एक उत्तम शास्त्र इस समय तैयार हुआ है। उससे लाभ लेना उचित है। दीर्घायु चाहनेवाले उस पुस्तकसे लाभ ले सकते हैं।

नोधा गौतमः। मरुतः। जगती।

१५ चर्कृत्यं मरुतः पृत्सु दुष्टरं द्युमन्तं शुष्मं मघवत्सु धत्तन।
धनस्पृतमुक्थ्यं विश्वचर्षणिं तोकं पुष्येम तनयं शतं हिमाः॥

ऋ. १।६४।१४

हे मरुतो! तुम (चर्कृत्यं) कर्ममें कुशल (पृत्सु दुस्तरं) युद्धोंमें पराजित न होनेवाले (द्युमन्तं शुष्मं) तेजस्वी और बलशाली (धन स्पृतं) धनसे पूर्ण (विश्वचर्षणि) सब लोगोंका हित करनेवाले तथा (तोकं तनयं) पुत्र पौत्रोंवाले मनुष्यको (मघवत्सु धत्तन) ऐश्वर्यवानोंमें रखो और हम भी उस (उक्थ्यं) प्रशंसनीय पुरुषको (शतं-हिमाः) सौ वर्ष तक (पुष्येम) पुष्ट करें॥ १५॥

मनुष्य कर्म करनेकी कुशलता प्राप्त करें, युद्धोंमें हार न होने योग्य शौर्य प्राप्त करें, तेजस्वी और ओजस्वी हों, धनवान् हों, सार्वजनिक कल्याण करनेवाले हों, पुत्र पौत्रवाले हों, धनवानोंके साथ रहें और पुष्ट होते हुए सौ वर्षकी आयु प्राप्त करें।

मनुष्यके दीर्घ जीवनका यह उद्देश्य है।

पराशरः शाक्त्यः। अग्निः। त्रिष्टुप्।

१६ वि पृक्षो अग्ने मघवानो अश्युर्वि सूरयो ददतो विश्वमायुः।
सनेम वाजं समिथेष्वर्यो भागं देवेषु श्रवसे दधानाः॥

ऋ. १।७३।५

हे (अग्ने) अग्ने! (सूरयः मघवानः ददतः) विद्वान् तथा ऐश्वर्यवाले लोग दान देते हुए (पृक्षः विश्वं आयुः) अन्न तथा सम्पूर्ण आयुका (वि अश्युः) उपभोग करें। तथा (श्रवसे) अन्न अथवा यशकी प्राप्तिके लिए (देवेषु अर्यं भागं दधानाः) देवोंको उत्तम भाग देते

हुए हम भी (समिथेषु) युद्धों वा यज्ञोंमें (वाजं सनेम) बल अथवा अन्नको प्राप्त करें ॥ १६ ॥

ज्ञानी तथा धनवान् लोग ज्ञानका तथा धनका दान करते रहें और दीर्घ आयुको प्राप्त करें। ज्ञानी लोग ज्ञानका दान करें और धनी धनका दान करें। इससे जनताका कल्याण होगा और इन दान करनेवालोंको मानसिक समाधान होनेसे दीर्घायु प्राप्त होगी। दान करनेसे मनका जो समाधान होता है, उससे आयु बढनेमें सहायता होती है।

पराशरः शाक्त्यः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

१७ अर्वद्भिरग्ने अर्वतो नृभिर्नॄन् वीरैर्वीरान् वनुयामा त्वोताः।
ईशानासः पितृवित्तस्य रायो वि सूरयः शतहिमा नो अश्युः॥
ऋ. १।७३।९

हे (अग्ने) अग्ने ! (त्वा ऊताः) तेरे द्वारा रक्षित होकर हम युद्धोंमें (अर्वद्भिः अर्वतः) घोडोंसे घोडोंको (नृभिः नॄन्) मनुष्योंसे मनुष्यों-को और (वीरैः वीरान्) वीरोंसे वीरोंको भिडाकर (वनुयाम) विजय प्राप्त करें, तथा (नः सूरयः) हमारे पुत्र विद्वान् होकर (पितृ-वित्तस्य रायः) पिताके ऐश्वर्यके (ईशानासः) स्वामी होकर (शतहिमाः) सौ वर्षोंका (अश्युः) उपभोग करें ॥ १७ ॥

जगत्के अन्दर जो स्पर्धा है, उस स्पर्धामें हम विजयी हों, तथा ज्ञानी, शूर और धनी बनकर, ऐश्वर्यके अधिकारी होकर, सौ वर्षकी आयु प्राप्त करके आनन्दमय अवस्थामें हम रहें। पिताके ऐश्वर्यका योग्य भाग प्राप्त करके उसका उपभोग पूर्ण आयु होने तक करते रहें।

गोतमो राहूगणः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् (प्रागाथः)

१८ को अद्य युंक्ते धुरि गा ऋतस्य शिमीवतो भामिनो दुर्हृणायून्।
आसन्निषून् हृत्स्वसो मयोभून्
य एषां भृत्यामृणधत्स जीवात् ॥ ऋ. १।८४।१६

(अद्य) आज (कः) कौन (शिमीवतः) शूरवीरतासे युक्त (भामिनः) तेजस्वी (दुर्हृणायून्) अतिशय क्रोधी वीर (इषून्

आसन्) बाणोंको फेंक कर शत्रुओंके (हृत्सु असः) हृदयों पर मारनेवाले तथा (मयोभून्) कल्याणकारी वीरोंमें (गाः) बैलोंको अपनें (ऋतस्य धुरि युंक्ते) रथकी धुरामें जोडता हैं ? (यः एषां भृत्यां ऋणधत्) जो इन बैलोंकी सेवा करता है (सः जीवातु) वह जीवित रहता है ॥ १८ ॥

जो गायों और बैलोंकी सेवा करता है वह दीर्घजीवी होता है। शूरवीरोंमें कौन ऐसा वीर है कि जो इनकी सेवा करता है ? बैल खेती करके अन्न उत्पन्न करता है। इसके उत्पन्न किये अन्नको खाकर हम मनुष्य पुष्ट और दीर्घजीवी होते हैं। इसलिए बैल संसेव्य हैं।

गोतमो राहूगणः। विश्वेदेवाः। जगती।

१९ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां
देवानां रातिरभि नो निवर्तताम् ।
देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं
देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥ ऋ. १।८९।२

(देवानां भद्रा सुमतिः) देवोंकी उत्तम कल्याण करनेवाली बुद्धि (ऋजूयतां) हमारे अनुकूल हो, (देवानां रातिः) देवोंके दान (नः अभि निवर्तताम्) हमारे चारों ओर रहें, (वयं) हम (देवानां सख्यं उपसेदिम) देवोंकी मित्रताको प्राप्त हों, तथा (देवाः) देवगण (जीवसे) जीनेके लिए (नः आयुः प्रतिरन्तु) हमारी आयुको बढावें ॥ १९ ॥

अग्नि आदि देव हरएक प्रकारसे हमारी सहायता कर रहे हैं। उनकी सहायता प्राप्त करके हम यहां सुखसे रहते हैं। इन देवोंमेंसे प्रत्येक देवताके साथ हमारा मित्रताका संबंध रहे, जिससे हमारी आयु बढे और हम आनन्दसे दीर्घकाल तक जीवित रह सकें। अग्नि, जल, सूर्य आदि देवोंके साथ हम विरोध करेंगे, तो हमारी आयु कम होगी। इस कारण इन देवोंसे हम मित्रता बनाकर ही आनंदसे रह सकते हैं।

गोतमो राहूगणः । देवाः । त्रिष्टुप् ।

२० भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरंगैस्तुष्टुवांसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥
ऋ. १।८९।८

हे (यजत्राः देवाः) पूजनीय देवो ! हम (कर्णेभिः भद्रं शृणुयाम) कानोंसे कल्याणकारी भाषण सुनें, (अक्षभिः भद्रं पश्येम) आंखोंसे कल्याणकारी दृश्य ही देखें, तथा (तुष्टुवांसः) देवोंकी स्तुति करनेवाले हम लोग (स्थिरैः अंगैः तनूभिः) स्थिर और दृढ अंगवाले शरीरोंसे (देव-हितं यत् आयुः) देवोंके हित करनेवाली आयुको (वि अशेम) प्राप्त करें ॥ २० ॥

कानोंसे कल्याणकारी भाषण सुनें, आंखोंसे कल्याणकारक दृश्य देखें। देवोंकी स्तुति करते हुए हम अपने सुदृढ शरीरके साथ अपनी सम्पूर्ण आयु तक ज्ञानियोंका हित करते रहें, और इस तरह दीर्घ आयु प्राप्त करें।

कानोंसे बुरा भाषण कभी न सुनें, आंखोंसे खराब दृश्य कभी न देखें, कभी दुष्टोंकी प्रशंसा न करें, और अपने शरीरको सुदृढ रखकर जिस तरह दीर्घायु प्राप्त हो वैसा प्रयत्न करें।

गोतमो राहूगणः । देवाः । त्रिष्टुप् ।

२१ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् ।
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ॥
ऋ. १।८९।९

(अन्ति देवाः) हे समर्थ देवो ! तुमने आयुकी मर्यादा (शतं इत नु शरदः) सौ वर्षकी की है बादमें तुम (नः तनूनां जरसं चक्राः) हमारे शरीरोंको बूढा कर देते हो (यत्र) तब (पुत्रासः) पुत्र (पितरः भवन्ति) पिता हो जाते हैं इसलिए (नः आयुः) हमारी आयुको (मध्या) बीचमें ही (मा रीरिषत) समाप्त मत करो ॥ २१ ॥

सौ वर्ष तक कार्य करनेकी आयु है इसके पश्चात् मनुष्य बूढा हो जाता है। पुत्र जब पिता बन जायें अर्थात् जब पुत्रके पुत्र और पौत्र हों,

तब तक हम जीवित रहें। बीचमें ही अर्थात् पुत्रोंके पुत्र, पौत्र होनेके पूर्व ही हमारी आयु समाप्त न हो। हम कमसे कम सौ वर्ष तक जीवित और कार्य क्षम रहें।

गोतमो राहूगणः। अग्निषोमौ। अनुष्टुप्।

२२ अग्नीषोमा य आहुतिं यो वां दाशाद्धविष्कृतिम्।
स प्रजया सुवीर्यं विश्वमायुर्व्यश्नवत्॥ ऋ. १।९३।३

हे (अग्नीषोमा) अग्ने तथा सोम! (यः वां) जो तुम दोनोंको (हविष्कृतिं आहुतिं) हविष्यान्नकी आहूतिको (दाशात्) देवे, (सः) वह (प्रजया) उत्तम सन्तानसे युक्त होकर (सुवीर्यं विश्वं आयुः) उत्तम बलसे युक्त सम्पूर्ण आयुको (वि अश्नवत्) प्राप्त करे॥ २२॥

जो यज्ञ करता है, वह सुप्रजासे युक्त होकर तथा उत्तम बलसे सम्पन्न होकर सम्पूर्ण आयुको प्राप्त कर सकता है। बलसे युक्त पूर्ण आयु प्राप्त करनी चाहिये। बलहीन आयु नहीं चाहिये। जब तक आयु हो तब तक शरीरमें बल रहे और कार्य करनेकी शक्ति भी रहे।

यज्ञमें उत्तम हविर्द्रव्य आहुतिसे अर्पण किया जाता है, उस हवनसे उत्तम वीर्य प्राप्त होता है और दीर्घ आयु भी मिलती है।

वीर्यवर्धक हविर्द्रव्य कौनसे हैं इसका संशोधन करके ठीक तरहसे पता लगाना चाहिये। और वैसे हविर्द्रव्य यज्ञमें बर्तने चाहिये। जिससे दीर्घायु प्राप्त हो सकती है।

कुत्स आंगिरसः। रुद्रः। जगती।

२३ मा नस्तोके तनये मा न आयौ
मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः।
वीरान् मा नो रुद्र भामितो वधीर्हविष्मन्तः
सदमित् त्वा हवामहे॥ ऋ. १।११४।८

हे रुद्र! (नः तोके तनये मा रीरिषः) हमारे पुत्र पौत्रोंको मत मार, (नः आयौ मा) हमारी आयुको मत घटा, (नः गोषु मा,

नः अश्वेषु मा) हमारी गाय और घोडोंको न मार, हे रुद्र ! (मामितः) क्रुद्ध होकर (नः वीरान् मा वधीः) हमारे वीरोंका-पुत्र पौत्रोंका-वध मत कर। हम (हविष्मन्तः) हविसे युक्त होकर (त्वा) तुझे (सदं इत् हवामहे) हमेशा बुलाते हैं तेरे लिए हवन करते हैं ॥ २३ ॥

उत्तम हविसे जो यज्ञ करते हैं, वे स्वयं दीर्घ जीवन प्राप्त करते हैं और उनके पुत्र पौत्र और संबंधी जन भी लंबी आयु प्राप्त करते हैं। इसलिये उत्तम हविसे यज्ञ करना अत्यंत लाभदायक है।

कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः। अश्विनौ। त्रिष्टुप्।

२४ जुजुरुषो नासत्योत वव्रिं प्रामुंचतं द्रापिमिव च्यवानात्।
प्रातिरतं जहितस्यायुः दस्रादित्पतिमकृणुतं कनीनाम् ॥
ऋ. १।११६।१०

हे (नासत्या) अश्विदेवो ! तुमने (जुजुरुषः च्यवानात्) अत्यन्त वृद्ध च्यवन नामक ज्ञानी पुरुषके शरीरसे (वव्रिं) चमडी (द्रापिं इव) कवचके समान (प्र अमुंचतं) अलग कर दी, (दस्रा) हे शत्रुका नाश करनेवाले अश्विदेवो ! और (जहितस्य आयुः प्रतिरतं) इस बहिष्कृत पुरुषकी आयुको बढाया (आत् इत्) उसके बाद ही उसको (कनीनां) स्त्रियोंका (पतिं अकृणुतं) पति बना दिया ॥ २४ ॥

अश्विदेवोंने च्यवन ऋषिके शरीरसे कवच उतारनेके समान चमडी उतार दी और उसे दीर्घायु बनाया। स्त्रियोंका पति होने लायक उसे तरुण बनाया।

वृद्धको तरुण बनानेका उपाय यह है कि उस वृद्धके शरीर परसे पुरानी चमडी उतार कर, नई चमडी औषध प्रयोगसे लाना। इससे वृद्ध तरुण होता है।

कक्षीवान् दैर्घतमसः औशिजः । अश्विनौ । त्रिष्टुप् ।

२५ प्र वां दंसांस्यश्विनाववोचमस्य पतिः स्यां सुगवः सुवीरः ।
उत पश्यन्नश्नुवन्दीर्घमायुरस्तमिवेज्जरिमाणं जगम्याम् ॥

ऋ. १।११६।२५

हे (अश्विनौ) अश्विनौ ! मैंने (वां दंसांसि अवोचम्) तुम्हारे कर्मोंका वर्णन किया है, इसलिए मैं (सु-गवः सु-वीरः) उत्तम गाय और उत्तम वीर प्रजाओंवाला होकर (अस्य पतिः स्यां) इस राष्ट्रका स्वामी होऊं, (उत) और (पश्यन्) देखकर कार्य करता हुआ, (दीर्घं आयुः अश्नुवन्) लम्बी आयुको प्राप्त करता हुआ, (अस्तं इव इत्) घरके समान ही (जरिमाणं जगम्यां) बुढापेको प्राप्त होऊं ॥ २५ ॥

उत्तम गौवें घरमें हों । उत्तम संतति हों । अधिकार हाथमें हो । ऐसा मनुष्य (पश्यन्) देखकर, विचार पूर्वक, प्रत्येक कार्य करे । और दीर्घ आयु प्राप्त करे और दीर्घ आयुका उपभोग लेकर पश्चात् वह वृद्ध हो । अकालमें वृद्ध बनना योग्य नहीं ।

कक्षीवान् दैर्घतमसः औशिजः । स्वनयस्य दानस्तुतिः । त्रिष्टुप् ।

२६ प्रातरित्वा रत्नं प्रातरित्वा दधाति
तं चिकित्वान् प्रति गृह्या नि धत्ते ।
तेन प्रजां वर्धयमान आयू रायस्पोषेण सचते सुवीरः ॥

ऋ. १।१२५।१

(प्रातः इत्वा) प्रातः काल आकर वह (रत्नं) रत्नोंको (प्रातः दधाति) प्रातः काल ही देता है, (तं) उस धनकी वह (चिकित्वान्) देखभाल करके तथा (प्रति गृह्य) उसे स्वीकार करके अपने पास (नि धत्ते) रख लेता है, (तेन) उस कारण वह (सु-वीरः) उत्तम वीर युक्त होकर (प्रजां आयुः वर्धयमानः) प्रजा और आयुको बढाता हुआ (रायस्पोषेण सचते) धन और पुष्टिसे संयुक्त होता है ॥ २६ ॥

प्रातःकाल उठकर धन प्राप्त करनेका उद्योग करना चाहियें। जो धन मिले वह लेकर उसकी वेखभाल करके उसको ठीक स्थानपर रखना चाहिये। उत्तम वीर पुत्र पौत्रोंसे युक्त होकर, आयुको बढाकर, धन धान्य और पोषण प्राप्त करना चाहिये। इस प्रकार मनुष्य ऐश्वर्य संपन्न होकर दीर्घ आयु प्राप्त करके उत्तम सुख और शान्ति प्राप्त कर सकता है।

कक्षीवान् दैर्घतमस औशिजः। स्वनयस्य दानस्तुतिः। त्रिष्टुप्।

२७ दक्षिणावतामिदिमानि चित्रा दक्षिणावतां दिवि सूर्यासः।
दक्षिणावन्तो अमृतं भजन्ते दक्षिणावन्तः प्र तिरन्त आयुः॥
ऋ. १।१२५।६

(दक्षिणावतां इत् इमानि चित्रा) दान देनेवालोंके लिए ही ये विलक्षण सम्पत्तियां हैं, (दक्षिणावतां दिवि सूर्यासः) दान-शीलोंके लिए ही द्युलोकमें सूर्य चमकते हैं, (दक्षिणावन्तः अमृतं भजन्ते) दान देनेवाले ही अमरता प्राप्त करते हैं, और (दक्षिणावन्तः आयुः प्रतिरन्ते) दानशील ही आयु बढाते हैं॥ २७॥

दान देनेवाले अमरत्व प्राप्त कर सकते हैं। उनके दानकी चारों ओर प्रशंसा होती है और उनका नाम उस दानके कारण सर्वत्र प्रशंसनीय समझा जाता है। इससे उनको अन्तःकरणका समाधान मिलता है, इससे उनकी आयु बडी दीर्घ होती है। अर्थात् दान आयुको बढानेवाला है।

कक्षीवान् दैर्घतमसः। पवमानः सोमः। त्रिष्टुप्।

२८ अध श्वेतं कलशं गोभिरक्तं कार्ष्मन्ना वाज्यक्रमीत् ससवान्।
आ हिन्विरे मनसा देवयन्तः
कक्षीवते शतहिमाय गोनाम्॥ ऋ. ९।७४।८

(अध) इसके बाद (गोभिः अक्तं) गायके दूधसे युक्त (श्वेतं कलशं) श्वेत कलशमें (ससवान्) पिया जानेवाला सोम (वाजी कार्ष्मन् न) जिस प्रकार घोडा युद्धमें दौडता है उसी प्रकार (अक्रमीत्)

दौडता है, (देवयन्तः मनसा आ हिन्विरे) देवत्व प्राप्तिकी इच्छा करनेवाले लोग मन लगाकर इसकी स्तुति करते हैं, यह सोम (कक्षीवते) कक्षीवान् ऋषिको (शतं हिमाय) सौ वर्षतक जीनेके लिए (गोनां) गायोंको देता है ॥ २८ ॥

१ शतं हिमाय गोनां— सौ वर्ष जीनेके लिये गौओंका दान दिया। जिसको गौवें दानमें मिलती हैं वह गौओंका दूध, दही, मक्खन, घी आदि विपुल प्रमाणमें प्राप्त करता है, विपुल प्रमाणमें उन पदार्थोंका सेवन करता है और दीर्घ आयुष्य प्राप्त करता है।

परुच्छेपो दैवोदासिः। इन्द्रः। अत्यष्टिः।

२९ सं यज्जनान् क्रतुभिः शूर ईक्षयद्धने हिते
तरुषन्त श्रवस्यवः प्र यक्षन्त श्रवस्यवः।
तस्मा आयुः प्रजावदिद् बाधे अर्चन्त्योजसा।
इन्द्रं ओक्यं दिधिषन्त धीतयो देवाँ अच्छा न धीतयः।

ऋ. १।१३२।५

(यत्) जब (शूरः) शूरवीर इन्द्र (क्रतुभिः) अपने बुद्धिसे (जनान् सं ईक्षयत्) मनुष्योंको अच्छी तरह देखता है, तब (श्रवस्यवः) अन्नकी इच्छा करनेवाले (धने हिते) संग्रामके शुरु हो जानेपर शत्रुओंको (तरुषन्त) मारते हैं, (श्रवस्यवः) अन्नके इच्छुक (प्र यक्षन्तः) यज्ञ करते हैं। तथा (बाधे) संकट आनेपर (आयुः प्रजावत्) दीर्घायु और प्रजावाले लोग (ओजसा) अपनी शक्तिके अनुसार (तस्मै इत् अर्चन्ति) उसी इन्द्रकी पूजा करते हैं, (दिधिषन्तः धीतयः) धनको धारण करनेकी इच्छावाले बुद्धिमान् (इन्द्र ओक्यं) इन्द्रके घरको जाते हैं, (धीतयः) बुद्धिमान् भक्त (देवान् अच्छा न) देवलोकको सीधे जाते हैं ॥ २९ ॥

दीर्घ आयु और सुप्रजाको प्राप्त करके वे उस ईश्वरकी अर्चना करते हैं और उस ईश्वरके स्थानको प्राप्त करते हैं, और इस तरह मानव जन्म सार्थक बनाते हैं।

दीर्घतमा औचथ्यः। अश्विनौ। जगती।

३० आ न ऊर्जं वहत अश्विना युवं
मधुमत्या नः कशया मिमिक्षतम्।
प्रायुस्तारिष्टं नी रपांसि मृक्षतं
सेधतं द्वेषो भवतं सचाभुवा॥ ऋ. १।१५७।४

हे अश्विदेवो! (नः ऊर्जं वहतम्) हमें बल प्राप्त कराओं, (युवं) तुम दोनों (नः मधुमत्या कशया) मीठी चाबुकसे (मिमिक्षतम्) प्रेरणा दो, तथा (आयुः प्रतारिष्टं) आयुको बढाओ और (रपांसि मृक्षतं) पापोंको दूर करो, तथा (सचा-भुवा भवतं) साथ साथ रहनेवाले तुम दोनों (द्वेषः सेधतं) हमसे द्वेषको दूर करो॥ ३०॥

मनुष्योंको बल प्राप्त करना चाहिए, जीवन मिठाससे युक्त करना चाहिए। पापोंसे दूर रहना चाहिए और आयुष्य बढाना चाहिए। बलके साथ मीठा जीवन, निष्पापवृत्ति, और दीर्घ जीवन होना चाहिए। बल न हो, जीवनमें कटुता हो, पापी आचरण हो तो प्रथम तो दीर्घ जीवन प्राप्त ही नहीं होगा, और होगा भी तो जीवन सुखी नहीं हो सकता। इस कारण बल प्राप्त करना चाहिये, अपना जीवन आनंदी बनाना चाहिये, पापी आचरण नहीं करना चाहिये और दीर्घ आयु प्राप्त करनी चाहिये।

गृत्समदः (आंगिरसः शौनहोत्रः पश्चात्) भार्गवः शौनकः। अग्निः। जगती।

३१ त्वमग्न अदितिर्देव दाशुषे त्वं होत्रा भारती वर्धसे गिरा।
त्वमिळा शतहिमासि दक्षसे त्वं वृत्रहा वसुपते सरस्वती॥
ऋ. २।१।११

हे अग्नि देव! (त्वं दाशुषे अदितिः) तू दानशीलको अविनाशी करता है, (त्वं होत्रा भारती) तू पास बुलानेके योग्य पोषण कर-

नेवाला है, तू (गिरा वर्धसे) वक्तृत्वसे प्रसिद्ध होता है (त्वं शत-हिमा इळा असि) तू सौ वर्षकी आयु देनेवाला अन्न है, (त्वं दक्षसे) तू सामर्थ्य देनेवाला है, हे (वसुपते) धनके स्वामिन् ! तू (वृत्रहा सरस्वती) वृत्रको मारनेवाला शूरवीर तथा विद्या है ॥ ३१ ॥

१ अ-दिति— अविनाशी; २ अदिति— अन्न, गौ, ३ भारती— भरण पोषण करनेवाली, ४ इळा-इडा-इला— वाणी, भूमी, दान, उत्साह-वर्धक पेय, अन्न, गौ, दूध। ५ सरस्वती— विद्या। विद्या प्राप्त करके, ज्ञानी बनकर, भरण पोषण अच्छी तरह करना, बल प्राप्त करना, धनका स्वामी बनना, शत्रुको दूर करना और दीर्घ आयु प्राप्त करना।

गृत्समदः (आंगिरसः शौनहोत्रः पश्चात्) भार्गवः शौनकः। रुद्रः। त्रिष्टुप्।

३२ त्वादत्तेभिः रुद्र शंतमेभिः शतं हिमा अशीय भेषजेभिः।
व्य१स्मद् द्वेषो वितरं व्यंहो व्यमीवाश्चातयस्वा विषूचीः ॥

ऋ. २।३३।२

हे रुद्र ! (त्वा दत्तेभिः) तेरे दिए गए (शंतमेभिः) अत्यन्त कल्याण कारक (भेषजेभिः) औषधियोंके द्वारा (शतं हिमाः अशीय) सौ वर्षोंका उपभोग करूं। (अस्मद्) हमसे (द्वेषः अंहः वि वि वितरं) द्वेष और पापको दूर कर तथा (विषूचीः अमीवाः) समस्त शरीरमें फैलनेवाले रोगोंको (विचातयस्व) बिलकुल नष्ट कर ॥ ३२ ॥

औषध प्रयोग द्वारा द्वेष भाव, पापकी इच्छा और आम विकारको पूर्ण रीतिसे दूर करके सौ वर्षकी दीर्घ आयु प्राप्त करनी चाहिये। बुद्धि और मनकी शुद्धता द्वेष और पाप भाव दूर करनेसे होती है, शरीरकी शुद्धता आम विकार दूर करके की जाती है। इस तरह शरीर, मन और बुद्धि पवित्र करके दीर्घ आयु प्राप्त हो सकती है।

जब तक शरीरमें आम है, मनमें द्वेष भाव है और बुद्धिमें पाप विचार है तब तक दीर्घ आयु नहीं हो सकती।

+

गृत्समदः (आंगिरसः शौनहोत्रः पश्चात्) भार्गवः शौनकः । सरस्वती । अनुष्टुप् ।

३३ त्वे विश्वा सरस्वति श्रितायूंषि देव्याम् ।
शुनहोत्रेषु मत्स्व प्रजां देवि दिदिड्ढि नः ॥ ऋ. २।४१।१७

हे सरस्वति ! (त्वे देव्यां) तुझ देवीमें (विश्वा आयूंषि श्रिता) सब आयु आश्रित हैं। तू (शुनहोत्रेषु मत्स्व) शुनहोत्रके यज्ञोंमें आनन्दित हो, हे देवि ! (नः प्रजां दिदिड्ढि) तू हमें सन्तान दे ॥ ३३ ॥

सरस्वतीमें दीर्घ आयु प्राप्त करनेके सब साधन हैं। सरस्वती विद्यादेवी –ज्ञानदेवी है। इस विद्यादेवीकी सहायतासे मनुष्यके समझमें आ सकता है कि इस भूमि पर मनुष्य किस तरह आचरण करे और बल तथा दीर्घ आयु किस रीतिसे अपनेमें बढावे और किस रीतिसे दीर्घ आयुका उपभोग सुखसे करे।

कूर्मो गार्त्समदो गृत्समदो वा । आदित्याः । त्रिष्टुप् ।

३४ त्वं विश्वेषां वरुणासि राजा ये च देवा असुर ये च मर्ताः ।
शतं नो रास्व शरदो विचक्षेऽश्यामायूंषि सुधितानि पूर्वा ॥
ऋ. २।२७।१०

हे वरुण ! हे (असुर) बलवान् ! तू (ये देवाः ये च मर्ताः) जितने देव और मनुष्य हैं उन (विश्वेषां) सभीका (राजा असि) राजा है, तू हमें (विचक्षे) देखनेके लिए (शतं शरदः रास्व) सौ वर्ष प्रदान कर, हम (सुधितानि) सुखसे युक्त (पूर्वा आयूंषि) पूर्ण आयुको (अश्याम) भोगें ॥ ३४ ॥

हे असुर वरुण ! तू सबका शासक है। इसलिये हमें पूर्ण रूपसे सौ वर्षकी दीर्घ आयु दे। यहां वह मांगनेवाला बीस पचीस वर्षका तरुण होगा। इसलिये इस आयुमें वह इच्छा करता है कि मैं पूर्ण सौ वर्ष जीवित रहूं। इसलिये १२० वर्षोंकी आयु मनुष्यको प्राप्त होनी चाहिये। मनुष्य-की ऐसी इच्छा २० वर्षके पश्चात् होती है। इसके पश्चात् वह सौ वर्षकी आयु भोगे।

गाथिनो विश्वामित्रः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

३५ प्र य आरुः शितिपृष्ठस्य धासेरा मातरा विविशुः सप्तवाणीः।
परिक्षिता पितरा सं चरेते प्र सर्स्राते दीर्घमायुः प्रयक्षे ॥

ऋ. ३।७।१

(शितिपृष्ठस्य धासेः) नीली पीठवाले सबको धारण करनेवाले अग्निकी (ये आरुः) जो किरणें या ज्वालायें निकलती हैं, वे (मातरा) द्युलोक और पृथ्वीलोकमें तथा (सप्तवाणीः) सात प्रकारकी वाणियोंमें– सात छंदोंके मंत्रोंमें– (आ विविशुः) प्रविष्ट होती हैं, (पितरा) पालन करनेवाले दोनों द्युलोक और पृथिवीलोक (परिक्षिता) चारों ओर देखते हुए (सं चरेते) सर्वत्र संचार करते हैं, तथा (प्रयक्षे) यज्ञ करनेवालेको (दीर्घं आयुः प्र सर्स्राते) दीर्घ आयु प्रदान करते हैं।

यज्ञ करके प्रज्वलित अग्निमें योग्य हवनसामग्रीका हवन करनेसे जो शुद्ध वायु बनता है, उसमें रहनेसे मनुष्य दीर्घ आयु प्राप्त कर सकता है।

गाथिनो विश्वामित्रः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् ।

३६ इमे भोजा अंगिरसो विरूपा दिवस्पुत्रासो असुरस्य वीराः।
विश्वामित्राय ददतो मघानि सहस्रसावे प्र तिरन्त आयुः ।

ऋ. ३।५३।७

(इमे) ये (भोजाः विरूपाः अंगिरसाः) भोजन देनेवाले, विशेष सुन्दर रूपवाले अंगिरस तथा (असुरस्य दिवः वीराः पुत्रासः) प्राणोंके दाता रुद्रके दिव्य गुणवाले वीरपुत्र मरुत (सहस्रसावे) सहस्रों दान देनेवाले (विश्वामित्राय) विश्वामित्रको (मघानि ददतः) धनैश्वर्य देते हुए (आयुः प्रतिरन्ते) उसकी आयु बढाते हैं ॥ ३६ ॥

१ अंगिरसाः— अंगोंमें रहनेवाले जीवन रसकी विद्या जाननेवाले, इस अंग रस विद्याको जाननेसे मनुष्य दीर्घायु प्राप्त कर सकता है।

२ भोजाः— भोजन तैयार करनेमें प्रवीण।

३ असु-रः— प्राण शक्ति बढानेकी विद्या जाननेवाले।

४ दिवः वीराः— दिव्य गुणोंके वीर, वीर (वीरयति शत्रून्) दुष्टोंको दूर करनेवाले।

५ पुत्राः (पुनन्ति त्रायन्ते)— पवित्र करके रक्षण करते हैं।

६ विश्वामित्रः— सबका मित्र, द्वेष न करनेवाला।

७ सहस्रसावे— सहस्रों दान देनेवाले।

ये दीर्घ आयु प्राप्त करते हैं।

वामदेवो गौतमः। अग्निः। त्रिष्टुप्।

३७ यथा ह त्यद् वसवो गौर्यं चिद् पदि षिताममुंचता यजत्राः।
एवो ष्वस्मन्मुंचता व्यंहः प्रतार्यग्ने प्रतरं न आयुः॥

ऋ. ४।१२।६

हे (यजत्राः वसवः) पूजनीय तथा सबको बसानेवाले देवो! (यथा ह) जिस प्रकार तुमने (त्यद् पदि सितां) उस पैरोंसे बांधी हुई (गौर्यं) गायको (चित्) भी (अमुंचत) छुडाया था, (एव) उसी प्रकार (अंहः) पापोंको (अस्मद् सु वि मुंचत) हमसे अच्छी तरह छुडाओ, हे अग्ने! (नः प्रतरं आयुः प्रतारी) हमारी बढी हुई आयुको और बढाओ॥ ३७॥

जैसे बंधी गायको छोड देते हैं, उस तरह पापसे हमें मुक्त करो। पापके बंधनसे हमें छुडावो। (नः प्रतरं आयुः प्रतारी) हमारी दीर्घ आयुको और दीर्घ करो पापोंसे दूर होनेसे दीर्घ आयु और अधिक लंबी होती है। (अंहः अस्मत् सु वि मुंचत) पापसे हमें उत्तम रीतिसे विशेष मुक्त करो, पापसे उत्तम रीतिसे मुक्त होनेका अर्थ शरीर, इंद्रियां, मन और बुद्धिसे पाप विचारको समूल हटाना है।

वामदेवो गौतमः । अश्विनौ । गायत्री ।

३८ एष वां देवावश्विना कुमारः साहदेव्यः ।
दीर्घायुरस्तु सोमकः ॥ ऋ. ४।१५।९

हे (अश्विना देवौ) अश्वि देवो ! (एषः वां कुमारः) यह तुम्हारा पुत्र (साहदेव्यः सोमकः) दिव्य गुणोंसे युक्त तथा सोमयज्ञ करनेवाला होकर (दीर्घायुः अस्तु) दीर्घ आयुवाला हो ॥ ३८ ॥

१ कुमार— कुमार अवस्थाका मनवाला । जिसका मन कुमार अवस्थाके समान परि शुद्ध होता है ।

२ साहदेव्यः— देवोंके साथ रहनेवाला । (देवैः सहितः) दिव्य भावोंके साथ रहनेवाला ।

ऐसा जो होता है वह दीर्घायु प्राप्त करता है ।

वामदेवो गौतमः । अश्विनौ । गायत्री ।

३९ तं युवं देवावश्विना कुमारं साहदेव्यम् ।
दीर्घायुषं कृणोतन ॥ ऋ. ४।१५।१०

हे (अश्विना देवौ) अश्वि देवो ! (युवं) तुम दोनों (तं कुमारं साहदेव्यं) उस कुमार सहदेवके पुत्रको (दीर्घायुषं कृणोतन) दीर्घायु वाला बनाओ ॥ ३९ ॥

वामदेवो गौतमः । दधिक्राः । अनुष्टुप् ।

४० दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः ।
सुरभि नो मुखा करत् प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥
ऋ. ४।३९।६

हमने (जिष्णोः) जय प्राप्त करानेवाले (वाजिनः) बलवान् तथा (अश्वस्य) वेगसे दौडनेवाले (दधिक्राव्णः) दधिका नामक घोडेकी

स्तुति (अकारिषं) की, वह (नः मुखा) हमारी मुखादि इन्द्रियोंको (सुरभिः करत्) उत्तम सुगन्धि युक्त करे, तथा (नः आयूंषि तारिषत्) हमारी आयुओंको बढावे ॥ ४० ॥

मुखकी रुचि उत्तम हो, तथा मुखमें दुर्गन्धी न हो तो आयु दीर्घ होती है। मुख अति स्वच्छ करना चाहिये। दो दांतोंके मध्यमें अन्नका अंश नहीं रहना चाहिये। यह अन्नका अंश दो दांतोंके मध्यमें रहता है और वहां सडता है जिससे मुखमें दुर्गन्धी आती है। यह दुर्गन्धी आयुको क्षीण करती है, इसलिये कहा है (नः मुखा सुरभिः करत् नः आयुंषि तारिषत्) हमारे मुख सुगंधी युक्त हों जिससे हमारी आयु बढे।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः। अग्निः। त्रिष्टुप्।

४१ स नो विभावा चक्षणिर्न वस्तोरग्निर्वन्दारु वेद्यश्चनो धात्।
विश्वायुर्यो अमृतो मर्त्येषूषर्भुद् भूदतिथिर्जातवेदाः ॥

ऋ. ६।४।२

(वस्तोः चक्षणिः न) दिनमें जिस प्रकार सूर्य चमकता है, उसी प्रकार (विभावा) विशेष चमकनेवाला (वेद्यः) सबके द्वारा जानने योग्य (सः) वह अग्नि (नः वन्दारु चनः धात्) हमारे लिए प्रशंसनीय अन्नको देवे, (यः जात-वेदाः अतिथिः) जो सम्पूर्ण उत्पन्न हुओंको जाननेवाला, अतिथि अग्नि (मर्त्येषु विश्वायुः अमृतः) मर्त्योंमें सम्पूर्ण आयुको देनेवाला तथा अमर है, वह (उषर्भुद् भूत्) उषः कालमें प्रज्वलित होता है ॥ ४२ ॥

१ जात-वेदाः— उत्पन्न हुओंको जाननेवाला, अथवा वेदोंको जाननेवाला, या वेद जिससे उत्पन्न हुए हैं।

२ वन्दारु चनः नः धात्, मर्त्येषु विश्वायुः— प्रशंसनीय अन्न खानेसे पूर्ण आयु प्राप्त होती है। अप्रशस्त अन्न खानेसे आयु घटती है।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

४२ द्यावो न यस्य पनयन्त्यभ्वं भासांसि वस्ते सूर्यो न शुक्रः ।
वि य इनोत्यजरः पावकोऽशनस्य चिच्छिश्नथत् पूर्व्याणि ॥
ऋ. ६।४।३

(न) अब (द्यावः) द्युलोक भी (यस्य अभ्वं पनयन्ति) जिसके कामकी प्रशंसा करते हैं, वह (सूर्यः न शुक्रः) सूर्यके समान तेजस्वी होकर (भासांसि वस्ते) अपने तेजोंको फैलाता है, (यः) जो यह अग्नि (पावकः) शुद्धता करनेवाला और (अजरः) जरामरण रहित है, वह (अशनस्य चित्) बहुत खानेवाले शत्रुके (पूर्व्याणि) पुराने नगरोंको (शिश्नथत्) तोडता है ॥ ४२ ॥

पावकः अजरः— जो शुद्ध रहता है वह जरा रहित होता है । वृद्धावस्था उसको जलदी आती है कि जो अपवित्र आचरण करता है । शुद्ध आचरण करनेसे आयु बडी होती है ।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

४३ नू नो अग्नेऽवृकेभिः स्वस्ति वेषि रायः पथिभिः पर्यंहः ।
ता सूरिभ्यो गृणते रासि सुम्नं मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥
ऋ. ६।४।८

(अग्ने) अग्ने ! (नः नू) हमें शीघ्र ही (अ-वृकेभिः पथिभिः) क्रूर कर्मिओंसे रहित मार्गोंसे (रायः) धनैश्वर्य तक (स्वस्ति वेषि) कुशलता पूर्वक पहुंचा, और (अंहः पर्षि) पापसे पार करा, तू (सूरिभ्यः गृणते सुम्नं रासि) विद्वानों तथा स्तुति करनेवालेको सुख प्रदान करता है, हम (सु-वीराः) उत्तम वीर सन्तानोंसे युक्त होकर (शतहिमाः मदेम) सौ वर्ष तक आनन्दसे रहें ॥ ४३ ॥

१ अ-वृकेभिः पथिभिः रायः स्वस्ति नेषि— सरल मार्गोंसे ऐश्वर्य तक सुखसे पहुंचाओ ।

२ अंहः पर्षि — पापसे हमें दूर रख ।

३ सुवीराः शतहिमाः मदेम— उत्तम संतानोंके साथ हम सौ वर्ष जीवें ।

सरल आचरण करना और निष्पाप रहना इनसे दीर्घायु होती है ।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अग्निः त्रिष्टुप् ।

४४ अश्याम तं काममग्ने तवोती अश्याम रयिं रयिवः सुवीरम् ।
अश्याम वाजमभि वाजयन्तो ऽश्याम द्युम्नमजराजरं ते ॥
ऋ. ६।५।७

हे अग्ने ! (तव ऊती) तेरे संरक्षणकी सहायतासे (तं कामं अश्यामः) उस अपनी अभिलाषाको प्राप्त करें, हे (रयिवः) धन-युक्त अग्ने ! (सुवीरं रयिं अश्याम) उत्तम सन्तानयुक्त धनैश्वर्यको प्राप्त करें, तथा (वाजयन्तः) अन्न तथा बलकी इच्छा करनेवाले हम (वाजं अभि अश्याम) अन्न तथा बलको प्राप्त करें, और (अ-जर) हे वृद्ध न होनेवाले अग्ने ! (ते अ-जरं द्युम्नं अश्याम) तेरे वृद्ध न बनानेवाले तेजको हम प्राप्त करें ॥ ४४ ॥

उत्तम सुरक्षित स्थितिमें रहना, उत्तम संतान प्राप्त करना, उत्तम ऐश्वर्य युक्त होना, उत्तम अन्न खाकर उत्तम बल प्राप्त करना इससे वृद्धावस्था दूर होती है अर्थात् दीर्घ जीवन प्राप्त होताहै ।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

४५ वि द्वेषांसीनुहि वर्धयेळां मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥
ऋ. ६।१०।७

(द्वेषांसि वि इनुहि) द्वेषोंको हमसे दूर कर और (इळां वर्धय) हमारी बुद्धि तथा ज्ञानको बढा, हम (सु-वीराः) उत्तम वीर सन्तानोंसे युक्त होकर (शतहिमाः मदेम) सौ वर्ष आनन्दसे रहें ॥ ४५ ॥

मनसे द्वेषभावको दूर करना, ज्ञानसे बुद्धिको बढाना और सुसंतानसे युक्त होना इससे सौ वर्षकी दीर्घ आयु प्राप्त होती है। मनमें द्वेषभाव रहनेसे अपना रक्त दोषी होता है और आयु कम होती है। इळाका अर्थ है बुद्धिको ज्ञानसे शुद्ध करना भाषा शुद्ध रखनी। बोलनेमें द्वेषके शब्द न आयें। सुसंतान घरमें हो तो मन प्रसन्न रहता है। ये गुण आयु दीर्घ करते हैं।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः। अग्निः। पुरस्ताज्ज्योतिः।

४६ स त्वं नो अर्वन्निदायाः विश्वेभिरग्ने अग्निभिरिधानः।
वेषि रायो वि यासि दुच्छुना मदेम शतहिमाः सुवीराः॥
ऋ. ६।१२।६

हे (अर्वन् अग्ने) बलशाली अग्ने! (स त्वं) वह तू (विश्वेभिः अग्निभिः इधानः) अपनी सम्पूर्ण ज्वालाओंसे प्रज्वलित होता हुआ (निदायाः) निन्दनीय लोगोंसे (नः वेषि) हमें दूर रख, और (रायः) हमें धन दे, तथा (दुच्छुना वि यासि) बुरे आदमियोंका नाश कर, जिससे हम (सु-वीराः) उत्तम पुत्रवाले होकर (शतहिमाः मदेम) सौ वर्ष तक आनन्द भोगें॥ ४६॥

निन्दनीय दुराचारी लोगोंको हमसे दूर रखो। इससे हमारा मन शान्त रहेगा और हमें सौ वर्षकी आयु प्राप्त होगी।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः। अग्निः। त्रिष्टुप्।

४७ वद्मा सूनो सहसो नो विहाया
अग्ने तोकं तनयं वाजि नो दाः।
विश्वाभिर्गीभिरभि पूर्तिमश्याम
मदेम शतहिमाः सुवीराः॥ ऋ. ६।१३।६

हे (वद्मा सहसः सूनो अग्ने) चमकनेवाले बलके पुत्र अग्ने! (नः विहायाः) हमें बडा करके (तोकं तनयं वाजि दाः) पुत्र पौत्र और

घोडे दे। हम (विश्वाभिः गीर्भिः) सम्पूर्ण ज्ञानोंसे (पूर्ति अभि अश्याम्) पूर्णताको प्राप्त करें, तथा (सु-वीराः) उत्तम पुत्रोंसे युक्त होकर (शत-हिमाः मदेम) सौ वर्ष तक आनन्दित रहें ॥ ४४ ॥

ज्ञानसे पूर्णताको प्राप्त करके उत्तम संतानोंसे युक्त होकर, सौ वर्षकी पूर्ण आयु प्राप्त हो सकती है। (गीर्भिः पूर्ति अभि अश्यां) ज्ञानसे पूर्णताको प्राप्त करना। यह दीर्घ आयु प्राप्त करनेका उत्तम साधन है।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः। अग्निः। अनुष्टुप्।

४८ ते ते अग्ने त्वोता इषयन्तो विश्वमायुः।
तरन्तो अर्यो अरातीर्वन्वन्तो अर्यो अरातीः॥ ऋ. ६।१६।२७

(त्वा ऊताः) तेरे द्वारा रक्षित होकर (ते ते अर्यः) वे सब वीर (अरातीः तरन्तः) शत्रुओंको पार करते हुए (अरातीः वन्वन्तः) शत्रुओंको मारते हूए तथा (इषयन्तः) अन्न प्राप्त करते हुए (विश्वं आयुः) सम्पूर्ण आयुका उपभोग करते हैं ॥ ४८ ॥

वीर सुरक्षित होकर, शत्रुओंको दूर करके, उत्तम अन्न प्राप्त करके उत्तम अन्न भक्षण करके, दीर्घ आयुको प्राप्त होते हैं।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः। इन्द्रः। द्विपदा त्रिष्टुप्।

४९ अया वाजं देवहितं सनेम मदेम शतहिमाः सुवीराः॥
ऋ. ६।१७।१५

(अया) इस प्रकार हम (देव-हितं) देवोंके हितकारी (वाजं) अन्न और बलको (सनेम) प्राप्त करें तथा (सु-वीराः) उत्तम पुत्र-वाले होकर हम (शतहिमाः मदेम) सौ वर्ष तक आनन्दका उपभोग करें ॥ ४९ ॥

देवहितं वाजं सनेम, सुवीराः शतहिमाः मदेम— श्रेष्ठ पुरुषोंका हित करनेवाला अन्न खाकर, उत्तम वीर पुत्रोंसे युक्त होकर, सौ वर्षकी आयु आनन्दसे भोगें।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् ।

५० न यं जरन्ति शरदो न मासा न द्याव इन्द्रमवकर्शयन्ति ।
वृद्धस्य चिद्वर्धतामस्य तनूः स्तोमेभिरुक्थैश्च शस्यमाना ॥

ऋ. ६।२४।७

(यं) जिस इन्द्रको (शरदः मासाः द्यावः) वर्ष, मास और दिन (न न न अवकर्शयन्ति) कमजोर नहीं कर सकते, इस (वृद्धस्य) महान्‌की (तनूः) देह (स्तोमेभिः उक्थैः च शस्यमाना) स्तोत्रोंसे प्रशंसित होकर (वर्धताम्) बढे ॥ ५० ॥

वर्ष, महिने और दिन मनुष्यके पास आते हैं और मनुष्यकी उतनी आयु कम करते हैं । हम उन वर्षों, महिनों और दिनोंमें ईश्वरके स्तोत्र गायें और मन उन स्तोत्रोंमें लगायें, जिससे हमारी आयु कम न होकर, बढती ही रहे। ईश्वरके स्तोत्रोंमें मन लगानेसे आयु बढती है ।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्रः त्रिष्टुप् ।

५१ सचस्व नायमवसे अभीक इतो वा तमिन्द्र पाहि रिषः ।
अमा चैनमरण्ये पाहि रिषो मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥

ऋ. ६।२४।१०

हे (इन्द्र) इन्द्र ! (अभीके) संग्राममें (अवसे) संरक्षणके लिए हमारे (नायं सचस्व) नेताके साथ रह तथा (तं) उस नायककी (इतः वा) इधर और उधरके (रिषः) शत्रुओंसे (पाहि) रक्षा कर, (एनं) इसकी (अमा अरण्ये च रिषः पाहि) घर और जंगलमें शत्रुओंसे रक्षा कर और हम भी (सु-वीराः शतहिमाः मदेम) उत्तम सन्तानवाले होकर सौ वर्ष तक आनन्दित रहें ॥ ५१ ॥

शत्रुओंसे पूर्ण रीतिसे सुरक्षित होकर रहना यह दीर्घ जीवन प्राप्त करनेका उत्तम साधन है । इधरसे या उधरसे शत्रु हम पर हमला करेगा ऐसा भय रहा तो आयु कम होगी । निर्भय होनेसे आयु बढती है ।

बार्हस्पत्यो भरद्वाजः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् ।

५२ वर्धाद्यं यज्ञ उत सोम इन्द्रं वर्धाद्ब्रह्म गिर उक्था च मन्म ।
वर्धाहैनमुषसो यामन्नक्तोर्वर्धान्मासाः शरदो द्याव इन्द्रम् ॥
ऋ. ६।३८।४

(यं इन्द्रं) जिस इन्द्रको (यज्ञः वर्धात्) यज्ञ बढाता है, (उत) और (सोमः वर्धात्) सोम बढाता है, (गिरः उक्था मन्म च) साम, स्तोत्र और प्रशंसायें बढाती हैं (अक्तोः यामन्) रात्रिके चले जाने पर (एनं उषसः) इसको उषायें बढाती हैं, उसे (शरदः मासाः द्यावः अह च वर्धात्) वर्ष, मास और चमकनेवाले दिन भी बढावें ॥ ५२ ॥

यज्ञकी मनः प्रवृत्ति, सोम, सामगायन, स्तोत्र, मननीय काव्य ये सब मनुष्यकी आयुको बढानेवाले हैं ।

नरो भारद्वाजः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् ।

५३ अस्मा एतन्महाँगूषमस्मा इन्द्राय स्तोत्रं मतिभिरवाचि ।
असद्यथा महति वृत्रतूर्य इन्द्रो विश्वायुरविता वृधश्च ॥
ऋ. ६।३।५

(यथा) जिस कारण यह (इन्द्रः) इन्द्र (महति वृत्रतूर्ये) महान् संग्राममें (अविता) रक्षा करनेवाला (वृधः च) बढानेवाला तथा (विश्वायुः) सम्पूर्ण आयुको भोगनेवाला (असत्) हुआ है, इसलिये (अस्मै) इसके लिए (एतत् महि आंगूषं) यह महान् स्तोत्र है, तथा (अस्मै इन्द्राय मतिभिः स्तोत्रं अवाचि) इस इन्द्रके लिए बुद्धि पूर्वक स्तोत्र कहे जाते हैं ॥ ५३ ॥

जिस प्रकार इन्द्र अपने शौर्यसे अपने शत्रुको मारकर सबकी सुरक्षा करता है और पूर्ण आयुका उपभोग करता है, उस प्रकार मनुष्य वीरता धारण करे, शत्रुको पराभूत करके विजय प्राप्त करे और दीर्घ आयुका उपभोग करे ।

शंयुर्बार्हस्पत्यः (तृणपाणिः) । अग्निः । महा सतोबृहती ।

५४ विश्वासां गृहपतिर्विशामसि त्वमग्ने मानुषीणाम् ।
शतं पूर्भिर्यविष्ठ पाह्यंहसः समेद्धारं शतं हिमाः
स्तोतृभ्यो ये च ददति ॥ ऋ. ६।४८।८

हे (अग्ने) अग्ने ! (त्वं) तू (मानुषीणां विश्वासां विशां) मनुसे उत्पन्न हुई सब प्रजाओंके (गृहपतिः असि) घरका स्वामी है, हे (यविष्ठ) बलवान् अग्ने ! (सं इद्धारं) तुझको अच्छी तरह प्रदीप्त करनेवाले मेरी (शतं हिमाः) सौ वर्ष तक (शतं पूर्भिः) सैकडों पालनके साधनोंसे (अंहसः पाहि) पापोंसे रक्षा कर, (ये च स्तोतृभ्यः ददति) और जो स्तोताओंके लिए दान देते हैं उनकी भी रक्षा कर ॥ ५४ ॥

जो अपने घरमें अग्नि रखते हैं और उसमें ऋतुके अनुसार हवन करते हैं वे पापसे बचते हैं तथा वे दान देते हैं और वे सौ वर्षकी आयु प्राप्त करते हैं ।

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

५५ महो नो अग्ने सुवितस्य विद्वान् रयिं
सूरिभ्य आ वहा बृहन्तम् ।
येन वयं सहसावन् मदेमाविक्षितास आयुषा सुवीराः ॥
ऋ. ७।१।२४

हे अग्ने ! (सुवितस्य विद्वान्) उत्तम धनको जाननेवाला तू (नः सूरिभ्यः) हम विद्वानोंके लिए (महः बृहन्तं रयिं आवह) महान् ऐश्वर्य दे, हे (सहसावन्) बलवान् अग्ने ! (येन वयं) जिस धनसे हम (अ-विक्षितासः) क्षीण न होते हुए (सु-वीराः) उत्तम पुत्रोंसे युक्त होकर (आयुषा मदेम) दीर्घ आयुसे युक्त होकर आनन्दित हों ॥ ५५ ॥

विद्वानोंको धन मिलना चाहिये, जिससे वे उत्तम अन्न खाकर बलवान् बनें, क्षीण न हों और उत्तम वीर संतान उत्पन्न करके दीर्घ आयुको प्राप्त करें।

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः। सूर्यः। पुर उष्णिक्।

५६ तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रमुच्चरत्।
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम्॥ ऋ. ७।६६।१६

(तत् देवहितं) वह देवोंका हितकारी (शुक्रं) तेजस्वी (चक्षुः) आंखरूपी सूर्य (उत् चरत्) उदय हो गया है, उसकी कृपासे हम (शतं शरदः पश्येम) सौ वर्ष तक देखें, (शतं शरदः जीवेम) सौ वर्ष तक जीवें॥ ५६॥

सूर्य प्रकाशसे आयु दीर्घ होती है।

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः। उषसः। त्रिष्टुप्।

५७ अस्मे श्रेष्ठेभिर्भानुभिर्वि भाह्युषो देवि प्रतिरन्ती न आयुः।
इषं च नो दधती विश्ववारे गोमदश्वावद् रथवच्च राधः॥
ऋ. ७।७७।५

हे (देवि उषः) देवी उषे! (नः आयुः प्रतिरन्ती) हमारी आयुको बढाती हुई (नः इषः) हमारे लिए अन्न तथा (गोमत् अश्वावत् रथवत् च) गाय, घोडे तथा रथ युक्त (राधः) धनैश्वर्य को (दधती) धारण करती हुई (अस्मे) हमारे लिए (श्रेष्ठेभिः भानुभिः) उत्तम किरणोंसे युक्त होकर (विभाहि) अच्छी तरह चमक॥ ५७॥

योग्य अन्न तथा उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त करके सूर्यकी किरणोंसे हम अपनी आयु दीर्घ करें।

मैत्रावरुणिर्वसिष्ठः । मण्डूकाः (पर्जन्यः) । त्रिष्टुप् ।

५८ गोमायुरदादजमायुरदात् पृश्निरदाद्धरितो नो वसूनि ।
गवां मण्डूका ददतः शतानि सहस्रसावे प्रतिरन्त आयुः ॥
ऋ.७।१०३।१०

(नः) हमें (गोमायुः अदात्) गायें दीं, (अजमायुः अदात्) भेड बकरियां भी दीं, (पृश्निः अदात्) चितकबरी गायें भी दीं तथा (हरितः वसूनि) लाल सुनहरे रंगके धन भी दिए, ऐसे (मण्डूकाः) संतुष्ट लोग (सहस्रसावे) हजारों तरहके ऐश्वर्यके लिए (गवां शतानि ददतः) सैंकडों गायें देते हुए (आयुः प्रतिरन्ते) हमारी आयुको बढाते हैं ॥ ५८ ॥

गायोंसे प्राप्त होनेवाले दुग्ध आदिको खाकर आयु दीर्घ होती है। 'मण्डूकाः मदतेर्वा मोदतिकर्मणः' (निरु. ८।६) जो आनन्दित रहते हैं उनको मण्डूक कहते हैं। यह आनन्द वृत्तिवालोंका सांकेतिक नाम है। वृष्टि होनेसे मण्डूक आनंदित होते हैं। आनन्दित वृत्ति रखनेसे आयुकी वृद्धि होती है।

मनुर्वैवस्वतः दम्पती । गायत्री ।

५९ पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुतः ।
उभा हिरण्यपेशसा ॥ ऋ. ८।३१।८

(ता उभा) वे दोनों पति-पत्नी (कुमारिणा पुत्रिणा) कुवांरी पुत्रीके साथ (हिरण्य-पेशसा) सोनेके अलंकारोंको धारण करके (विश्वं आयुः व्यश्नुतः) सम्पूर्ण आयुका उपभोग करें ॥ ५९ ॥

सुवर्णके अलंकार शरीर पर धारण करनेसे, सुवर्णका घर्षण शरीरके साथ होता है। इस घर्षणसे सुवर्णका अंश शरीरमें प्रविष्ट होता है। इस सुवर्णके शरीरमें प्रविष्ट अति सूक्ष्म अंशसे आयु दीर्घ होती है। सुवर्णभस्म सेवन करनेसे अथवा अन्य रीतिसे सुवर्णका अति सूक्ष्म अंश शरीरमें जानेसे भी आयुष्यकी वृद्धि होती है।

सुपर्णः काण्वः । इन्द्रावरुणौ । जगती ।

६० इन्द्रा॑वरुणा सौमन॒समदृ॑प्तं रा॒यस्पोषं॒ यज॑मानेषु धत्तम् ॥
प्र॒जां पु॒ष्टिं भू॑ति॒मस्मासु॑ धत्तं दीर्घायु॒त्वाय॒ प्र॒तिरतं॑ न॒ आयुः॑॥

ऋ. ८।५९।७

(इन्द्रावरुणा) इन्द्र और वरुण (सौमनसं अदृप्तं) उत्तम मनवाले तथा निरभिमानी हैं, वे दोनों (यजमानेषु) यजमानोंमें (रायस्पोषं धत्तं) धन और पुष्टिको रखते हैं, वे ही (अस्मासु) हममें (प्रजां पुष्टिं भूतिं) प्रजा, पुष्टि और ऐश्वर्यको रखें, और (दीर्घायुत्वाय नः आयुः प्र तिरतं) दीर्घायुके लिए हमारी आयुको बढावें ॥ ६० ॥

(सौमनसं) उत्तम परिशुद्ध मन रखनेसे तथा (अ-दृप्तं) घमंडी भावना मनमें न रखनेसे धन, पोषण, सुप्रजा और ऐश्वर्यकी वृद्धि होती है, और दीर्घ आयु अतिदीर्घ हो सकती है। उत्तम शुद्ध मन और घमंडका अभाव ये दो शुभगुण दीर्घायुके देनेवाले हैं।

त्रित आप्त्यः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

६१ ईशे॒ यो विश्व॑स्या दे॒ववी॑तेः॒ ईशे॑ वि॒श्वायु॑रु॒षसो॒ व्यु॑ष्टौ ।
आ यस्मि॑न्म॒ना ह॒वींष्य॒ग्नौ अरि॑ष्टरथः स्क॒म्नाति॑ शू॒षैः ॥

ऋ. १०।६।३

(यः विश्वस्याः देववीतेः ईशे) जो सम्पूर्ण यज्ञोंका स्वामी है, तथा (उषसः व्युष्टौ ईशे) जो उषःकालमें यज्ञोंका स्वामी है, तथा (शूषैः अरिष्टरथः) शत्रुके बलोंसे अहिंसित रथवाला जो यजमान (यस्मिन् अग्नौ) जिस अग्निमें (मना हवींषि स्कम्नाति) मननीय हवियोंको डालता है वह (विश्वायुः) सम्पूर्ण आयुवाला होता है ॥ ६१ ॥

शूषैः अरिष्टरथः— रोगरूपी शत्रुओंसे जिसका शरीर रूपी रथ कमजोर नहीं किया गया है। 'आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव च' (कठोपनिषद्) आत्माको रथका स्वामी और शरीरको रथ जानो।

जो यज्ञमें मनःपूर्वक शुद्ध हवियोंका अर्पण करता है, वह पूर्ण आयुको प्राप्त करता है।

त्रितः आप्त्यः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

६२ स्वस्ति नो दिवो अग्ने पृथिव्याः विश्वायुर्धेहि यजथाय देव।
सचेमहि तव दस्म प्रकेतैः उरुष्या णो उरुभिर्देव शंसैः ॥

ऋ. १०।७।१

हे (अग्ने देव) अग्ने ! (यजथाय) यज्ञ करनेसे (दिवः पृथिव्याः) द्युलोक और पृथिवीलोकमें (नः स्वस्ति) हमारा कल्याण हो, तथा (विश्वायुः धेहि) हमें सम्पूर्ण आयु प्रदान कर, हे (दस्म) सुन्दर अग्ने ! हम (तव प्रकेतैः सचेमहि) तेरी किरणोंसे बढें, (उरुष्या नः) संरक्षणकी इच्छावाले हम, हे देव ! तुझे (उरुभिः शंसैः) बडी बडी स्तुतियोंसे बढाते हैं ॥ ६२ ॥

यज्ञ करनेसे पृथिवीपर मनुष्योंका कल्याण होता है, और मनुष्यको पूर्ण आयु मिलती है ।

वसुर्भारद्वाजः । पवमानः सोमः । जगती ।

६३ यं त्वा वाजिन्नघ्न्या अभ्यनूषत
अयोहतं योनिमा रोहसि द्युमान् ।
मघोनामायुः प्रतिरन् महि श्रवः
इन्द्राय सोम पवसे वृषा मदः ॥ ऋ. ९।८०।२

हे (वाजिन्) बलवान् सोम ! (अयोहतं यं त्वा) सोनेसे कूटे गए जिस तुझे (अघ्न्याः) गायें (अभि अनूषत) चारों ओरसे घेरती हैं, ऐसा वह तू (द्युमान्) तेजस्वी होकर (योनिं आ रोहसि) बर्तनमें जाता है, तथा हे (सोम) सोम ! (महि श्रवः वृषा मदः) महान् यशवाला बलवान् और आनन्द देनेवाला तू (मघोनां आयुः प्रतिरन्) यज्ञ करनेवालोंकी आयुको बढाता हुआ (इन्द्राय) इन्द्रके लिए (पवसे) पवित्र होता है, छनता है ॥ ६३ ॥

+

महान् यश, बल और आनंद प्राप्त होनेसे आयु दीर्घ होती है, इसलिये शुद्ध मार्गसे यश मिले, बल बढे और आनंद प्राप्त हो ऐसा प्रयत्न करना योग्य है।

दैवोदासिः प्रतर्दनः। पवमानः। सोमः। त्रिष्टुप्।

६४ वृष्टिं दिवः शतधारः पवस्व सहस्रसा वाजयुर्देववीतौ।
सं सिन्धुभिः कलशे वावशानः
समुस्रियाभिः प्रतिरन् न आयुः॥ ऋ. ९।९६।१४

हे सोम! (वाजयुः) बलवान् तू (सिन्धुभिः सं उस्रियाभिः सं) नदीके जलके तथा गायके दूधके साथ अच्छी तरह मिलकर (नः आयुः प्रतिरन्) हमारी आयुको बढाते हुए (देववीतौ) यज्ञमें (वृष्टिं) वृष्टिके समान (वावशानः) शब्द करते हुए (दिवः) ऊपरसे (शतधारः सहस्रसा) सैंकडों तथा हजारों धाराओंसे (कलशे पवस्व) कलशमें छनता जा॥ ६४॥

सोम रसमें जल तथा गायका दूध मिलाकर उसको योग्य प्रमातमें पीनेसे आयु बढती है।

कश्यपो मारीचः। पवमानः सोमः। पंक्तिः।

६५ यत्र ज्योतिरजस्रं यस्मिन् लोके स्वर्हितम्।
तस्मिन्मां धेहि पवमानामृते लोके अक्षिते॥ ऋ. ९।११३।७

(यत्र अजस्रं ज्योतिः) जहां शाश्वत प्रकाश है, (यस्मिन् लोके स्वः हितम्) जिस लोकमें सुख निहित है, (तस्मिन् अ-क्षिते अमृते लोके) उस अविनाशी अमृतलोकमें, हे पवमान। (मां धेहि) मुझे स्थापित कर॥ ६५॥

अमृत लोकमें स्थापित करनेका अर्थ दीर्घायु प्राप्त करना है। तेजस्वी सोमरस छाननीसे छान कर पीनेसे आयु दीर्घ होती है। यही अमरलोकमें स्थान प्राप्त करना है।

कश्यपो मारीचः । पवमानः सोमः । पंक्तिः ।

६६ यत्रानुकामं चरणं त्रिनाके त्रिदिवे दिवः ।
लोका यत्र ज्योतिष्मन्तस्तत्र माममृतं कृधि ॥ ऋ. ९।११३।९

(यत्र अनुकामं चरणं) जहां इच्छानुसार विचरण किया जा सकता है (यत्र त्रि-नाके त्रि-दिवे) जिस तीनों प्रकारके सुख और तीनों तरहके प्रकाशसे युक्त द्युलोकमें (दिवः ज्योतिष्मन्तः लोकाः) सुख तथा प्रकाशवाले लोक हैं (तत्र) उन लोकमें (मां अमृतं कृधि) मुझे अमर कर ॥ ६६ ॥

सोमरस अमर करता है, इसका अर्थ दीर्घायु करता है ।

कश्यपो मारीचः । पवमानः सोमः । पंक्तिः ।

६७ यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुदः प्रमुद आसते ।
कामस्य यत्राप्ताः कामास्तत्र माममृतं कृधि ॥
ऋ. १।११३।११

(यत्र आनन्दाः च मोदाः च) जहां आनन्द और सुख हैं (मुदः प्रमुदः आसते) तथा ऐश्वर्य और अतिशय आनन्द है (कामस्य यत्र कामाः आप्ताः) कामनावालेकी जहां कामनायें तृप्त हो जाती है, (तत्र मां अमृतं कृधि) वहां मुझे अमर कर ॥ ६७ ॥

जहां मनमें आनन्द रहता है वहां अमरत्व अर्थात् दीर्घायुकी प्राप्ति होती है । मनको आनंदप्रसन्न रखना दीर्घायु करनेवाला है ।

वैवस्वतो यमः । यमः । अनुष्टुप् ।

६८ यमाय घृतवद्धविर्जुहोत प्र च तिष्ठत ।
स नो देवेष्वा यमद्दीर्घमायुः प्र जीवसे ॥ ऋ. १०।१४।१४

(यमाय) यमके लिए (घृतवत् हविः जुहोत) घी वाली हविकी आहुति दो, (च) और (प्र तिष्ठत) और स्थिर रहो, (सः) वह यम

(देवेषु) देवोंमें (नः) हमें (प्रजीवसे) दीर्घजीवनके लिए (दीर्घं आयुः यमत्) लम्बी आयु प्रदान करे ॥ ६८ ॥

अग्निमें गौके घीकी आहुतियां देनी चाहिये और उस अग्निके पास थोडी देर तक स्थिर बैठना चाहिये। जिससे उन आहुतियोंके द्वारा शुद्ध हुई हवा हवनकर्ताके अन्दर जा सके। इससे आयु दीर्घ होती है।

संकुसुको यामायनः। मृत्युः। त्रिष्टुप्।

६९ मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः॥

ऋ. १०।१८।२

हे (यज्ञियासः) यज्ञ करनेवाले मनुष्यो ! तुम (मृत्योः पदं योपयन्तः) मृत्युके पैरको दूर करते हुए, (यत् आ एत) जब आगे बढोगे, तब (द्राघीयः प्रतरं) दीर्घ तथा विशेष लम्बी (आयुः दधानाः) आयुको धारण करते हुए (प्रजया धनेन आप्यायमानाः) प्रजा और धनसे युक्त होते हुए (शुद्धाः पूताः भवत) शुद्ध और पवित्र होओ ॥ ६९ ॥

यज्ञ करनेसे मृत्युके अपने ऊपर रखे पांवको दूर किया जा सकता है, और पहिली प्राप्त लंबी आयु अधिक दीर्घ करके धारण की जा सकती है। शुद्ध और पवित्र बननेसे भी आयु दीर्घ की जा सकती है।

संकुसुको यामायनः। मृत्युः। त्रिष्टुप्।

७९ इमे जीवा वि मृतैराववृत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य।
प्राचीं अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः॥

ऋ. १०।९८।३

(इमे जीवाः मृतैः आववृत्रन्) ये जीवित मनुष्य मृतकोंसे घिरे हुए हैं (अद्य) आज (नः देव-हूतिः) हमारे द्वारा किया गया देवोंका यज्ञ (भद्रा अभूत्) कल्याणकारी होवे, हम (नृतये हसाय) नाचने और

हंसनेके लिए (द्राघीयः प्रतरं आयुः दधानाः) लम्बी और उत्तम आयुको धारण करते हुए (प्रांचः अगाम) आगे बढें ॥ ७०॥

भूमिपरके जीवित मनुष्य मरे हुओंसे घिरे हुए हैं। चारों ओर लोग मर रहे हैं। इसलिये जीवित मनुष्योंको यज्ञ करना चाहिये। मनुष्य यहां इस जगत्में आनंदसे नाचते और हंसते रहें। यज्ञसे दीर्घ आयु और अधिक दीर्घ करके धारण को जा सकती है। इस तरह मनुष्य प्रगति करके आनन्द प्राप्त करें।

संकुसुको यामायनः। मृत्युः। त्रिष्टुप्।

७१ इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम्।
शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीः अन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन ॥
ऋ. १०।१८।४; यजु. ३५।१५

मैंने (जीवेभ्यः) जीवित मनुष्योंके लिए (इमं परिधिं दधामि) इस वयोमर्यादाको बनाया है (एषां) इन मानवोंमें कोई भी (अ-परः) नीच होकर (एतं अर्थं मा गात्) इस आयुरूपी धनका त्याग न करे, सभी मनुष्य (शतं शरदः) सौ वर्ष या (पुरूचीः) उससे भी अधिक (जीवन्तु) जीवें तथा (मृत्युं) मृत्युको (पर्वतेन अन्तः दधतां) पर्वतके अन्दर स्थापित कर दें ॥ ७१ ॥

मानवोंकी आयुष्य मर्यादा १२० वर्षोंकी परमेश्वरने की है। मनुष्य नीच बनकर इस आयुष्य रूपी धनको खो न बैठे। नीच आचरण करनेसे आयु कम होती है। सौ वर्ष या अधिक आयु तक मनुष्य जीवित रहें। मृत्युको पृष्ठवंश रूपी पर्वतके नीचे दबा कर रखें। पृष्ठवंश सीधा रखना चाहिये और उसमें जो चक्र स्वाधिष्ठान, मणिपूरक आदि हैं उनमें आत्म-शक्तिको ध्यानसे स्थिर करें। इससे आयु बढती है। 'प्रब्रवाम शरदः शतं'— सौ वर्ष प्रवचन करते रहें। इस तरह सौ वर्ष प्रवचन करनेके लिये १२० वर्षकी आयु चाहिये।

संकुसुको यामायनः । धाता । त्रिष्टुप् ।

७२ यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साधु ।
यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषाम् ॥

ऋ. १०।१८।५

(यथा अहानि) जिस प्रकार दिन (अनु पूर्वं भवन्ति) एक दूसरेके पीछे चलते हैं। (यथा ऋतवः ऋतुभिः साधु यन्ति) तथा जिस प्रकार ऋतुएं एक दूसरेके पीछे चलतीं हैं, (यथा पूर्वं अपरः न जहाति) जिस प्रकार पहले अर्थात् पिताको बादमें होनेवाला अर्थात् पुत्र नहीं छोडता है, उसी प्रकार (धातः) हे विधाता ! (एषां आयूंषि कल्पय) इन जीवोंकी आयु दीर्घ कर ॥ ७२ ॥

दिन और ऋतु एकके पीछे दूसरा आता है, इस तरह पिताके पीछे पुत्र आता है। वह पुत्र पिताके पूर्व न मरे। हे परमेश्वर ! मानवोंकी आयु तू ऐसी बना कि जिससे पिताके पूर्व पुत्र न चल बसे ।

संकुसको यामायनः । पितृमेधः । त्रिष्टुप् ।

७३ आरोहतायुर्जरसं वृणाना अनुपूर्वं यतमाना यति ष्ठ ।
इह त्वष्टा सुजनिमा सजोषा दीर्घमायुः करति जीवसे वः॥

ऋ. १०।१८।६

हे मनुष्यो ! (अनु-पूर्वं) पूर्वजोंके अनुकूल (यतमानाः) प्रयत्न करते हुए (यतिस्थ) बढते जाओ, तथा (जरसं वृणानाः) बुढापे को स्वीकार करते हुए (आयुः आरोहत) आयुको प्राप्त करो। (त्वष्टा त्वष्टा देव (इह) इस संसारमें (सजोषाः) समान प्रीति युक्त रहनेके लिए तथा (सु-जनिमा) उत्तम जन्मके लिए और (जीवसे) दीर्घ-जीवनके लिए (वः आयुः दीर्घं करति) तुम्हारी आयु लम्बी करे ॥ ७३ ॥

जीवनमें उत्तम आचरण करनेसे आयु दीर्घ होती है। ' आयुः आरोहतः ' आयु पर चढना चाहिये । उतरना नहीं चाहिये । गिरना नहीं,

चढना है। मनुष्य विचार करें कि हम अपने जीवनमें चढ रहे हैं, या गिर रहे हैं। चढनेसे आयु बढती है, गिरनेसे कम होती है।

लुशो धानाकः। विश्वेदेवाः। त्रिष्टुप्।

७४ सविता पश्चातात् सविता पुरस्तात्
सवितोत्तरात्तात्सविताधरात्तात्।
सविता नः सुवतु सर्वतातिं सविता नो रासतां दीर्घमायुः॥
ऋ. १०।३६।१४

(सविता) सविता देव (नः) हमें (पश्चात्तात्, पुरस्तात्, उत्तरातात् अधरात्तात्) पीछेसे, आगेसे, ऊपरसे, नीचेसे (सर्वतातिं सुवतु) सब अभिलषित सुखोंको प्रदान करे, तथा (सविता) सबको उत्पन्न करनेवाला देव (नः दीर्घं आयुः रासतां) हमें दीर्घायु देवे ॥ ७४ ॥

सूर्य आयुको दीर्घ करता है। इसलिये सूर्य प्रकाशसे दूर नहीं होना चाहिये।

सौर्योऽभितपाः। सूर्यः। जगती।

७५ विश्वाहा त्वा सुमनसः सुचक्षसः
प्रजावन्तो अनमीवा अनागसः।
उद्यन्तं त्वा मित्रमहो दिवे दिवे
ज्योग्जीवाः प्रतिपश्येम सूर्य ॥ ऋ, १०।३७।७

हे (सूर्य) सूर्य ! (सुमनसः सुचक्षसः) उत्तम मनवाले, उत्तम दृष्टिवाले (प्रजावन्तः अनमीवाः अनागसः) सन्तानवाले, रोग रहित तथा पाप रहित होकर हम (विश्वाहा) सब दिन (त्वा) तेरे आश्रयमें ही रहें, तथा हे (मित्र महः) सबसे महान् मित्र ! (उद्यन्तं त्वा) उदय होते हुए तुझे (ज्योग् जीवाः) चिरकालतक जीनेवाले हम (दिवे दिवे प्रति पश्येम) प्रतिदिन देखें ॥ ७५ ॥

मनुष्य प्रतिदिन सूर्य प्रकाशका सेवन करे, जिससे मनुष्यकी आयु बढती है।

सौचीकोऽग्निः । देवाः । त्रिष्टुप् ।

७६ प्रयाजान्मे अनुयाजाँश्च केवलान्
ऊर्जस्वन्तं हविषो दत्त भागम् ।
घृतं चापां पुरुषं चौषधीनां अग्नेश्च दीर्घमायुरस्तु देवाः॥

ऋ. १०।५१।८

हे (देवाः) देवो ! (मे) मुझे (केवलान् प्रयाजान् अनुयाजान् च) केवल प्रयाजों और अनुयाजोंको तथा (हविषः ऊर्जस्वन्तं भागं दत्त) हविके उत्तम भागको दो, (अपां च घृतं) पानी तथा घी (औषधीनां पुरुषं) औषधियोंसे उत्पन्न होनेवाले पुरुषत्वको मुझे दो तथा (अग्नेः दीर्घायुः अस्तु) अग्निसे दीर्घायु मेरे लिए प्राप्त हो ॥ ७६ ॥

यज्ञ करना, उत्तम हवि समर्पण करना, घीका हवन करना इससे पुरुषत्व बढता है। ऐसी औषधियां हवनमें डालनी चाहिये कि जिनसे पौरुषकी शक्ति बढ सकती है। यह यज्ञाग्नि मनुष्यकी आयु दीर्घ करता है।

सौचीकोऽग्निः । देवाः । त्रिष्टुप् ।

७७ अद्य यज्ञस्य जिह्वामविदाम गुह्याम् ।
स आयुरागात्सुरभिर्वसानः ॥ ऋ. १०।५३।३

'हमने (अद्य) आज (यज्ञस्य गुह्यां जिह्वां अविदाम) यज्ञको गुप्त विद्याको जान लिया है (सः) वह यज्ञ देव (सुरभिः) सुगंधित होकर तथा (आयुः वसानः) दीर्घ आयुको धारण करता हुआ (आगात्) हमारे पास आता है ॥ ७७ ॥

यज्ञकी गुह्य विद्या यह है कि अग्नि वायुको सुगंधित करता है, शुद्ध करता है, जिससे यज्ञ कर्ता लोग दीर्घ आयुको प्राप्त करते हैं।

बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनः । मन–आवर्तनम् । अनुष्टुप् ।

७८ यत्ते दिवं यत्पृथिवीं मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आ वर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥ ऋ. १०।५८।२

(ते) तेरा (यत् मनः) जो मन (दिवं पृथिवीं दूरकं जगाम) द्युलोक अथवा पृथ्वीलोकमें दूर चला गया है, (ते तत्) तेरे उस मनको (इह क्षयाय जीवसे) इस संसारमें रहने एवं जीनेके लिए (आवर्तयामसि) लौटाते हैं ॥ ७८ ॥ (१०।५८ का पूरा सूक्त)

मन संसारमें जिधर चाहे उधर न भटकता रहे। यहां इस जीवनमें दीर्घ काल तक जीनेके लिये उस मनको लौटाकर लाना चाहिये और एक अच्छे कार्यमें लगाना चाहिये। ससे आयु दीर्घ होती है।

बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । निर्ऋतिः । त्रिष्टुप् ।

७९ प्र तार्यायुः प्रतरं नवीयः स्थातेव क्रतुमता रथस्य ।
अध च्यवान उत् तवीत्यर्थं परातरं सु निर्ऋतिर्जिहीताम् ॥
ऋ. १०।५९।१

(स्थातारा क्रतुमता रथस्य इव) रथ पर बैठनेवाले जिस प्रकार अपनी कर्म शक्तिसे रथको आगे बढाते हैं, उसी प्रकार हमारी (नवीयं आयुः) नई आयु (प्रतरं प्रतारो बहुत अधिक बढे। (अध) इसके बाद (च्यवानः अर्थं उत् तवीति) वृद्ध भी इस आयु रूपी धनको प्राप्त करे। (निर्ऋतिः) बुरी दशा या अधोगति (परातरं सु जिहीताम्) बहुत दूर चली जावे ॥ ७९ ॥

तरुण अपनी आयुको बढावें जैसे रथ पर बैठनेवाले रथको सुरक्षित रखते हैं, वैसे देह रूपी रथको देहधारी सुरक्षित रखें। वृद्ध लोग भी अपनी आयुको बढानेका प्रयत्न करें। अपनी अधोगति कोई न करे। अधोगतिको सब लोग दूर करें।

बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । असुनीतिः । त्रिष्टुप् ।

८० असुनीते मनो अस्मासु धारय जीवातवे सु प्र तिरा नु आयुः।
रारन्धि नः सूर्यस्य सन्दृशि घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व ॥

ऋ. १०।५९।५

हे (असु-नीते) प्राण विद्याके ज्ञाता ! (अस्मासु मनः धारय) हम सबमें मननकी शक्ति रखो (जीवातवे नः आयुः सु प्रतिर) जीनेके लिए हमारी आयु दीर्घ करो तथा (नः सूर्यस्य सन्दृशि रारन्धि) हमें सूर्यके उत्तम प्रकाशमें आनंदित रखो तथा (त्वं घृतेन तन्वं वर्धयस्व) तुम घीसे अपने शरीरको पुष्ट करो ॥ ८० ॥

प्राणको शरीरमें सुरक्षित रखनेकी विद्या जाननेवाले विद्वान् हमारेमें मनन शक्ति सुरक्षित रहे ऐसी शिक्षा हमें दें । दीर्घ जीवन प्राप्त करनेके लिये हमारी आयु सुदीर्घ करें । सूर्य प्रकाशमें रहनेमें हमें आनंद प्राप्त हो । गायका घी खाकर शरीरको पुष्ट करें ।

बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः । असुनीतिः । त्रिष्टुप् ।

८१ असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम् ।
ज्योक्पश्येम सूर्यमुच्चरन्तं अनुमते मृळया नः स्वस्ति ॥

ऋ. १०।५९।६

हे (असु-नीते) प्राण विद्याको जाननेवाले ! (अस्मासु) हमें (इह) इस संसारमें (चक्षुः प्राणं पुनः धेहि) इन्द्रियोंकी शक्ति और प्राण फिरसे दो और (नः भोगं धेहि) हमें भोग प्रदान करो । (उत् चरन्तं) उदय होते हुए (सूर्यं) सूर्यको (ज्योक् पश्येम) दीर्घ काल तक देखें । हे (अनु-मते) अनुकूल बुद्धि देनेवाले विद्वान् ! (नः स्वस्ति मृळय) हमें कल्याण तथा सुख प्रदान कर ॥ ८१ ॥

हमें इंद्रियोंकी शक्ति और प्राण शक्ति उत्तर आयुमें भी पुनः अच्छी तरहसे प्राप्त हो । हम इंद्रियोंसे भोग भोगनेकी शक्ति प्राप्त करें । भोग

भोगते रहें ऐसा नहीं कहा, पर भोग भोगनेकी शक्ति शरीरमें रहे अर्थात् तारुण्यकी शक्ति शरीरमें रहे ऐसा कहा है। इस शक्तिके शरीरमें रहनेके अनुकूल जो बुद्धि है वह हमें प्राप्त हो। इस तरह हमारा जीवन सुखदायी होकर हमें दीर्घ आयु प्राप्त हो। सूर्यका दर्शन हम करते रहें।

बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः। जीवः। पंक्तिः।

८२ यथा युगं वरत्रया नह्यन्ति धुरुणाय कम्।
एवा दाधार ते मनो जीवातवे न मृत्यवेऽथो अरिष्टतातये॥

ऋ. १०।६०।८

(यथा धुरुणाय) जिस प्रकार ढोनेके लिए (युगं) रथके जुएको (वरत्रया नह्यन्ति) रस्सियोंसे बांधते हैं, (एवा) उसी प्रकार (ते मनः) तेरे मनको (जीवातवे) दीर्घ जीवनके लिए तथा (अरिष्टतातये) अनारोग्य दूर करनेके लिए (दाधार) धारण करता हूँ, (न मृत्यवे) मृत्युके लिए नहीं॥ ८२॥

मनमें दीर्घ जीवन प्राप्त करने और अनारोग्य दूर करनेका विचार सुस्थिर करना चाहिये। मरनेका विचार मनमें नहीं धरना चाहिये। इससे मन बलवान् बनता है और ऐसा बलवान् बना मन दीर्घायु प्राप्त करता है। 'मैं मरूंगा' ऐसा विचार मनमें रखनेसे मन निर्बल बनता है और आयुको कम कर देता है।

बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः। जीवः। पंक्तिः।

८३ यथेयं पृथिवी मही दाधारेमान् वनस्पतीन्।
एवा दाधार ते मनो जीवातवे न मृत्यवेऽथो अरिष्टतातये॥

ऋ. १०।६०।९

(यथा इयं मही पृथिवी) जिस प्रकार इस विशाल पृथ्वीने (इमान् वनस्पतीन् दाधार) इन वनस्पतियोंको धारण किया है, (एव) इसी प्रकार (ते मनः) तेरे मनको मैं (जीवातवे अथो अरिष्टतातये

वाधार) जीनेके लिए और रोगोंके नाशके लिए धारण करता हूं (न मृत्यवे) न कि मृत्युके लिए ॥ ८३ ॥

दीर्घ जीवनके और विनाशको दूर करनेके विचार मनमें धारण करके मनमें सुस्थिर करने चाहिये। मरनेके विचार मनसे दूर हटाने चाहिये।

बन्धुःश्रुतबन्धुर्विप्रबन्धुर्गौपायनाः। जीवः। अनुष्टुप्।

८४ यमादहं वैवस्वतात् सुबन्धोर्मन आभरम्।
जीवातवे न मृत्यवेऽथो अरिष्टतातये ॥ ऋ. १०।३०।१०

(वैवस्वतात् यमाद्) विवस्वान्के पुत्र यमसे (अहं) मैं (सुबन्धोः मनः) सुबन्धुके मनको (जीवातवे अथो अरिष्टतातये आभरम्) जीनेके विचारोंसे तथा निरोग रहनेके विचारोंसे भरपूर भर दिया है। (न मृत्यवे) मृत्युके विचारोंसे नहीं ॥ ८४ ॥

मनको दीर्घ जीवनके विचारोंसे तथा नीरोगिताके विचारोंसे भरपूर भर कर रखना चाहिये। इससे दीर्घ जीवन प्राप्त होगा। मरनेके विचार मनमें नहीं भरने चाहिये। क्योंकि इससे आयु क्षीण होती है।

नाभानेदिष्टो-मानवः। सावर्णेर्दानम्। त्रिष्टुप्।

८५ सहस्रदा ग्रामणीर्मा रिषन्मनुः सूर्येणास्य यतमानैतु दक्षिणा।
सावर्णेर्देवाः प्र तिरन्त्वायुर्यस्मिन्नश्रान्ता असनाम वाजम् ॥
ऋ. १०।६२।११

(सहस्रदा ग्रामणीः मनुः) हजारों दान देनेवाला तथा गांवका नेता मनु (मा रिषन्) न मरे (अस्य दक्षिणा सूर्येण यतमान एतु) इसके दान सूर्यके प्रकाशके समान सर्वत्र फैलें, (अ-श्रान्ताः) कार्य करके भी न थकनेवाले हम (यस्मिन्) जिस मनुके यज्ञमें (वाजं असनाम) अन्नको प्राप्त करते हैं, उस (सावर्णेः आयुः) सवर्णिके पुत्र मनुकी आयुको (देवाः प्रतिरन्तु) देवता बढावें ॥ ८५ ॥

मनुः— मननशील, विचारशील। सहस्रों प्रकारके दान देनेवाला यज्ञ कर्ता मनु अपनी आयु कम न करे, परंतु बढावे। यज्ञसे आयु बढती है। यज्ञ करनेवाले मनुकी आयुको देव दीर्घ करें।

गयः प्लातः। विश्वे देवाः। जगती।

८६ नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो
दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥ ऋ. १०।६३।४

(न-चक्षसः, अ-निमिषन्तः) मनुष्योंके कार्योंको देखनेवाले, आंखें न मूंदनेवाले अर्थात् आलस्य रहित (ज्योतीरथाः अहिमायाः अनागसः) तेजस्वी रथवाले, असुरोंके कपटोंको जाननेवाले, स्वयं निष्पाप (देवासः) देवोंने (अर्हणा) उपासनाके द्वारा (बृहत् अमृतत्वं आनशुः) बडे अमरपनको प्राप्त किया, तथा (स्वस्तये) अपने कल्याणके लिए (दिवः वर्ष्माणं वसते) द्युलोकके ऊंचे भाग पर निवास किया ॥ ८६ ॥

कर्मोंका अच्छी तरह निरीक्षण करना अर्थात् कर्ममें दोष न रहने न देना, आलस्य न करना, प्रकाशमें रहना, शत्रुके कपटोंको जानना, स्वयं निष्पाप रहना, उपासना करना आदिसे ज्ञानियोंने बडी दीर्घ आयु प्राप्त की थी। दीर्घ आयु प्राप्त करनेके ये उपाय हैं।

सावित्री सूर्या ऋषिका। चन्द्रमाः। त्रिष्टुप्।

८७ नवोनवो भवति जायमानोऽह्नां केतुरुषसामेत्यग्रम्।
भागं देवेभ्यो वि दधात्यायन् प्र चन्द्रमास्तिरते दीर्घमायुः॥
ऋ. १०।८५।१९

(जायमानः नवः नवः भवति) प्रकट होता हुआ नया नया होता है, (अह्नां केतुः) एक दिनोंका बतानेवाला है, (उषसां अग्रं एति) उषाओंके आगे चलता है (आयन् देवेभ्यः भागं विदधाति) वह आता

हुआ देवोंके लिए भाग समर्पित करता है। तथा (चन्द्रमाः दीर्घं आयुः प्रतिरते) चन्द्रमा दीर्घायु प्रदान करता है ॥ ८७ ॥

शुक्ल पक्षमें प्रतिदिन नया जीवन प्राप्त करनेसे चन्द्रमा बढता है। और कृष्ण पक्षमें वही जीवनकी ओर ध्यान न देनेसे घटता है। नया जीवन प्रतिदिन प्रयत्न करने पर ही प्राप्त होता है। वैसे ही जो लोग प्रतिदिन दीर्घ जीवन प्राप्तिका प्रयत्न करते रहेंगे वे दीर्घायु होंगे।

सावित्री सूर्या ऋषिका। सूर्या सावित्री। अनुष्टुप्।

८८ पुनः पत्नीमग्निरदादायुषा सह वर्चसा।
दीर्घायुरस्या यः पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥

ऋ. १०।८५।३९

(अग्निः) अग्निदेव (आयुषा वर्चसा सह) आयु और वर्चस्के साथ (पत्नीं) पत्नीको (पुनः अदात्) फिर देवे, और (अस्याः यः पतिः) इसका जो पति है, वह (दीर्घायुः) दीर्घ आयुवाला होकर (शतं शरदः जीवाति) सौ वर्ष जीवे ॥ ८८ ॥

पति और पत्नी दीर्घ जीवनकी प्राप्तिके लिये प्रयत्न करें। एक दूसरेकी इस प्रयत्नमें सहायता दें और दोनों दीर्घायु हों।

ऐलः पुरुरवाः। उर्वशी। त्रिष्टुप्।

८९ विद्युन्न या पतन्ती दविद्योद्धरन्ती मे अप्या काम्यानि।
जनिष्टो अपो नर्यः सुजातः प्रोर्वशी तिरत दीर्घमायुः।

ऋ. १०।९५।१०

(या) जो उर्वशी (विद्युत् न) बिजलीके समान (पतन्ती) चलती हुई (दविद्योत्) प्रकाशित होती है, तथा (मे अप्या काम्यानि) मेरी अभिलाषाओंको (उद्धरन्ती) पूर्ण करती है, यदि वह मेरे लिए (अपः नर्यः) कर्मशील, मनुष्योंके हित करनेवाले (सुजातः) उत्तम

पुत्रको (जनिष्ट) जन्म देवे तो वह (उर्वशी दीर्घं आयुः प्रतिरत) उर्वशी मेरी आयुको दीर्घ करे ॥ ८९ ॥

पुत्र कर्म करनेवाला उद्योगी, मानवोंके हितका कार्य करनेवाला हो और दीर्घ आयु प्राप्त हो ।

अष्टको वैश्वामित्रः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् ।

९० अपो महीरमिशस्तेरमुञ्चोऽजागरास्वधि देव एकः ।
इन्दु यास्त्वं वृत्रतूर्ये चकर्थ ताभिर्विश्वायुस्तन्वं पुपुष्याः ॥

ऋ. १०।१०४।९

हे (इन्द्र) इन्द्र ! तू जिन (महीः अपः) महान् जलोंको (अमिशस्तेः अमुंचः) शत्रुसे छुडाता है, (आसु अधि) उन पर (एकः देवः) तू अकेला देव ही (अजागः) अधिकार करता है, (याः) जिन जलोंको (त्वं) तू (वृत्रतूर्ये) संग्राममें (चकर्थ) प्राप्त करता है, (ताभिः) उनसे तू (तन्वं पुपुष्याः) अपने शरीरको पुष्ट कर तथा (विश्वायुः) सम्पूर्ण आयुका उपभोग कर ॥ ९० ॥

जलका उत्तम प्रयोग करनेसे दीर्घ आयु प्राप्त होती है। जलचिकित्साके प्रयोग प्रसिद्ध हैं।

भूतांश काश्यपः । अश्विनौ । त्रिष्टुप् ।

९१ सृण्येव जर्भरी तुर्फरीतू नैतोशेव तुर्फरी पर्फरीका ।
उदन्यजेव जेमना मदेरू ता मे जराय्वजरं मरायु ॥

ऋ. १०।१०६।६

(सृण्या इव) जिस प्रकार हाथीको अंकुशसे अधिकारमें रखा जाता है, उसी प्रकार (जर्भरी) सबको पुष्ट करनेवाले (तुर्फरीतू) रोगोंको मारनेवाले (नैतोशा इव तुर्फरी पर्फरीका) घातकको मारनेके समान मारने और फाडनेवाले (उदन्यजा इव) पानीमें होनेवालेके समान निर्मल (जेमना) जयशील (मदेरू) आनन्द देनेवाले (ता) वे दोनों अश्विनौ

(जराय मराय मे) अत्यधिक वृद्ध और मरणशील मुझे (अ-जरं) बुढापेसे रहित करें ॥ ९१ ॥

वैद्य वृद्धोंको आयुर्वेदकी उपाय योजनासे तरुण बनावें। पुष्टीकारक, रोग दूर करनेवाले, घात करनेवालोंको दूर करनेवाले, मनको आनंदमें रखनेवाले प्रयोग किये जांय और दीर्घ आयुकी सिद्धि प्राप्त की जाय।

दिव्य आंगिरसः; दक्षिणा वा प्राजापत्या। दक्षिणा दक्षिणादातारो वा। त्रिष्टुप्।

९२ उच्चा दिवि दक्षिणावन्तो अस्थुर्ये अश्वदाः सह ते सूर्येण।
हिरण्यदा अमृतत्वं भजन्ते वासोदाः सोम प्रतिरन्त आयुः॥

ऋ. १०।१०७।२

(दक्षिणावन्तः) धन देनेवाले (उच्चा दिवि अस्थुः) ऊंचे द्युलोक में बैठते हैं, (अश्व-दाः) जो घोडा देनेवाले हैं (ते) वे (सूर्येण सह) सूर्यके साथ बैठते हैं (हिरण्यदाः) सोना देनेवाले (अमृतत्वं भजन्ते) अमरताको प्राप्त होते हैं, तथा हे (सोम) सोम! (वासोदाः) आश्रय देनेवालोंकी (आयुः प्रतिरन्ते) आयु बढती है ॥ ९२ ॥

दान देनेसे, सूर्य प्रकाशके सेवनसे आयु बढती है।

वाष्टिहव्य उपस्तुतः। अग्निः। त्रिष्टुप्।

९३ ऊर्जो नपात्सहसावन्निति त्वोपस्तुतस्य वन्दते वृषा वाक्।
त्वां स्तोषाम त्वया सुवीरा द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः॥

ऋ. १०।११५।८

हे (ऊर्जः नपात् सहसावन्) बलके पुत्र तथा स्वयं बलशाली अग्ने! (उपस्तुतस्य) मुझ उपस्तुत ऋषिकी (वृषा वाक्) बलयुक्त वाणी (त्वा इति) तेरी ही (वन्दते) स्तुति करती है। हम (त्वां स्तोषाम) तुझे ही सन्तुष्ट करते हैं, (त्वया) तेरी कृपासे हम (सु-वीराः) उत्तम सन्तानवाले होकर (प्रतरं द्राघीयः आयुः दधानाः) अत्यन्त दीर्घ आयुको धारण करनेवाले हों ॥ ९३ ॥

प्रभुकी स्तुति करनेसे आयु दीर्घ होती है। इस स्तुतिमें मन लगा रहना चाहिये अर्थात् उसमें तल्लीन होना चाहिये।

हिरण्यगर्भः प्राजापत्यः । ऋः (प्रजापतिः) । त्रिष्टुप् ।

९४ य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य छाया अमृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥
ऋ. १०।१२१।२

(यः आत्मदा बलदा) जो आत्मशक्ति और शारीरिक शक्तिका देनेवाला है, (यस्य विश्व उपासते) जिसकी सब उपासना करते हैं, (देवाः यस्य प्रशिषं) देव गण जिसकी आज्ञाका पालन करते हैं, (यस्य छाया अमृतं) जिसकी छायामें रहनेसे अमरपन प्राप्त होता है (यस्य मृत्युः) जिसका त्याग करनेसे मृत्यु होती है, (कस्मै देवाय हविषा विधेम) इस सुखरूप देवको छोडकर हम किस दूसरेकी उपासना करें ॥ ९४ ॥

प्रभुकी एक निष्ठासे उपासना करनेसे दीर्घ आयु प्राप्त होती है।

भरद्वाजः । विश्वेदेवाः । अनुष्टुप् ।

९५ उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः ।
उतागश्चक्रुषं देवा देवा जीवयथा पुनः ॥ ऋ. १०।१३७।७

हे देवो ! (अवहितं) नीचे गिरे हुए मनुष्यको (पुनः उत् नयथ) फिर ऊपर उठाओ (आगः चक्रुषं उत) पाप करनेवालेको भी उठाओ, तथा (पुनः जीवयथा) उसे फिर दीर्घ जीवन प्रदान करो ॥ ९५ ॥

यदि पापमें प्रवृत्ति हुई तो उससे निवृत्त हो जाओ। यदि गिरावट हुई तो फिर ऊपर उठो और पुनः दीर्घ जीवन प्राप्त करनेकी साधना करो।

तार्क्ष्यः सुपर्णः, यामायनः ऊर्ध्वकृशनो वा । इन्द्रः । गायत्री ।

९६ अयं हि ते अमर्त्य इन्दुरत्यो न पत्यते ।
दक्षो विश्वायुर्वेधसे ॥ ऋ. १०।१४४।१

हे इन्द्र ! (ते) तेरा (अयं अ-मर्त्यः दक्षः इन्दुः) यह अमर,

+

तथा बल प्रदान करनेवाला सोम (विश्वायुः) मनुष्योंको सम्पूर्ण आयु-का प्रदान करनेवाला है ॥ ९६ ॥

सोम रस पीनेवालेको दीर्घायु करता है।

तार्क्ष्यः सुपर्णो यामायनः ऊर्ध्वकृशनो वा। इन्द्रः। सतीबृहती।

९७ यं ते श्येनश्चारुमवृकं पदाभरदरुणं मानमन्धसः।
एना वयो वि तार्यायुर्जीवसे एना जागार बन्धुता ॥

ऋ. १०।१४४।५

हे इन्द्र! (ते) तेरे लिए (श्येनः) श्येन पक्षी (यं चारुं अ-वृकं) जिस सुन्दर, कुटिलता रहित (अरुणं) लाल रंगके (अन्धसः मानं) अन्नके तुल्य सोमको (पदा) पैरोंसे चलकर ही (आभरत्) ले आया (एना) उस सोमके द्वारा (जीवसे) जीनेके लिए (वयः आयुः वि तारी) अन्न तथा आयुको बढा, (एना) इसी सोमके कारण (बन्धुता जागार) तुम दोनोंमें भाईचारा है ॥ ९७ ॥

सोमरस आयुको बढाता है।

तार्क्ष्यः सुपर्णः यामायनः ऊर्ध्वकृशनो वा। इन्द्रः। विष्टारपंक्तिः।

९८ एवा तदिन्द्र इन्दुना देवेषु चिद्धारयाते महि त्यजः।
क्रत्वा वयो वि तार्यायुः सुक्रतो क्रत्वायमस्मदा सुतः ॥

ऋ. १०।१४४।६

(एव) इस प्रकार (इन्द्रः) इन्द्र (इन्दुना) सोमसे तृप्त होकर (देवेषु) सब देवोंमें (महि चित् त्यजः) सबसे अधिक तेजको (धारयाते) धारण करता है, हे (सु-क्रतो) उत्तम कर्म करनेवाले इन्द्र! (क्रत्वा) यज्ञकी सहायतासे (अयं) यह सोम (अस्माभिः सुतः) हमारे द्वारा निचोडा गया है, अतः हमारे इस (क्रत्वा) कामसे सन्तुष्ट होकर (वयः आयुः वि तारी) अन्न और आयुको बढा ॥ ९८ ॥

सोम उत्तम अन्न है और आयु बढानेवाला है।

प्राजापत्यो यक्ष्मनाशनः । इन्द्राग्नी, राजयक्ष्मघ्नं वा । त्रिष्टुप् ।

९९ मुंचामि त्वा हविषा जीवनाय कं
अज्ञातयक्ष्मादुत राजयक्ष्मात् ।
ग्राहिर्जग्राह यदि वैतदेनं
तस्या इन्द्राग्नी प्र मुमुक्तमेनम् ॥ ऋ. १०।१४१।१

हे मनुष्य ! (कं जीवनाय त्वा) सुखपूर्वक जीनेके लिए तुझे मैं (राजयक्ष्मात् उत अज्ञात-यक्ष्मात्) राजयक्ष्मा और अज्ञात रोगसे (हविषा) यज्ञ द्वारा (मुंचामि) छुडाता हूं। (यदि वा ग्राहिः जग्राह) अथवा शरीरको जकडनेवाले रोगने तुझे पकड लिया है तो (तस्याः) उस रोगसे भी (एनं) इस रोगीको (इन्द्राग्नी प्र मुमुक्तं) इन्द्र और अग्नि छुडावें ॥ ९९ ॥

यज्ञाग्निमें योग्य औषधियोंका हवन करनेसे, और उस यज्ञाग्निके समीप बैठे रहनेसे रोगीके राजयक्ष्मा तथा अन्य रोग दूर होते हैं। और अन्य जकडनेवाले रोग भी दूर होते हैं और दीर्घ आयु प्राप्त होती है।

प्राजापत्यो यक्ष्मनाशनः । इन्द्राग्नी, राजयक्ष्मघ्नं वा । त्रिष्टुप् ।

१०९ यदि क्षितायुर्यदि वा परेतो यदि मृत्योरन्तिकं नीत एव ।
तमा हरामि निर्ऋतेरुपस्थादस्पार्षमेनं शतशारदाय ॥
ऋ. १०।१६१।२

(यदि क्षितायुः) यदि मनुष्यकी आयु क्षीण हो जाए (यदि वा परेतः) अथवा यदि रोगी वशसे बाहर चला जाए (यदि मृत्योः अन्तिकं एव नीतः) यदि मृत्युके बिलकुल समीप भी पहुंच जाए तो भी (निर्ऋतेः उपस्थात्) बुरी अवस्थासे (तं आ हरामि) उसे बाहर खींच लाऊं और (एनं शतशारदाय अस्पार्षम्) इसे सौ वर्षके लिए बल युक्त करूं ॥ १०० ॥

यदि रोगी बिलकुल मरनेकी अवस्था तक पहुंचा हो, तो भी उसको आरोग्य प्राप्त हो सकता है और वह दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है।

प्राजापत्यो यक्ष्मनाशनः । इन्द्राग्नी राजयक्ष्मघ्नं वा । त्रिष्टुप् ।

१०१ सहस्राक्षेण शतशारदेन शतायुषा हविषाहार्षमेनम् ।
शतं यथेमं शरदो नयातीन्द्रो विश्वस्य दुरितस्य पारम् ॥
ऋ. १०।१६१।३

मैं (एनं) इस मनुष्यको (हविषा) यज्ञके द्वारा (शतशारदेन) सौ शरदसे युक्त (शत-आयुषा) सौ वर्षकी आयुसे युक्त, (सहस्राक्षेण) सम्पूर्ण इन्द्रियोंसे युक्त करके (आ हार्षम्) जीवनमें लाता हूं । (यथा इन्द्रः) जिससे इन्द्र भी (इमं) इस मनुष्यको (शतं शरदः) सौ वर्ष तक (विश्वस्य दुरितस्य पारं) सम्पूर्ण दुःखोंसे परे (नयाति) ले जावे ॥ १०१ ॥

योग्य हवनसे मनुष्य रोगोंसे मुक्त होकर सौ वर्ष तक जीवित रह सकता है ।

प्राजापत्यो यक्ष्मनाशनः । इन्द्राग्नी राजयक्ष्मघ्नं वा । त्रिष्टुप् ।

१०२ शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमु वसन्तान् ।
शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः ॥
ऋ. १०।१६१।४

यह मनुष्य (वर्धमानः) समृद्ध होता हुआ (शतं शरदः शतं हेमन्तान्, शतं वसन्तान्) सौ शरद, हेमन्त और वसन्त (जीव) जीवे। तथा (शतायुषा हविषा) सौ वर्षकी आयु प्रदान करनेवाले यज्ञके द्वारा (इन्द्राग्नी, सविता, बृहस्पतिः) इन्द्र, अग्नि, सविता और बृहस्पति भी (इमं) इसे (शतं पुनः दुः) सौ वर्षकी आयु दें ॥ १०२ ॥

योग्य पदार्थोंके हवनसे मनुष्य शतायुषी होता है ।

प्राजापत्यो यक्ष्मनाशनः । इन्द्राग्नी, राजयक्ष्मघ्नं वा । अनुष्टुप् ।

१०३ आहार्षं त्वाविदं त्वा पुनरागाः पुनर्नव ।
सर्वाङ्गसर्वं ते चक्षुः सर्वमायुश्च ते विदम् ॥
ऋ. १०।१६१।५

हे मनुष्य ! (त्वा आहार्षं) तुझे मैं रोगसे मुक्त करता हूं, (त्वा आविदं) तुझे बल प्राप्त कराता हूं, तू (पुनः आगाः) फिर समर्थ हो जा, हे (पुनः नव) फिरसे नये हो जानेवाले मनुष्य ! (ते) तुझे (सर्वाङ्गसर्वं चक्षुः) सब अंग और सब इन्द्रियें तथा (सर्वं आयुः) सम्पूर्ण आयु (विदं) प्राप्त कराता हूं ॥ १०३ ॥

रोगीका रोग दूर करके उसको पूर्ण आयु प्राप्त कराई जा सकती है ।

वातायन उलः । वायुः । गायत्री ।

१०४ वात आ वातु भेषजं शम्भु मयोभु नो हृदे ।
प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥ ऋ. १०।१८६।१

वह (वातः) वायु (भेजषं) औषधि रूप होकर (शं-भु) कल्याणकारक एवं (मयः भु) सुखकारक होकर (नः आवातु) हमें प्राप्त हो तथा (नः आयूंषि प्र तारिषत्) हमारी आयुको बढावे ॥ १०४ ॥

वायु शुद्ध रहा तो उसके सेवनसे आयु दीर्घ हो सकती है ।

वातायन उलः । वायुः । गायत्री

१०५ उत वात पिताऽसि नः उत भ्रातोत नः सखा ।
स नो जीवातवे कृधि ॥ ऋ. १०।१८६।२

हे (वात) वायुदेव ! तू (नः पिता असि) हमारा पिता है, (उत नः भ्राता उत सखा) और हमारा भाई तथा मित्र है, (सः) वह तू (नः जीवातवे कृधि) हमारी आयुको दीर्घ कर ॥ १०५ ॥

वायु सबका माता, पिता, भाई और मित्र है । वह दीर्घजीवन देता है । योग्य रीतिसे मनुष्य वायुका सेवन करें ।

वातायन उलः । वायुः । गायत्री ।

१०६ यदुदो वात ते गृहेऽमृतस्य निधिर्हितः ।
ततो नो देहि जीवसे ॥ ऋ. १०।१८६।३

हे (वात) वायुदेव ! (ते गृहे) तेरे घरमें (यत् अदः अमृतस्य निधिः हितः) जो यह अमृतका खजाना रखा हुआ है, (ततः जीवसे नः देहि) उसमेंसे दीर्घ जीवनके लिए हमें दे ॥ १०६ ॥

वायुमें अमरत्वका खजाना है। वायुके सेवनसे वह अमृत मनुष्यको प्राप्त होता है। प्राणायामसे प्राप्त होता है। दीर्घायु चाहनेवाले वायुका योग्य रीतिसे सेवन करें और वह अमृत प्राप्त करें।

यजुर्वेद मंत्र

परमेष्ठी प्राजापत्यः, देवाः प्राजापत्यः, प्रजापतिर्वा ऋषिः । गौः । निचृत् पंक्तिः।

१०७ सा विश्वायुः सा विश्वकर्मा सा विश्वधायाः यजु. १।४

(सा विश्वायुः) वह सम्पूर्ण आयुको प्रदान करनेवाली है, (सा विश्वकर्मा) वह सम्पूर्ण शुभ कर्मोंको करनेवाली है, तथा (सा विश्वधायाः) वह सम्पूर्ण विश्वको धारण करनेवाली है ॥ १०७ ॥

पूर्ण आयु, पूर्ण पुरुषार्थ करनेकी शक्ति और पूर्ण रीतिसे कार्य भार धारण करनेकी शक्ति मनुष्यको अपनेमें प्राप्त करनी चाहिये।

परमेष्ठी प्राजापत्यः, देवाः प्राजापत्या, प्रजापतिर्वा ऋषिः। अग्निः। निचृत् पंक्तिः।

१०८ अस्थूरि णौ गार्हपत्यानि सन्तु शतं हिमाः ।
सूर्यस्यावृतमन्वावर्ते ॥ यजु. २।२७

हे अग्ने ! (नौ गार्हपत्यानि) हमारे गृहस्थीके कर्तव्य (शतं हिमाः) सौ वर्ष तक (अस्थूरि) निर्विघ्न चलते रहें, मैं (सूर्यस्य आवृतं अनु आवर्ते) सूर्यके व्रतका अनुसरण करता हूँ ॥ १०८ ॥

मेरे गृहस्थ धर्मके कर्तव्य निर्विघ्न रीतिसे चलते रहें। सूर्यके समान मैं तेजस्वी बनकर नियम पूर्वक प्रकाशता रहूं और सौ वर्षकी आयु प्राप्त करके आनन्दसे गृहस्थके कर्तव्य करता रहूं।

प्रजापतिः । अग्निः । गायत्री ।

१०९ अग्न आयूंष्यषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः ।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ यजु. १९।३८; ३५।१२

हे अग्ने ! (नः आयूंषि पवसे) हमें दीर्घायु प्रदान करनेके लिए (ऊर्जं इषं च आसुव) बल तथा अन्न प्रदान कर, और (दुत्-शुनां आरे बाधस्व) दुष्ट पुरुषोंको दूर पर ही रोक दे ॥ १०९ ॥

उत्तम अन्न, पौरुष प्रयत्न करते रहनेका सामर्थ्य और दीर्घ आयु हमें प्राप्त हो और हम दुष्टोंको दूर करके आनन्दसे इस जगत्में अपने कर्तव्य करते रहें ।

प्रजापतिः । श्रीः । अनुष्टुप् ।

११० ये समानाः समनसो जीवा जीवेषु मामकाः ।
तेषां श्रीर्मयि कल्पतामस्मिँल्लोके शतं समाः ॥
यजु. १९।४६

(जीवेषु) मानव समाजमें (समानाः समनसः) समान मन व समान ज्ञानवाले (ये मामकाः जीवाः) जो मेरे सम्बन्धी जीवित हैं (तेषां श्रीः) उनको तेजस्विता व सम्पत्ति प्राप्त हो (मयि) और मेरे पास भी ऐश्वर्य हो तथा (अस्मिन् लोके) इस संसारमें (शतं समाः) सौ वर्ष तक (कल्पताम्) हम सब जीवित रहें ॥ ११० ॥

मानव समाजमें समान विचार करनेवाले और समान ज्ञानवाले मनुष्यों का संगठन हो, उनकी तेजस्विता फैले और उनको ऐश्वर्य प्राप्त हो । वैसी सम्पत्ति मुझे भी प्राप्त हो और मैं भी वैसा ही तेजस्वी बनूं और इस संसारमें सौ वर्षतक जीवित रह कर अपने ज्ञानके तेजको फैलाता रहूं ।

प्रजापतिः । अश्विसरस्वतीन्द्राः । जगती ।

१११ अंगान्यात्मन् भिषजा तदश्विना
आत्मानमंगैः समधात् सरस्वती ।
इन्द्रस्य रूपं शतमानमायुश्चन्द्रेण ज्योतिरमृतं दधानाः॥
यजु. १९।९३

(तद् भिषजा अश्विना) वे वैद्य अश्विनी (अंगानि आत्मन् सं अधात्) अंगोंको आत्माके साथ जोडते हैं, तथा (सरस्वती) विद्या (आत्मानं अंगैः सं अधात्) आत्माको अंगोंके साथ जोडती है, ये (ज्योतिः अमृतं दधानाः) तेजस्विता और अमरताको धारण करते हुए (चन्द्रेण) मनके द्वारा (इन्द्रस्य रूपं आयुः) जीवात्माके रूप और आयुको (शतमानं) सौ गुना बढाते हैं ॥ १११ ॥

आत्माका इंद्रियोंके साथ और इंद्रियोंका आत्माके साथका संबंध आत्मविद्यासे समझना और अपनी तेजस्विता बढाकर दीर्घ आयुको प्राप्त करना चाहिये । चन्द्रमासे मन और इन्द्रसे जीवात्मा यहां बोधित होता है। मनसे आत्माका ज्ञान प्राप्त करके, दीर्घ आयु प्राप्त करनेका अनुष्ठान करना यह मानवका कर्तव्य है ।

प्रजापतिः । वरुणः । आर्ची उष्णिक् ।

११२ निषसाद धृतव्रतो वरुणः पस्त्यास्वा ।
साम्राज्याय सुक्रतुः ।
मृत्योः पाहि विद्योत्पाहि ॥ यजु. २०।२

(धृतव्रतः सुक्रतुः वरुणः) जिसने व्रतको धारण किया है ऐसा उत्तम कर्म करनेवाला वरुण (साम्राज्याय) राज्य करनेके लिए (पस्त्यासु आ निषसाद) प्रजाओंमें आकर बैठ गया है। हे वरुण ! तू हमारी (मृत्योः पाहि) मृत्युसे रक्षा कर, हमें (विद्योत्पाहि) विनाशकारी शस्त्रोंसे बचा ॥ ११२ ॥

धर्मानुष्ठानके व्रतोंका पालन करना, उत्तम कर्तव्य कर्म करना इससे मनुष्य श्रेष्ठ बनता है। यह श्रेष्ठ बन कर प्रजाजनोंकी विद्वान सभामें जा कर सन्मानके स्थानपर बैठता है और साम्राज्य चलाता है। यह मृत्युसे अपने आपको बचावे और विनाशक वस्तुओंसे अपना संरक्षण करे और दीर्घ आयु प्राप्त करे।

प्रजापतिः। निष्कं। प्राजापत्यानुष्टुप्।

११३ तेजोऽसि शुक्रममृतमायुष्पा आयुर्मे पाहि ॥ यजु. २२।१

हे सविता देव! तू (तेजः, शुक्रं, अमृतं असि) तेज, बल और अमृत है, तथा (आयुष्पाः) सबके आयुओंका पालक है, अतः (मे आयुः पाहि) मुझे दीर्घ जीवन प्रदान कर ॥ ११३ ॥

मनुष्य तेजस्वी और वीर्यवान् बनकर अपनी आयुको बढावे। दीर्घजीवी बनकर रहे। यही मनुष्यका अमर बनना है।

प्रजापतिः। अग्निः। विराट् त्रिष्टुप्।

११४ क्षत्रेणाग्ने स्वायुः सं रभस्व मित्रेणाग्ने मित्रधेये यतस्व।
सजातानां मध्यमस्था एधि राज्ञामग्ने विहव्यो दिदीहीह॥
यजु. २७।५

हे अग्ने! (क्षत्रेण स्व-आयुः संरभस्व) क्षात्रतेजसे अपनी आयुको तेजस्वी कर। (मित्रेण मित्रधेये यतस्व) मित्रके साथ मित्रता बनाये रखनेका प्रयत्न कर, (सजातानां मध्यमस्थाः एधि) अपनी जातिवालोंमें मध्यस्थ होकर बढ तथा (राज्ञां विहव्यः इह दिदीहि) राजाओं द्वारा सम्मान करने योग्य होकर यहां प्रकाशित होकर रह ॥ ११४ ॥

क्षात्र तेजसे शूरवीर होकर अपनी आयुको बढाओ, मित्रोंके साथ मित्र बनकर रहनेका यत्न करो, स्वजातीयोंमें अध्यक्ष होकर रहो और राज पुरुषोंसे समान प्राप्त करके तेजस्वी बनकर रहो।

विरूप ऋषिः । अग्निर्देवता । त्रिष्टुप् ।

११५ आदित्यं गर्भं पयसा समङ्ग्धि
सहस्रस्य प्रतिमां विश्वरूपम् ।
परिवृङ्ग्धि हरसा माभि मंस्थाः
शतायुषं कृणुहि चीयमानः ॥ यजु. १३।४१

(गर्भं) गर्भको (सहस्रस्य प्रतिमां) हजारोंकी प्रतिमा मानकर (विश्व-रूपं आदित्यं) सबका रूप देनेवाले आदित्य रूप गर्भको (पयसा समङ्ग्धि) दूधसे सींचो। हे अग्ने! (हरसा परिवृङ्ग्धि) मुझे अपने तेजसे बढा (मा अभि मंस्थाः) मुझे मत मार, तथा (चीयमानः शतायुषं कृणुहि) मेरी रक्षा करते हुए मुझे सौ वर्षकी आयुवाला बना ॥ ११५ ॥

गर्भं पयसा समंग्धि— गर्भको दूधसे सींचो। गर्भवती स्त्रीको गायका दूध खूब पीना चाहिये, इससे उसका बचा दीर्घायुवाला होता है।

गर्भ हजारोंकी प्रतिमा है, हजारों जन्मोंके संस्कार लेकर गर्भमें बालक आता है, इस कारण वह विश्व रूप आदित्य है। अनेक रूपोंके संस्कार उसमें हैं। इसलिये वह गर्भ तेजस्वी होना चाहिये। निर्बल नहीं होना चाहिये। वह सौ वर्ष जीवित रहे इसलिये उसकी माताको दूध देकर पुष्ट बनाना चाहिये।

वेवश्रवा देववातश्च भारतौ । अग्निः । अनुष्टुप्

११६ ये अग्नयः पांचजन्या अस्यां पृथिव्यामधि ।
तेषामसि त्वमुत्तमः प्र नो जीवातवे सुव ॥ यजु. १८।६७

हे अग्ने! (अस्यां पृथिव्यां अधि) इस पृथ्वी पर (ये पांचजन्याः अग्नयः) जो पंचजनोंका हितकरनेवाली अग्नियां हैं (तेषां त्वं उत्तमः असि) उनमें तुम उत्तम हो, अतः (नः जीवातवे) हमारे दीर्घ जीवनके लिए (प्रसुव) प्रदीप्त हो ॥ ११६ ॥

हवनका यज्ञाग्नि पंचजनोंका लाभ करानेवाला है। इसलिये वह हमारी आयु लंबी करे।

अवत्सारः । अग्निः । निचृद्ब्राह्मी पंक्तिः ।

११७ इन्धानास्त्वा शतं हिमा द्युमन्तं समिधीमहि ।
वयस्वन्तो वयस्कृतं सहस्वन्तः सहस्कृतम् ॥ यजु. ३।१८

हे अग्ने ! (वयस्कृतं सहस्कृतं) अन्न तथा बलको देनेवाले (त्वा) तुझे (वयस्वन्तः सहस्वन्तः) अन्न तथा बलकी इच्छा करनेवाले हम (शतं हिमाः) सौ वर्ष तक (इन्धानाः) प्रदीप्त करते हुए (सं इधीमहि) प्रज्वलित करते रहें ॥ ११७ ॥

हम सौ वर्ष तक जीवित रहें और यज्ञाग्निको प्रदीप्त करके उसमें ऋतुके अनुसार हवन सामग्रीका हवन करते रहें। इससे हमारी आयु बढती रहे।

याज्ञवल्क्यः । अनुमतिः । अनुष्टुप् ।

११८ अन्विदमनुमते त्वं मन्यासै शं च नस्कृधि ।
क्रत्वे दक्षाय नो हिनु प्र ण आयूंषि तारिषः॥ यजु. ३४।८

हे अनुमते ! (त्वं इत् अनु मन्यासै) तू ही हमें अनुकूल बुद्धिवाला बना तथा (नः शं च कृधि) हमारा कल्याण कर, (क्रत्वे दक्षाय नः हिनु) उत्तम बुद्धि तथा बलकी प्राप्तिके लिए हमें प्रेरित कर तथा (नः आयूंषि प्रतारिषः) हमारी आयुओंको खूब बढा ॥ ११८ ॥

अपने मन और बुद्धिको धर्मानुकूल बनाओ और अपना कल्याण करो। कर्म करनेकी और बल बढानेकी प्रेरणा हमें दो और हमारी आयुको दीर्घ करो।

बन्धुः । मनः । विराड् गायत्री ।

११९ आ न एतु मनः पुनः क्रत्वे दक्षाय जीवसे ।
ज्योक् च सूर्यं दृशे ॥ यजु. ३।५४

(ज्योक् क्रत्वे, दक्षाय, जीवसे) चिरकाल तक यज्ञ करने, बल

प्राप्त करने तथा जीनेके लिए और (सूर्यं दृशे) सूर्यको देखनेके लिए (मनः) मन (पुनः नः आ एतु) फिर हमारे पास आ जावे ॥ ११९ ॥

दीर्घ जीवन जीनेके लिये, यज्ञ करनेके लिये, बल प्राप्त करनेके लिये तथा सूर्य प्रकाशको देखनेके लिये मनकी प्रवृत्ति पुनः पुनः करते रहो।

बंधुः। वनस्पतयः। विराड् बृहती।

१२० दीर्घायुस्त ओषधे खनिता यस्मै च त्वा खनाम्यहम्।
अथो त्वं दीर्घायुर्भूत्वा शतवल्शा वि रोहतात् ॥

यजु. १२।१००

हे (ओषधे) ओषधे! (ते खनिता) तुझे खोदनेवाला मैं तथा (यस्मै त्वा अहं खनामि) जिसके लिए तुझे मैं खोद रहा हूं, हम दोनों ही (दीर्घायुः) दीर्घायुवाले हों, (अथो) और (त्वं) तू भी (दीर्घायुः भूत्वा) दीर्घायुवाली होकर (शतवल्शा वि रोहतात्) सैकडों अंकुरोंके रूपमें उग ॥ १२० ॥

औषधि, रोगी और औषधिको खोदकर या काटकर निकालनेवाला वैद्य ये तीनों दीर्घायु हों। औषधिसे रोगी रोग-मुक्त होकर दीर्घ आयु प्राप्त करे, वैद्य सदाचारसे रहकर दीर्घ आयु प्राप्त करे और औषधि पुनः उगकर दीर्घायु बने। किसीका नाश जलदी न हो।

वसिष्ठः ऋषिः। यज्ञो देवता। स्वराडार्षी त्रिष्टुप्।

१२१ यज्ञस्य दोहो विततः पुरुत्रा सो अष्टधा दिवमन्वाततान।
स यज्ञ धुक्ष्व महि मे प्रजायां रायस्पोषं विश्वमायुरशीय ॥

यजु. ८।६२

(यज्ञस्य पुरुत्रा दोहः विततः) यज्ञका सबकी रक्षा करनेवाला दुहनेका पात्र विशाल है, (सः अष्टधा दिवं अनु आततान) वह आठ प्रकारका होकर द्युलोक तक फैला हुआ है, हे (यज्ञ) यज्ञ! (सः) वह तू (मे प्रजायां) मेरी प्रजा-सन्तानके लिए (महि रायस्पोषं

धुक्ष्व) महान् ऐश्वर्य तथा पुष्टिको दुह, और मैं भी (विश्वं आयुः अशीय) सम्पूर्ण आयुका उपभोग करूं ॥ १२१ ॥

यज्ञसे पुष्टि, ऐश्वर्य और दीर्घ आयु प्राप्त होती है। यज्ञकर्ता दीर्घायु होता है।

वसिष्ठः ऋषिः । प्रजापतिः । प्राजापत्या गायत्री ।

१२२ आयुर्यज्ञेन कल्पतां, प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पतां श्रोत्रं यज्ञेन कल्पताम् ॥ यजु. ९।२१

(यज्ञेन आयुः, प्राणः, चक्षुः, श्रोत्रं कल्पतां) यज्ञके द्वारा आयु प्राण, चक्षु और भी श्रोत्रादि इन्द्रियें सामर्थ्य युक्त हों ॥ १२२ ॥

यज्ञसे आयु, जीवनकी प्राणशक्ति, चक्षु श्रोत्र आदि सब इंद्रिय सामर्थ्य युक्त होते हैं।

नारायणः । रुद्रः । उष्णिक् ।

१२३ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् ।
यद् देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् ॥ यजु. ३।६२

(जमदग्नेः त्र्यायुषं) जमदग्निकी तिगुनी आयु (कश्यपस्य त्र्यायुषं) कश्यपको तिगुनी आयु तथा (यत् देवेषु त्र्यायुषं) जो देवोंमें तिगुनी आयु है, (तत् त्र्यायुषं नः अस्तु) वह तिगुनी आयु हमारी भी हो ॥ १२३ ॥

' जमदग्निः '— अग्निको प्रदीप्त करनेवाला यज्ञकर्ता, ' कश्यपः— पश्यकः '— द्रष्टा, योग्य रीतिसे सब कार्यको देखनेवाला, सच्चा ज्ञानी, तथा देव— दिव्य तेजस्वी विद्वान् ये तीनों तीन गुनी आयु प्राप्त करें। विशेष दीर्घ आयु प्राप्त करें। ' विद्वाँसो हि देवाः ' (श. प. ब्रा.)

नारायणः । क्षुरः । भुरिग् जगती ।

१२४ शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता
नमस्ते अस्तु मा मा हिंसीः ।
निवर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय
रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्य्याय ॥ यजु. ३।६३

हे क्षुर ! तू (शिवः नाम असि) कल्याणकारी नामवाला है, (स्वधितिः ते पिता) तलवार या फरसा तेरा पिता है, (ते नमः अस्तु) तुझे नमस्कार हो, (मा मा हिंसीः) मुझे मत मार, मैं (आयुषे अन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सु-प्रजास्त्वाय सुवीर्य्याय) आयु, अन्न, सन्तानोत्पत्ति, ऐश्वर्य तथा पुष्टि, उत्तम प्रजा आदिके लिए तथा उत्तम बलकी प्राप्तिके लिए तुझे (निवर्त्तयामि) प्रयुक्त करता हूं ॥ १२४ ॥

उस्तरा हजामत करे, पर किसीकी हिंसा न करे। उस्तरेसे हजामत की जाती है और मुख सुंदर दीखता है। वह आयु, अन्न, सन्तान, ऐश्वर्य, पुष्टि आदि हमें देवे अर्थात् इनको प्राप्त करनेका सामर्थ्य हमें प्राप्त हो।

वत्सः । गौः । आस्तार पंक्तिः ।

१२५ समख्ये देव्या धिया सं दक्षिणयोरुचक्षसा ।
मा म आयुर्प्रमोषीर्मो अहं तव वीरं
विदेय तव देवि सन्दृशि ॥ यजु, ४।२३

(दक्षिणया उरुचक्षसा) बलवाली विशालदृष्टिसे युक्त होकर (देव्या धिया) अपनी दिव्य बुद्धिसे (सं अख्ये) तेरा वर्णन करूं, हे (देवि) देवि ! (तव सन्दृशि) तेरे निरीक्षणमें रहनेवाले (मे) मेरी (आयुः मा प्रमोषीः) आयु कम न हो (मा अहं तव) न मैं तेरी आयु कम करूं तथा (वीरं विदेय) वीर पुत्रको प्राप्त करूं ॥ १२५ ॥

दिव्य बुद्धिसे आयु दीर्घ की जा सकती है। उसी शुभ बुद्धिसे वीर पुत्रकी प्राप्ति हो सकती है।

वत्सः । अग्निः । साम्न्युष्णिक् ।

१२६ परि माग्ने दुश्चरिताद्बाधस्व आ मा सुचरिते भज ।
उदायुषा स्वायुषोदस्थाममृतां अनु ॥ यजु. ४।२८

हे अग्ने ! (मा परि) मुझे चारों ओरसे (दुश्चरितात् बाधस्व) बुरे चरित्रसे रोक और (मा सुचरिते भज) मुझे उत्तम चरित्रमें स्थापित कर । मैं (अमृतां अनु) दीर्घ जीवी, अमर पुरुषोंका अनुसरण करता हुआ (सु-आयुषा आयुषा) उत्तम तथा दीर्घ आयुसे युक्त होकर (उत् अस्थाम्) हमेशा उन्नत रहूं ॥ १२६ ॥

दुश्चरित्र अर्थात् दुराचारमें मेरी प्रवृत्ति न हो । मेरी मनःप्रवृत्ति सदाचारमें ही हो । दीर्घ जीवनवाले सदाचारी ज्ञानी पुरुषोंके अनुसार मैं अपना आचरण करूं और मैं दीर्घ जीवनसे युक्त बनूं ।

औतथ्यो दीर्घतमा ऋषिः । औदुम्बरी । आसुरी गायत्री ।

१२७ ब्रह्म दृंहह क्षत्रं दृंहह आयुर्दृंहह प्रजां दृंहह ॥
यजु. ५।२७

हे ज्ञान ! मेरे (ब्रह्म, क्षत्रं, आयुः, प्रजां) ज्ञान, बल, आयु और प्रजाको (दृंह) बढा व स्थिर कर ॥ १२७ ॥

ज्ञानसे ज्ञान, शौर्य, आयु और सुप्रजा प्राप्त होती है और बढती है ।

मेधातिथिर्ऋषिः । विष्णुर्देवता । निचृदार्षी गायत्री ।

१२८ तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः ।
दिवीव चक्षुराततम् ॥ यजु. ६।५

(सूरयः) विद्वान् लोग (विष्णोः) विष्णुके (दिवि चक्षुः आततम्) द्युलोकमें फैले हुए सूर्यके प्रकाशके समान (तत् परमं पदं) उस उत्तम स्थानको (सदा पश्यन्ति) हमेशा देखते हैं ॥ १२८ ॥

ज्ञानी दीर्घ आयु प्राप्त करके, परम पदका ध्यान करते हुए आनंदमें रहते हैं ।

कुत्सः । रुद्रः । निचृत् आर्षी जगती ।

१२९ मा नस्तोके तनये मा न आयुषि
मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिषः ।
मा नो वीरान्रुद्र भामिनो वधीः
हविष्मन्त सदमित् त्वा हवामहे ॥ यजु. १६।१६

हे रुद्र ! (नः तोके तनये मा रीरिषः) हमारे पुत्रों पौत्रों पर क्रोधित मत हो, (नः आयुषि मा) हमारी आयुको कम मत करो (नः गोषु अश्वेषु मा मा रारिषः) हमारे गाय घोडों पर क्रोध मत करो, (नः भामिनः वीरान् मा वधीः) हमारे तेजस्वी वीर पुत्रोंको मत मारो हम (सद्) हमेशा (हविष्मन्तः) हविको लेकर (त्वा इत् हवामहे) तुम्हें ही बुलाते हैं ॥ १२९ ॥

हमारे पुत्र पौत्र दीर्घायु प्राप्त करके आनन्दसे रहें । हमारी दीर्घ आयु हो । हम आपकी संतुष्टिके लिये सदा हवनसे यज्ञ करते हैं ।

विश्वेदेवाः ऋषयः । प्राणाः देवता । निचृत् अनुष्टुप् ।

१३० आयुषे त्वा वर्चसे त्वा कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा ॥
यजु. १४।२१

हे प्राण ! (आयुषे) दीर्घायुके लिए (वर्चसे) सामर्थ्यके लिए (कृष्यै) अन्नादि प्राप्तिके लिए तथा (क्षेमाय) सुख व कल्याणके लिए (त्वा) तुझे बलवान् करता हूं ॥ १३० ॥

अपने प्राणकी शक्ति बढा कर दीर्घ आयु, अन्न, सामर्थ्य और सुख प्राप्त करना चाहिये ।

देवाः । अग्निः । भुरिक्छक्वरी ।

१३१ ओजश्च मे सहश्च म आत्मा च मे
तनूश्च मे शर्म च मे वर्म च मे
अङ्गानि च मेऽस्थीनि च मे
परूंषि च मे शरीराणि च मे
आयुश्च मे जरा च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ यजु. १८।३

(मे ओजः, सहः, आत्मा, तनूः, शर्म, वर्म, अंगानि, अस्थीनि, परूंषि शरीराणि, आयुः, जरा च) मेरे सामर्थ्य, सहनशक्ति, आत्मा, देह, सुख, कवच, अंग, हड्डी, संधियां, शरीर, आयु और वृद्धावस्था (यज्ञेन कल्पन्ताम्) यज्ञसे सामर्थ्ययुक्त हों ॥ १३१ ॥

मुझे दीर्घ आयु और सामर्थ्य प्राप्त हो। शरीर, इंद्रियां शरीरके अंग और अवयव यह सब सामर्थ्य युक्त, नीरोगी तथा उत्तम कार्यक्षम रहें।

देवा । अग्निः । भुरिगतिशक्वरी ।

१३२ जीवातुश्च मे दीर्घायुत्वं च मे यज्ञेन कल्पन्ताम् ।

यजु. १८।६

(मे जीवातुः दीर्घायुत्वं च यज्ञेन कल्पन्ताम्) मेरा जीवन और आयु यज्ञके द्वारा दीर्घ हों ॥ १३२ ॥

यज्ञमें अत्तम आयुष्य-वर्धक हव्योंका हवन करनेसे यज्ञकर्ताकी आयु दीर्घ होती है और जीवन सुखमय होता है।

देवाः । अग्निः । स्वराड् विकृतिः ।

१३३ आयुर्यज्ञेन कल्पताम् ॥ यजु. १८।२९

(यज्ञेन) यज्ञके द्वारा (आयुः कल्पताम्) आयु, दीर्घजीवन (कल्पताम्) फलप्रद हों ॥ १३३ ॥

+

शुनःशेपः । अग्निः । परोष्णिक् ।

१३४ दिवो मूर्धाऽसि पृथिव्या नाभिरूर्गपामोषधीनाम् ।
विश्वायुः शर्म सप्रथा नमस्पथे ॥ यजु. १८।५४

हे अग्ने ! तुम (दिवः मूर्धा असि) द्युलोकके सिर हो (पृथिव्याः नाभिः) पृथ्वीकी नाभि हो, (अपां ओषधीनां ऊर्क्) जल और औषधियोंमें रस हो, तुम (शर्म, स-प्रथा) सुख देनेवाले, सर्वत्र विख्यात तथा (विश्व-आयुः) सम्पूर्ण आयुको प्रदान करनेवाले हो, (पथे) मार्ग दर्शन करनेवाले तुमको हम (नमः) नमस्कार करते हैं ॥ १३४ ॥

पूर्ण आयु प्राप्त करनेका उत्तम मार्ग जो बताता है उसको प्रणाम करना योग्य है ।

शुनःशेपः । वरुणः । त्रिष्टुप् ।

१३५ तत्त्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानः
तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः ।
अहेळमानो वरुणेह बोधि
उरुशंस मा न आयुः प्रमोषीः ॥ यजु. १८।४९

हे (वरुण) वरुण ! मैं (ब्रह्मणा वन्दमानः) स्तोत्रोंके द्वारा वन्दन करता हुआ (त्वा तत् यामि) तेरे पास आता हूं । (यजमानः हविर्भिः तत् आशास्ते) यजमान भी हवियोंके द्वारा उसीकी आशा करता है, अतः हे (उरुशंस) बहुतों द्वारा प्रशंसित वरुण ! (अहेळमानः इह बोधि) क्रोधित न होते हुए इस यज्ञमें हमारी इच्छाको जान और (नः आयुः मा प्रमोषीः) हमारी आयुको मत कम कर ॥ १३५ ॥

वेद मंत्रोंकी स्तुति करनेसे तथा योग्य रीतिसे हवन यज्ञ करनेसे आयु बढती है । ईश्वर उपासना आयु बढानेवाली है ।

हेमवर्चिः । पितरः । अनुष्टुप् ।

१३६ पुनन्तु मा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः ।
पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै ॥ यजु. १९।३७

(पितामहाः प्रपितामहाः) दादा (मा) मुझे (पवित्रेण शतायुषा) पवित्र सौ वर्षकी आयुसे (पुनन्तु) पवित्र करें। मैं (विश्वं आयुः व्यश्नवै) सम्पूर्ण आयुका उपभोग करूं ॥ १३६ ॥

सौ वर्षकी आयुमें पवित्र कार्य करते रहना चाहिये और पूर्ण आयुका योग्य उपयोग सत्कार्य करनेमें करना चाहिये ।

गौतमो राहुगणः । विश्वेदेवाः । जगती ।

१३७ आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतो
अदब्धासो अपरीतास उद्भिदः ।
देवा नो यथा सदमिद्वृधे
असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवे दिवे ॥ यजु. २५।१४

(उद् भिदः) सर्वदा उन्नति करनेवाले, (अपरीतासः) शक्तिमान्, (अदब्धासः) किसीसे न दबनेवाले, (क्रतवः) पुरुषार्थ करनेवाले तथा (भद्राः) कल्याण करनेवाले (देवाः) ज्ञानी जन (नः विश्वतः) आयन्तु) हमारे पास चारों ओरसे आवें। (यथा) जिससे वे (नः रक्षितारः) हमारी रक्षा करनेवाले होकर तथा (अप्रायुवे) दीर्घायु देनेवाले न अप्रमादी होकर (वृधे) हमें बढानेके लिए (दिवे दिवे) प्रतिदिन (सदं इत् असन्) हमारे पास ही बैठें ॥ १३७ ॥

प्रयत्नशील विद्वान् हमारे पास आयें, वे हमारा संरक्षण करें और हमें दीर्घायु प्राप्तिका साधन बतावें ।

गौतमो राहूगणः । देवाः । त्रिष्टुप् ।

१३८ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनूभिः व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥
यजु. २५।२१

हे (देवाः) देवो ! हम (कर्णेभिः भद्रं शृणुयाम) कानोंसे अच्छा उपदेश ही सुनें, तथा (यजत्राः) हे यज्ञ करनेवालो ! हम (अक्षभिः भद्रं पश्येम) आंखोंसे अच्छा दृश्य ही देखें, हम (स्थिरैः अंगैः तुष्टुवांसः) अपने सुदृढ अंगोंसे परमात्माकी स्तुति करते हुए (तनूभिः) अपने शरीरोंसे (यद् आयुः) जब तक आयु है तब तक (देवहितं) ज्ञानियोंका हित करते रहें और (व्यशेमहि) आयुका अच्छा उपभोग करते रहें ॥ १३८ ॥

हम कानोंसे अच्छा उपदेश सुनें, आंखोंसे अच्छा दृश्य देखें और अपने शरीरावयवोंसे जब तक हमारी आयु हो तब तक ज्ञानियोंका हित करते रहें । और अपनी सुदीर्घ आयुका अच्छी तरह उपभोग लेते रहें ।

गौतमो राहूगणः । देवाः । त्रिष्टुप् ।

१३९ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा
यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् ।
पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति
मा नो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ॥ यजु. २५।२२

हे (देवाः) देवो ! (शतं शरदः अन्ति इत्) सौ वर्षके पास ही (नः तनूनां जरसं चक्र) हमारे शरीरोंको वृद्ध बनाना । (यत्र) जब (पुत्रासः पितरः भवन्ति) पुत्र भी पिता बन जाते हैं । तब तक (गन्तोः नः आयुः) चलनेवाले हमारी आयुको (मध्या मा रीरिषत) बीचमें ही समाप्त मत कर देना ॥ १३९ ॥

सौ वर्षोंके पश्चात् हमारे शरीर वृद्ध हों, तब तक हमारे पास वृद्ध अवस्था न आवे । जब पुत्रोंके पुत्र होते हैं, तब तक हम वृद्ध न हों, हम तरुण जैसे सामर्थ्यवान् रहें ।

दक्षः । हिरण्यं । शक्वरी ।

१४० यो बिभर्त्ति दाक्षायणं हिरण्यं स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः
स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः । यजु. ३४।५१

(यः दाक्षायणं हिरण्यं बिभर्ति) जो बल प्रदान करनेवाले स्वर्णको धारण करता है (सः देवेषु दीर्घं आयुः कृणुते) वह देवोंमें दीर्घ आयुवाला होता है, (सः मनुष्येषु दीर्घं आयु कृणुते) वह मनुष्योंमें दीर्घ आयुवाला होता है ॥ १४० ॥

शरीर पर सुवर्ण धारण करनेसे दीर्घ आयु प्राप्त होती है। इसलिये स्त्रियोंको तथा पुरुषोंको उचित है कि वे सुवर्णके अलंकार शरीर पर धारण करें।

अथर्वा (आयुष्कामः) । हिरण्यम् । जगती ।

१४१ यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्य ँ
शतानीकाय सुमनस्यमानाः ।
तन्म आबध्नामि शतशारदाय
आयुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ॥ यजु. ३४।५२

(यत् हिरण्यं) जिस सोनेको (सु-मनस्यमानाः) उत्तम मनवाले (दाक्षायणाः) बलशाली मनुष्य (शतानीकाय) सैंकडों शत्रुओंको मारनेके लिए (अबध्नन्) बांधते हैं, (तत्) उस सोनेको (मे शत शारदाय आबध्नामि) अपने सौ वर्ष जीनेके लिए बांधता हूं, (यथा) जिससे (आयुष्मान्) दीर्घायु युक्त होकर (जरदष्टिः आसम्) बुढापेका उपभोग करनेवाला बनूं ॥ १४१ ॥

शरीर पर सुवर्ण धारण करनेसे वृद्ध अवस्थामें भी अच्छी शक्ति शरीरमें रहती है और उसको उत्तम दीर्घ आयु भी प्राप्त होती है।

संकुसुको यामायनः । मृत्युः । त्रिष्टुप् ।

१४२ परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां
यस्ते अन्य इतरो देवयानात् ।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि
मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान् ॥ यजु. ३५।७

हे (मृत्यो) मृत्यो ! (यः ते) जो तेरा (देवयानात् इतरः अन्यः) देवयानसे भिन्न दूसरा मार्ग है उस (पन्थां) मार्गसे (परं परा इहि) बहुत दूर चला जा (चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि) आंखोंवाले तथा सुननेवाले तुझे मैं कहता हूं कि (नः प्रजां उत वीरान् मा रीरिषः) हमारी प्रजा तथा वीर सन्तानोंकी हिंसा मत कर ॥ १४२ ॥

हमारी सन्तानोंको दीर्घायु प्राप्त हो । वे जलदी न मरें । ऐसा प्रबंध राष्ट्रमें होना चाहिये ।

मैत्रावरुणिर्वासिष्ठः । सूर्यः । पुरउष्णिक् ।

१४३ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् ।
पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतं,
शृणुयाम शरदः शतं, प्र ब्रवाम शरदः शतं,
अदीनाः स्याम शरदः शतं, भूयश्च शरदः शतात् ॥
यजु. ३६।२४

(देवहितं) देवोंका हितकारक (शुक्रं) तेजस्वी (तत् चक्षुः) वह नेत्र रूपी सूर्य (पुरस्तात्) सबके समक्ष (उत् चरत्) उदय हो रहा है, उसकी कृपासे हम (शतं शरदः) सौ वर्ष तक (पश्येम, जीवेम, शृणुयाम, प्रब्रवाम, अदीनाः स्याम) देखें, जियें, सुनें, बोलें

और दीनतासे रहित हों, तथा (भूयश्च शरदः शतात्) सौ वर्षसे अधिक भी देखें, जिएं, सुनें, बोलें और दीनतासे रहित रहें ॥ १४३ ॥

सौ वर्षोंसे अधिक भी आयु हो और उस दीर्घ आयुमें हमारे सब इन्द्रिय अच्छी प्रकार कार्य करते रहें। किसी अवयवमें किसी तरहकी न्यूनता उत्पन्न न हो।

दधीचः। महाबीरः। आर्षी उष्णिक्।

१४४ दृते ह ꣳ हं मा। ज्योक्ते सन्दृशि जीव्यासं।
ज्योक्ते सन्दृशि जीव्यासम्। यजु. ३६।१९

हे (दृते) पापनाशक ईश्वर! (मा दृंह) मुझे दृढ कर। मैं (ते सन्दृशि) तेरे निरीक्षणमें (ज्योक् जीव्यासं) चिरकाल तक जीवित रहूं ॥ १४४ ॥

शरीर सुदृढ रहा तो दीर्घ जीवन प्राप्त किया जा सकता है।

दधीचः। पृथिवी। भुरिक्प्राजापत्यानुष्टुप्।

१४५ अनाधृष्टा पुरस्तादग्नेराधिपत्य आयुर्मे दाः॥ यजु.३७।१२

हे पृथिवी! तू (अनाधृष्टा) किसीके द्वारा हिंसित नहीं की जा सकती, तू (आधिपत्ये मे) तेरे स्वामित्वमें रहनेवाले मुझे (पुरस्तात्) आगेकी दिशासे (आयुः दाः) दीर्घायु प्रदान कर ॥ १४५ ॥

इस पृथिवी परके जीवनमें मुझे दीर्घ आयु प्राप्त हो।

दधीचः। धर्मः महाबृहती।

१४६ चतुःस्रक्तिर्नाभिर्ऋतस्य सप्रथाः स नो
विश्वायुः सप्रथाः स नः सर्वायुः सप्रथाः॥ यजु. ३८।२०

(चतुः स्रक्तिः सप्रथाः ऋतस्य नाभिः) चारों दिशाओंमें विख्यात यशवाला तथा यज्ञका केन्द्र (सः) वह धर्म (नः) हमें (विश्वायुः सर्वायुः सप्रथाः) सम्पूर्ण आयुवाला तथा विस्तृत यशवाला करे ॥ १४६ ॥

हम यश प्राप्त करें, यज्ञ करते रहें और पूर्ण आयुका उपभोग करें।

अथर्ववेद मंत्राः

अथर्वा । वरुणः । त्रिष्टुप् ।

१४७ नमस्ते राजन्वरुणास्तु मन्यवे
विश्वं ह्युग्र निचिकेषि द्रुग्धम् ।
सहस्रमन्यान्प्र सुवामि साकं
शतं जीवाति शरदस्तवायम् ॥ अथर्व. १।१०।२

हे राजन् वरुण ! (ते मन्यवे नमः अस्तु) तेरे उत्साहको नमस्कार होवे, हे (उग्र) प्रचण्ड ईश्वर ! तू (विश्वं द्रुग्धं) सब द्रोहादि पापोंको (निचिकेषि) ठीक प्रकार जानता है। (सहस्रं अन्यान्) हजारों अन्योंको (साकं) साथ साथ मैं (प्रसुवामि) प्रेरणा करता हूं, (अयः) यह मनुष्य (तव) तेरा बनकर ही (शतं शरदः) सौ वर्ष (जीवाति) जीता रह सकता है ॥ १४७ ॥

१ मन्युः— क्रोध, उत्साह, धैर्य । ते मन्यवे नमः— तेरे उत्साहको मेरा प्रणाम है ।

५ अयं तव— यह मनुष्य तेरा बनकर रहे । परमेश्वरका मित्र बनकर रहे और (शरदः शतं जीवाति) सौ वर्ष जीवित रहे । ईश्वरकी उपासना करनेसे आयु बढती है ।

अथर्वाः । इन्द्रः । अनुष्टुप् ।

१४८ शास इत्था महाँ अस्यमित्रसाहो अस्तृतः ।
न यस्य हन्यते सखा न जीयते कदाचन ॥ अथर्व १।२०।४

(इत्था महान् शासः) इस प्रकार सत्य और महान् शासक ईश्वर (अ-मित्र-साहः अ-स्तृतः असि) शत्रुका पराजय करनेवाला और कभी न हारनेवाला है। (यस्य सखा कदाचन न हन्यते) जिसका मित्र कभी भी नहीं मारा जाता और (न जीयते) न पराजित होता है ॥ १४८ ॥

परमेश्वरका मित्र बनकर रहनेका अर्थ निष्पाप होकर रहना है। इस तरह निष्पाप बनकर रहनेसे जल्दी मृत्यु नहीं होती अर्थात् दीर्घ आयु होती है और उसका पराभव भी नहीं होता। अर्थात् उसको जीवनमें विजय मिलता रहता है।

अथर्वा (आयुष्कामः)। वसवः आदित्याः। त्रिष्टुप्।

१४९ विश्वे देवा वसवो रक्षतेममुतादित्या जागृत यूयमस्मिन्।
मेमं सनाभिरुत वान्यनाभिः
मेमं प्रापत् पौरुषेयो वधो यः ॥ अथर्व. १।३०।१

हे (विश्वे-देवाः) सब देवो, हे! (वसवः) वसुदेवो! (इमं रक्षत) इसकी रक्षा करो, (उत) और (आदित्याः) हे आदित्यो! (यूयं अस्मिन् जागृत) तुम इसमें जागते रहो, (इमं) इस पुरुष पर (सनाभिः) अपने बन्धुका (उत वा अन्यनाभिः) अथवा किसी दूसरेका (वधः मा प्रापत्) शस्त्र न प्रहार करे तथा (यः पौरुषेयः वधः) जो पुरुषके प्रयत्नसे होनेवाला वध है वह भी (इमं मा प्रापत्) इसको प्राप्त न हो ॥ १४९ ॥

इस पुरुषका किसीके शस्त्रसे वध न हो। सब देव इसके शरीरमें जाग्रत रहें। मानव शरीरमें देव रहते हैं वे सदा जाग्रत रहें और इसकी सुरक्षा करें। आंखमें सूर्य, नाकमें वायु, मुखमें अग्नि, हृदयमें चन्द्रमा ऐसे सब देव मानव शरीरमें अंश रूपसे रहते हैं। वे सदा जाग्रत रहकर इस मनुष्यको दीर्घायु करें।

अथर्वा (आयुष्कामः)। विश्वे देवाः। त्रिष्टुप्।

१५० ये वो देवाः पितरो ये च पुत्राः
सचेतसो मे शृणुतेदमुक्तम्।
सर्वेभ्यो वः परि ददाम्येतं
स्वस्त्येनं जरसे वहाथ ॥ अथर्व. १।३०।२

हे (देवाः) देवो! (ये वः पितरः) जो आपके पिता हैं, तथा

(च ये पुत्राः) जो पुत्र हैं, वे सब (स-चेतसः) सावधान होकर (मे इदं उक्तं शृणुत) मेरा यह कथन श्रवण करें, (सर्वेभ्यो वः एतं परि ददामि) सब आपकी निगरानीमें इसको मैं रखता हूं, (एनं जरसे स्वस्ति वहाथ) इसको वृद्ध आयु तक सुखपूर्वक पहुंचा दो ॥ १५० ॥

इस मनुष्यको वृद्धावस्था तक आरोग्यके साथ पहुंचाओ। यह रोगरहित रहे और वृद्धावस्थाको प्राप्त करे।

अथर्वा। विश्वेदेवाः। शाक्वरगर्भा विराड् जगती।

१५१ ये देवा दिविष्ठ ये पृथिव्यां
ये अन्तरिक्ष ओषधीषु पशुष्वप्सन्तः।
ते कृणुत जरसमायुरस्मै शतमन्यान्परि वृणक्तु मृत्यून् ॥
अथर्व १।३०।३

(ये देवाः दिवि स्थ) जो देव द्युलोकमें हैं, (ये पृथिव्यां ये अन्तरिक्षे) जो पृथ्वीमें और अन्तरिक्षमें हैं, और जो (ओषधीषु पशुषु अप्सु अन्तः) औषधि, पशु और जलोंके अन्दर हैं (ते अस्मै जरसं आयुः कृणुत) वे इसके लिए वृद्धावस्थावाली दीर्घायु करें। यह पुरुष (शतं अन्यान् मृत्यून् परिवृणक्तु) सैंकडों अन्य अप मृत्युओंको हटा देवे ॥ १५१ ॥

अपमृत्युको हटाना, दीर्घ आयुको प्राप्त करना यह यहां करना चाहिये, इस कार्यके लिये द्युलोकमें सूर्य आदि हैं, पृथिवी पर जल, अन्न, वायु आदि हैं और औषधियां हैं। इनका योग्य रीतिसे उपयोग करना चाहिये। इससे मनुष्य दीर्घ आयु प्राप्त कर सकता है। इसीके लिये सूर्य किरण चिकित्सा, जल चिकित्सा, औषधि चिकित्सा आदि अनेक साधन हैं, जिनके योग्य उपयोगसे मनुष्य अपमृत्युको हटाकर दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है।

अथर्वा । विश्वेदेवाः । त्रिष्टुप् ।

१५२ येषां प्रयाजा उत वानुयाजा हुतभागा अहुतादश्च देवाः ।
येषां वः पंच प्रदिशो विभक्तास्तान्वो
अस्मै सत्रसदः कृणोमि अथर्व. १।३०।४

(येषां) जिन तुम्हारे अन्दर (प्रयाजाः) विशेष यजन करनेवाले (उत वा अनुयाजाः) अथवा अनुकूल यजन करनेवाले तथा (हुत-भागाः अहुतादः च देवाः) हवनमें भाग रखनेवाले और हवन न किया हुआ खानेवाले जो देव हैं (येषां वः पंचः प्रदिशः विभक्ताः) जिन आपकी ही पांच दिशाएं विभक्त की गई हैं, (तान् वः) उन तुमको (अस्मै) इस पुरुषकी दीर्घायुके लिए (सत्र-सदः कृणोमि) सदस्य करता हूं ॥ १५२ ॥

विशेष यजन करनेवाले, अनुकूल यजन करनेवाले, हवनका भाग लेनेवाले जो देव हैं, वे सब देव मनुष्यकी आयु बढावें ।

अथर्वा । हिरण्यम् । जगती ।

१५३ यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्यं शतानीकाय सुमनस्यमानाः।
तत्ते बध्नाम्यायुषे वर्चसे बलाय
दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥ अथर्व. १।३५।१

(सुमनस्यमानाः दाक्षायणाः) शुभ मनवाले और बलकी वृद्धि करनेवाले श्रेष्ठ पुरुष (शत-अनीकाय) सेनाके सौ विभागोंके संचालकके लिए (यत् हिरण्यं अबध्नन्) जो सुवर्ण बांधते रहे, (तत्) वह सुवर्ण (आयुषे वर्चसे) आयु तेज (बलाय) बल और (शतशार-दाय दीर्घायुत्वाय) सौ वर्षकी दीर्घायुके लिए (ते बध्नामि) तेरे ऊपर बांधता हूं ॥ १५३ ॥

तेजस्विता, बल, नीरोगिता और सौ वर्षकी दीर्घ आयु प्राप्त करनेकी इच्छा हो, तो शरीर पर सुवर्ण धारण करना चाहिये ।

अथर्वा । हिरण्यम् । जगती ।

१५४ नैनं रक्षांसि न पिशाचाः सहन्ते
देवानामोजः प्रथमजं ह्येतत् ।
यो बिभर्त्ति दाक्षायणं हिरण्यं
स जीवेषु कृणुते दीर्घमायुः ॥ अथर्व. १।३५।२

(न रक्षांसि न पिशाचाः) न राक्षस और न पिशाच (एनं सहन्ते) इस सुवर्णको सह सकते हैं, (हि) क्योंकि (एतत् देवानां प्रथमजं ओजः) यह सुवर्ण देवोंका उत्तमसे उत्तम सामर्थ्य है, (यः दाक्षायणं हिरण्यं बिभर्त्ति) जो मनुष्य दाक्षायण सुवर्ण धारण करता है, (सः जीवेषु दीर्घं आयुः कृणुते) वह जीवोंमें अपनी आयु दीर्घ करता है ॥ १५४ ॥

सुवर्णको शरीर पर धारण करने मनुष्यकी आयु दीर्घ होती है ।

अथर्वा । चन्द्रमाः (जंगिडः) । विराट् प्रस्तारपंक्तिः ।

१५५ दीर्घायुत्वाय बृहते रणायारिष्यन्तो दक्षमाणाः सदैव ।
मणिं विष्कन्धदूषणं जङ्गिडं बिभृमो वयम् ॥
अथर्व. २।४।१

(दीर्घायुत्वाय) दीर्घायु प्राप्तिके लिए तथा (बृहते रणाय) बडे आनन्दके लिए (वि-स्कन्ध-दूषणं) शोषक रोगको दूर करनेवाले (जंगिडं मणिं) जंगिड मणिको (अ-रिष्यन्तः दक्षमाणाः वयं) न सडनेवाले अपितु बलको बढानेवाले हम सब (बिभृमः) धारण करते हैं ॥ १५५ ॥

अथर्वा । जंगिडः । अनुष्टुप् ।

१५६ कृत्यादूषिरयं मणिरथो अरातिदूषिः ।
अथो सहस्वान् जंगिडः प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥
अथर्व. २।४।६

(अयं मणिः) यह मणि (कृत्या-दूषिः) हिंसासे बचानेवाला

(अथो) और (अ-राति-दूषिः) शत्रु भूत रोगोंको दूर करनेवाला है, (अथो) ऐसा यह (सहस्वान् जंगिडः) बलवान् जंगिडमणि (नः आयूंषि प्रतारिषत्) हमारी आयुको बढावे ।

औषधियोंके रसोंसे यह गुटिका बनायी जाती है । यह शरीर पर धारण करनेसे अनेक रोग दूर होते हैं ॥ १५६ ॥

अथर्वा । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

१५७ आयुर्दा अग्ने जरसं वृणानो घृतप्रतीको घृतपृष्ठो अग्ने ।
घृतं पीत्वा मधु चारु गव्यं पितेव पुत्रानभि रक्षतादिमम् ॥
अथर्व. २।१३।१

हे (अग्ने अग्ने) तेजस्वी अग्ने ! तू (आयुः दा) जीवनका दाता (जरसं वृणानः) स्तुतिको स्वीकार करनेवाला, (घृत-प्रतीकः) घृतके समान तेजस्वी और (घृत-पृष्ठः) घीका सेवन करनेवाला है, अतः (मधु चारु गव्यं घृतं पीत्वा) मीठा सुन्दर गायका घी पीकर (पिता पुत्रान्) पिता पुत्रोंकी रक्षा करनेके समान तू (इमं अभिरक्षतात्) इसकी सब ओरसे रक्षा कर ॥ १५७ ॥

अग्निमें गायका घी हवन करनेसे वह यजन दीर्घ जीवन देनेवाला होता है ।

अथर्वा । बृहस्पतिः । त्रिष्टुप् ।

१५८ परि धत्त धत्त नो वर्चसेमं जरामृत्युं कृणुत दीर्घमायुः ।
बृहस्पतिः प्रायच्छद्वास एतत्
सोमाय राज्ञे परिधातवा उ ॥ अथर्व. २।१३।२

(नः इमं) हमारे इस पुरुषको (परिधत्त) चारों ओरसे धारण कराओ, (वर्चसा धत्त) तेजसे युक्त करो, इसकी (दीर्घं आयुः जरा-मृत्युं कृणुत) दीर्घ आयु तथा वृद्धावस्थाके पश्चात् मृत्यु हो, (बृहस्पतिः एतत् वासः) बृहस्पतिने यह कपडा (सोमाय राज्ञे परिधातवे) सोम राजाको पहननेके लिए (उ प्रायच्छत्) निश्चयसे दिया है ॥ १५८ ॥

मनुष्य तेजस्वी बने, अच्छे कपडे धारण करे। दीर्घायु प्राप्त करे और जरावस्थाके पश्चात् मृत्यु आ जाय, इसके लिये यत्न करे। वृद्धावस्थासे पूर्व मृत्यु न आ जाय इसके लिये प्रयत्न करना चाहिये।

अथर्वा। बृहस्पतिः। त्रिष्टुप्।

१५९ परीदं वासो अधिथाः स्वस्तयेऽभूर्गृष्टीनामभिशस्तिपा उ।
शतं च जीव शरदः पुरूची रायश्च पोषमुप संव्ययस्व॥

अथर्व. २।१३।३

(इदं वासः स्वस्तये परि अधिथाः) यह वस्त्र अपने कल्याणके लिए धारण कर, (गृष्टीनां अभि शस्तिपाः उ अभूः) तू मनुष्योंको विनाशसे बचानेवाला निश्चयसे हुआ है; इस प्रकार (पुरुचीः शरदः शतं च जीव) पूर्ण सौ वर्ष तक जी, और (रायस्पोषं च उप सं व्ययस्व) धन और पोषण प्राप्त कर॥ १५९॥

मानवोंके कल्याणका कार्य करते रहना चाहिये। उत्तम कपडे पहनने चाहिये। पूर्ण सौ वर्ष जीवित रहनेका यत्न करना चाहिये। धन प्राप्त करके अपना उत्तम पोषण करना चाहिये।

अथर्वा। विश्वेदेवाः। अनुष्टुप्।

१६० एह्यश्मानमा तिष्ठाश्मा भवतु ते तनूः।
कृण्वन्तु विश्वेदेवाः आयुष्टे शरदः शतम्॥

अथर्व. २।१३।४

(एहि अश्मानं आ तिष्ठ) आ शिला पर चढ (ते तनूः अश्मा भवतु) तेरा शरीर पत्थर जैसा दृढ बने, (विश्वे देवाः) सब देव (ते आयुः शरदः शतं कृण्वन्तु) तेरी आयु सौ वर्षकी करें॥ १६०॥

पत्थरके समान सुदृढ शरीर बनाना चाहिये। कमजोरीको दूर करना चाहिये और सौ वर्षकी पूर्ण आयु प्राप्त करनी चाहिये। व्यायाम करनेसे शरीर सुदृढ होता है।

अथर्वा । अग्निः सूर्यः बृहस्पतिः । अनुष्टुप् ।

१६१ पार्थिवस्य रसे देवा भगस्य तन्वो बले ।
आयुष्यमस्मा अग्निः सूर्यो वर्च आ धात् बृहस्पतिः ॥
अथर्व. २।२९।१

हे (देवाः) देवो ! अग्नि, सूर्य और बृहस्पति (अस्मै) इस मनुष्यको (पार्थिवस्य तन्वः भगस्य) पार्थिव शरीरके ऐश्वर्य सम्बन्धी (रसे बले) रस और बलकी प्राप्त कराके (आयुष्यं वर्चः) दीर्घायुष्य और तेज (आ धात्) देवें ॥ १६१ ॥

इस पार्थिव शरीरके ऐश्वर्यको प्राप्त करके तथा रस सेवनसे बल प्राप्त करके तेजस्वी दीर्घायुष्य प्राप्य करना योग्य है।

अथर्वा । जातवेदाः, सविता । त्रिष्टुप् ।

१६२ आयुरस्मै धेहि जातवेदः प्रजां त्वष्टरधिनिधेह्यस्मै ।
रायस्पोषं सवितरा सुवास्मै शतं जीवाति शरदस्तवायम् ॥
अथ. २।२९।२

हे (जातवेदः) हे ज्ञान देनेवाले देव ! (अस्मै आयुः धेहि) इसको दीर्घ आयु दो, हे (त्वष्टः) रचना करनेवाले देव ! (अस्मै प्रजां अधि नि धेहि) इसको प्रजा दो, हे (सवितः) प्रेरक देव ! (अस्मै रायः पोषं आसुव) इसके लिए धन और पुष्टि दो, (तव अयं शतं शरदः जीवाति) तेरा बनकर यह सौ वर्ष जीवित रहे ॥ १६२ ॥

दीर्घ आयु, सुप्रजा, धन और पोषण प्राप्त करके सौ वर्ष जीवित रहना योग्य है।

अथर्वा । इन्द्रः । त्रिष्टुप् ।

१६३ इन्द्रं एतां ससृजे विद्धो अग्रं
ऊर्जां स्वधामजरां सा त एषा ।
तया त्वं जीव शरदः सुवर्चा
मा त आ सुस्रोद्भिषजस्ते अक्रन् ॥ अथ. २।२९।७

(विद्धः इन्द्रः) भक्ति किया हुआ प्रभु (एतां अजरां ऊर्जां स्वधां अग्रे ससृजे) इस अक्षीण अन्न युक्त सुधाको उत्पन्न करता है, देता है, (सा एषा ते) वह यह सब तेरे लिए ही है, (तया त्वं सुवर्चाः शरदः जीव) उसके द्वारा तू उत्तम तेजस्वी बनकर बहुत वर्ष जीवित रह (ते मा आसुस्रोत्) तेरे लिए ऐश्वर्य न घटे, (ते भिषजः अक्रन्) तेरे लिए वैद्योंने उत्तम योग्य रस बनाए हैं ॥ १६३ ॥

वृद्धावस्था जल्दी न करनेवाला और तेजस्विता बढानेवाला सुधा रस वैद्य तैयार करते हैं, उसके सेवनसे शरीर उत्तम तेजस्वी होकर सौ वर्ष तक जीवित रहता है। मनुष्य इसका सेवन करें और दीर्घायु हों ।

अथर्वा । सोमः । त्रिष्टुप् ।

१६४ सोमस्य पर्णः सह उग्रमागन्निन्द्रेण दत्तो वरुणेन शिष्टः ।
तं प्रियासं बहु रोचमानो दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥
अथ. ३।५।४

(इन्द्रेण दत्तः) इन्द्रके द्वारा दिया हुआ, (वरुणेन शिष्टः) वरुण द्वारा अच्छी तरह बनाया गया (सोमस्य पर्णः) सोमका यह पर्णमणि (उग्रं सह आ आगन्) उग्र बलसे युक्त होकर प्राप्त हुआ है, (तं) उस मणिके लिए (बहु रोचमानः) बहुत तेजस्वी में (दीर्घायुत्वाय शतशारदाय) दीर्घ आयुके लिए और सौ वर्ष जीनेके लिए (प्रियासं) प्रिय करूं ॥ १६४ ॥

सोमके पत्तोंका यह पर्ण मणि बनाया जाता है। उसके धारण करनेसे सौ वर्षकी आयु आनंदसे प्राप्त होती है ।

अथर्वा । शंखमणिः । अनुष्टुप् ।

१६५ दिवि जातः समुद्रजः सिन्धुतस्पर्याभृतः ।
स नो हिरण्यजाः शङ्ख आयुष्प्रतरणो मणिः ॥
अथ. ४।१०।४

(दिवि जातः) द्युलोकसे हुआ (समुद्रजः) समुद्रसे जन्मा अथवा (सिन्धुतः परि आभृतः) नदियोंसे इकट्ठा किया हुआ यह (हिरण्यजाः शंखः) सोनेके समान चमकनेवाला शंख है, (सः मणिः नः आयुः प्रतरणः) वह मणि हमारी आयुको बढानेवाला हो ॥ १६५ ॥

शंखका मणि धारण करनेसे आयुकी वृद्धि होती है।

अथर्वा । कृशनः । पंचपदा परानुष्टुप् शक्वरी ।

१६६ देवानामस्थि कृशनं बभूव तदात्मन्वच्चरत्यप्स्वन्तः ।
तत्ते बध्नाम्यायुषे वर्चसे बलाय दीर्घायुत्वाय
शतशारदाय कार्शनस्त्वाभिरक्षतु ॥ अथ. ४।१०।७

(देवानां अस्थि कृशनं बभूव) देवोंका अस्थिरूप श्वेत तेज ही सुवर्ण या मोतीके सदृश बना है। (तत् आत्मन्वत् अप्सु अन्तः चरति) वह आत्माकी सत्तासे युक्त होता हुआ जलोंमें विचरता है, (तत् ते) वह तेरे ऊपर (वर्चसे, बलाय, आयुषे, दीर्घायुत्वाय, शतशारदाय) तेज, बल, आयुष्य, दीर्घायुष्य, सौ वर्षोंवाला दीर्घायुष्य प्राप्त होनेके लिए (बध्नामि) बांधता हूं, (अयं कार्शनः त्वा अभि रक्षतु) यह शंखमणि तेरा पूर्ण रक्षण करे ॥ १६६ ॥

कृशन मणि सुवर्ण या मोतीके सदृश है। इसके धारण करनेसे तेज, बल और आयु बढती है।

+

अथर्वा । त्रिवृत्, अग्न्यादयः । त्रिष्टुप् ।

१६७ नवं प्राणान्नवभिः सं मिमीते दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
हरिते त्रीणि रजते त्रीण्ययसि त्रीणि तपसाविष्ठितानि ॥
अथ. ५।२८।१

(शतशारदाय दीर्घायुत्वाय) सौ वर्षवाले दीर्घ जीवनके लिए (नव प्राणान् नवभिः सं मिमीते) नौ प्राणोंको नौ इन्द्रियोंके साथ समानतासे मिलाता है, (हरिते त्रीणि, रजते त्रीणि, अयसि त्रीणि) सोनेके तीन, चांदीके तीन, लोहेके तीन (तपसा आविष्ठितानि) तपसे विशेष प्रकारसे स्थित हैं ॥ १६७ ॥

सुवर्णके तीन, चांदीके तीन, और लोहेके तीन ऐसे नौ मणि करके धारण करनेसे सौ वर्षकी दीर्घ आयु प्राप्त होती है ।

अथर्वा । त्रिवृत्; अग्न्यादयः । पंचपदातिशक्वरी ।

१६८ त्रेधा जातं जन्मनेदं हिरण्यमग्नेरेकं प्रियतमं बभूव
सोमस्यैकं हिंसितस्य परापतत् ।
अपामेकं वेधसां रेत आहुस्तत्
ते हिरण्यं त्रिवृद स्त्वायुषे ॥ अथ. ५।२८।६

(इदं हिरण्यं जन्मना त्रेधा जातं) यह सोना जन्मसे ही तीन प्रकारसे उत्पन्न हुआ, उनमेंसे (एकं अग्नेः प्रियतमं बभूव) एक अग्निको अति प्रिय हुआ, (एकं हिंसितस्य सोमस्य परापतत्) दूसरा निचोडे सोमसे बाहर निकलता है, (एकं वेधसां अपां रेतः आहुः) तीसरा सारभूत जलका वीर्य है, ऐसा कहते हैं, (तत् त्रिवृत् हिरण्यं) वह तिहरा सुवर्ण (ते आयुषे अस्तु) तेरी दीर्घ आयुके लिए होवे ॥ १६८ ॥

अग्निमें तपाया सुवर्ण मणि, सोमरससे सिद्ध किया सुवर्ण मणि और तीसरा जलसे सिद्ध किया सुवर्ण मणि, ये तीन मणि धारण करनेसे आयु बढती है। सोमरसमें उबालनेसे एक प्रकारका विशेष गुण सुवर्णमें आता है। उस प्रकार जलोंमें तप्त सुवर्ण डुबानेसे सुवर्ण सिद्ध होता है। इनके धारण करनेसे दीर्घायु मिलती है।

अथर्वा। त्रिवृत्, अग्न्यादयः। ककुम्मत्यनुष्टुप्।

१६९ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्।
त्रेधामृतस्य चक्षणं त्रीण्यायूंषि तेऽकरम्॥ अथ. ५।२८।७

(जमदग्नेः त्र्यायुषं) जमदग्निकी तिहरी आयु (कश्यपस्य त्र्यायुषं) कश्यपकी तिगुनी आयु, यह (अमृतस्य त्रेधा चक्षणं) अमृतका तीन प्रकारका दर्शन है। इससे (ते त्रीणि आयूंषि अकरं) तेरे लिए तीन आयुष्योंको करता हूं॥ १६९॥

भावार्थ— जमदग्नि और कश्यपकी बाल, तरुण और वृद्ध अवस्थामें व्यापनेवाली तिगुनी आयु मानों अमृतका साक्षात्कार करनेवाली है, वह तीन प्रकारकी आयु हमें प्राप्त होवे।

अथर्वा। त्रिवृत्, अग्न्यादयः। त्रिष्टुप्।

१७० त्रयः सुपर्णास्त्रिवृता यदायन्नेकाक्षरमभिसंभूय शक्राः।
प्रत्यौहन्मृत्युममृतेन साकमन्तर्दधाना दुरितानि विश्वा॥
अथ. ५।२८।८

(यत् शक्राः त्रयः सु-पर्णाः) जब सामर्थ्य बढानेवाले तीन सुपर्ण (त्रिवृता एकाक्षरं अभि संभूय आयन्) तिहरे होकर एक अक्षरमें सब प्रकार मिलकर रह रहे हैं, वे (अमृतेन साकं विश्वा दुरितानि अन्तर्दधानाः) अमृतके साथ सब अनिष्टोंको मिटाकर (मृत्युं प्रति औहन्) मौतको दूर करते हैं॥ १७०॥

'सुपर्ण' उत्तम पत्तोंवाला कमल है। 'अमृत' वाराही कंद है। 'अक्षर' अपामार्ग है। इनका पाक तैयार करके खानेसे आयु दीर्घ होती है। वैद्योंको इसका संशोधन करके निश्चय करना चाहिये कि इन पदोंसे किन वस्तुओंका बोध होता है और इसके बनानेकी विधि क्या है।

अथर्वा। त्रिवृत्, अग्न्यादयः। पुरउष्णिक्।

१७१ ऋतुभिष्ट्वार्तवैरायुषे वर्चसे त्वा।
संवत्सरस्य तेजसा तेन संहनु कृण्मसि॥ अथ. ५।२८।१३

(आयुषे वर्चसे त्वा) आयुष्य और तेजके लिए तुझे (ऋतुभिः आर्तवैः) ऋतुओं और ऋतु विभागोंसे और (संवत्सरस्य तेन तेजसा) संवत्सरके उस तेजसे (संहनु कृण्मसि) संयुक्त करता हूं॥ १७१॥

दीर्घायु और तेजस्विताके लिये ऋतुओंके अनुकूल जैसा जिस ऋतुमें योग्य हो, वैसा उस ऋतुमें आचरण करना चाहिये और संवत्सरको अपने अनुकूल करना चाहिये।

अथर्वा। इन्द्रः। भुरिक्।

१७२ इन्द्रेमं प्रतरं कृधि सजातानामसद्वशी।
रायस्पोषेण सं सृज जीवातवे जरसे नय॥ अथ. ६।५।२

हे इन्द्र (इमं प्रतरं कृधि) इस मनुष्यको ऊंचा कर, यह मनुष्य (सजातानां वशी असत्) स्वजातिके मनुष्योंके बीच सबको वशमें करनेवाला होवे, (रायस्पोषेण संसृज) इसे धन और पुष्टि उत्तम प्रकारसे प्राप्त हो, और (जीवातवे जरसे नय) दीर्घ जीवनके लिए बुढापे तक सुखपूर्वक ले जा॥ १७२॥

आचरण उच्च श्रेणीका होना चाहिये। स्वजातियोंमें सबको वशमें रखनेवाला हो, धन और पोषण प्राप्त करे सुख पूर्वक दीर्घ जीवन प्राप्त करके वृद्ध अवस्था तक पहुंचे।

अथर्वा । वैश्वानरः । त्रिष्टुप् ।

१७३ वैश्वानरीं वर्चस आ रभध्वं शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः ।
इहेडया सधमादं मदन्तो ज्योक्
पश्येम सूर्यमुच्चरन्तम् । अथ. ६।६२।३

(शुचयः शुद्धाः पावकाः भवन्तः) शुद्ध पवित्र तथा दूसरोंको पवित्र करनेवाले होकर (वैश्वानरीं वर्चसे आ रभध्वं) सब मनुष्योंकी ईशस्तुति रूप वाणीको तेजस्विताके लिए बोलना आरम्भ करो, (इह ईड्या सधमादं मदन्तः) महां स्तुतिरूप वाणीसे साथ साथ आनन्दित होते हुए हम (ज्योक् उच्चरन्तं सूर्यं पश्येम) चिरकाल तक उदय होते हुए सूर्यको देखते रहें ॥ १७३ ॥

हम अन्तर्बाह्य शुद्ध हों, साथ बालोंको पवित्र बनावें, शुभ वाणी बोलें, और सब मिलकर आनन्दित होते हुए दीर्घायुष्यको प्राप्त करें ।

अथर्वा । प्रजापतिः । अनुष्टुप् ।

१७४ चिकित्सतु प्रजापतिर्दीर्घायुत्वाय चक्षसे । अथ. ६।६८।२

(दीर्घायुत्वाय चक्षसे) दीर्घायु और उत्तम दृष्टिके लिए (प्रजापतिः चिकित्सतु) प्रजापालक इसकी चिकित्सा करे ॥ १७४ ॥

'प्रजापति' राजा है, और वैद्य भी है। दीर्घ आयुके लिये राजा राष्ट्रमें उत्तम प्रबंध करे और वैद्य सहयोग दे । ये दोनों प्रजाको दीर्घायु प्राप्त होने योग्य प्रबंध करें ।

अथर्वा । शंखमणिः । पथ्यापंक्तिः ।

१७५ हिरण्यानामेकोऽसि सोमात्त्वमधि जज्ञिषे ।
रथे त्वमसि दर्शत इषुधौ रोचनस्त्वं
प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥ अथर्व. ४।१०।६

(हिरण्यानां एकः असि) तू सोने जैसे चमकनेवालोंमें एक है, (त्वं सोमात् अधि जज्ञिषे) तू सोमसे उत्पन्न हुआ है, (त्वं रथे दर्शतः) तू रथमें दिखाई देता है, (त्वं इषुधौ रोचनः) तु तूणीरमें चमकता है, (नः आयूंषि प्रतारिषत्) हमारी आयुओंको बढा ॥ १७५ ॥

अथर्वा । त्वष्टा । अनुष्टुप् ।

१७६ त्वष्टा जायामजनयत् त्वष्टास्यै त्वां पतिम् ।
त्वष्टा सहस्रमायूंषि दीर्घमायुः कृणोतु वाम् ॥

अथर्व. ६।७८।३

(त्वष्टा जायां अजनयत्) जगद्रचयिता देवने स्त्रीको उत्पन्न किया, और (त्वष्टा अस्यै त्वां पतिं) उसी ईश्वरने इसके लिए तुम पतिको उत्पन्न किया, (त्वष्टा वां सहस्रं आयूंषि) रचयिता ईश्वर तुम दोनोंको हजारों सुखोंकी देनेवाली (दीर्घं आयुः कृणोतु) दीर्घ आयु प्रदान करे ॥ १७६ ॥

परमेश्वर उपासकोंको दीर्घ आयु प्रदान करे ।

अथर्वा । पिप्पली । अनुष्टुप् ।

१७७ पिप्पली क्षिप्तभेषज्युत तिविद्धभेषजी ।
ताः देवाः समकल्पयन्नियं जीवितवा अलम् ॥

अथर्व. ६।१०९।१

(पिप्पली क्षिप्त-भेषजी) पिप्पली उन्माद रोगकी औषधि है, (उत अतिविद्ध-भेषजी) और महाव्याधिकी औषधि है (देवाः तां समकल्पयन्) देवोंने उसको समर्थ बनाया है कि (इयं जीवितवै अलम्) यह दीर्घ जीवनके लिए पर्याप्त है ॥ १७७ ॥

पिप्पलीके सेवन करनेसे दीर्घ आयु प्राप्त होती है ।

अथर्वा । पिप्पली । अनुष्टुप् ।

१७८ पिप्पल्यः समवदन्तायतीर्जनन्यादधि ।
यं जीवमश्नवामहै न स रिष्याति पूरुषः ॥

अथर्व. ६।१०९।२

(जनन्यात् अधि आयतीः) जन्मसे आती हुई (पिप्पल्यः समवदन्त) पिप्पली औषधियां बोलती हैं कि हमारी (यं जीवं अश्न-

वामहे) जिस जीवको खिलाया जावे, (सः पुरुषः न रिष्यति) वह पुरुष मरता नहीं ॥ १७८ ॥

पिप्पली खानेसे मनुष्य दीर्घ जीवन प्राप्त करता है।

अथर्वा । अग्निः । अनुष्टुप् ।

१७९ यदग्ने तपसा तप उप तप्यामहे तपः ।
प्रियाः श्रुतस्य भूयास्मायुष्मन्तः सुमेधसः ॥ अथ.७।६१।१

हे अग्ने ! (तपसा यत् तपः) तपसे जो तप किया जाता है उस (तपः उप तप्यामहे) तपको हम करते हैं, उससे हम (श्रुतस्य प्रियाः) ज्ञानके प्रिय (आयुष्मन्तः सुमेधसः) दीर्घायुषी और उत्तम बुद्धिमान् (भूयास्म) होवें ॥ १७९ ॥

तप करनेसे मनुष्य दीर्घ आयु और उत्तम बुद्धिमान् हो सकता है। शीतोष्ण आदि द्वन्द्वोंकी सहना तप है।

अथर्वा । अग्निः । अनुष्टुप् ।

१८० अग्ने तपस्तप्यामहे उप तप्यामहे तपः ।
श्रुतानि शृण्वन्तो वयमायुष्मन्तः सुमेधसः ॥
अथर्व. ७।६१।२

हे अग्ने ! (तपः तप्यामहे) हम तप करते हैं, और (तपः उप तप्यामहे) तप विशेष रीतिसे करते हैं, (वयं श्रुतानि शृण्वन्तः) हम ज्ञानोपदेश सुनते हुए (आयुष्मन्तः सुमेधसः) दीर्घायुवाले और उत्तम बुद्धिवाले हों ॥ १८० ॥

अथर्वा । वरणमणिः । अनुष्टुप् ।

१८१ इमं बिभर्मि वरणमायुष्माञ्छतशारदः ।
स मे राष्ट्रं च क्षत्रं च पशूनोजश्च मे दधत् ।
अथर्व. १०।३।१२

(इमं वरणं बिभर्मि) इस वरण मणिको मैं धारण करता हूं, जिससे

में (आयुष्मान् शतशारदः) दीर्घायु और शतायु होऊँ (सः मे राष्ट्रं क्षत्रं च) वह मेरे राष्ट्र और छात्र शक्तिको तथा (मे पशून् ओजः च दधत्) मेरे पशुओं और ओजको धारण करे अर्थात् बढावे ॥ १८१ ॥

वरण मणिको शरीरपर धारण करनेसे आयु दीर्घ होती है। वरण मणि कैसे निर्माण करते हैं इसका संशोधन होना चाहिये।

अथर्वा । भूमिः । पराविराट् ।

१८२ उपस्थास्ते अनमीवा अयक्ष्मा
अस्मभ्यं सन्तु पृथिवि प्रसूताः ।
दीर्घं न आयुः प्रतिबुध्यमाना वयं तुभ्यं बलिहृतः स्याम॥

अथर्व. १२।१।६२

हे पृथिवि ! (ते प्रसूताः) तुम्हारेमें उत्पन्न सब लोग (अनमीवाः) रोगरहित (अयक्ष्माः) क्षय रोग रहित, (अस्मभ्यं उपस्थाः) हमारे पास रहनेवाले (सन्तु) हों, (नः आयुः दीर्घं) हमारी उमर बडी हो, हम बहुत दिन जीवें, (वयं प्रतिबुध्यमानाः) हम ज्ञान विज्ञान युक्त हों, (तुभ्यं बलिहृतः स्याम) तुम्हें बलि देनेवाले हों ॥ १८२ ॥

रोग रहित रहनेसे दीर्घ आयु प्राप्त होती है।

अथर्वा । यमः । अनुष्टुप् ।

१८३ यमाय घृतवत्पयो राज्ञे हविर्जुहोतन ।
स नो जीवेष्वा यमेद्दीर्घमायुः प्र जीवसे ॥ अथर्व. १८।२।३

(यमाय राज्ञे) यम राजाके लिए (घृतवत् पयः) घीसे मिश्रित दूध तथा (हविः) हवि (जुहोतन) अर्पण करो, (सः) वह यम (प्रजीवसे) प्रकृष्टतया जीनेके लिए (जीवेषु) मनुष्योंमें (नः दीर्घं आयुः आ यमेत्) हमें दीर्घ जीवन देवे ॥ १८३ ॥

प्रदीप्त अग्निमें घीसे युक्त दूधका हवन करनेसे मनुष्योंको दीर्घ आयु मिलती है।

अथर्वा । पितरः । त्रिष्टुप् ।

१८४ सं विशन्त्विह पितरः स्वा नः
स्योनं कृण्वन्तः प्रतिरन्त आयुः ।
तेभ्यः शकेम हविषा नक्षमाणा
ज्योग्जीवन्तः शरदः पुरूचीः ॥ अथर्व. १८।२।२९

(इह) इस यज्ञमें (नः स्वाः पितरः) हमारी जातिके वृद्धगण (स्योनं कृण्वन्तः) सुख उत्पन्न करते हुए (सं विशन्तु) बैठें और (आयुः प्रतिरन्तः) आयुको दीर्घ करें । उसके बदलेमें (नक्षमाणाः) सर्वदा कार्य तत्पर हम (ज्योक् पुरूचीः शरदः) निरन्तर बहुत वर्षोंतक (जीवन्तः) जीवन धारण करते हुए (तेभ्यः) उन पितरोंकी (हविषा) हवि द्वारा (शकेम) पूजा करनेमें समर्थ बने रहें ॥ १८४ ॥

अथर्वा । यमः । त्रिष्टुप् ।

१८५ विवस्वान् नो अमृतत्वे दधातु परैतु मृत्युरमृतं न ऐतु ।
इमान् रक्षतु पुरुषाना जरिम्णो मो ष्वेषामसवो यमं गुः ॥
अथर्व. १८।३।६२

(विवस्वान्) सूर्य (नः अमृतत्वे दधातु) हमें अमरतामें स्थापित करे, (मृत्युः परा एतु) मृत्यु परे भाग जावे, (नः अमृतं एतु) हमें अमरता प्राप्त हो, वह विवस्वान् (इमान् पुरुषान्) इन पुरुषोंकी (आ जरिम्णः) वृद्धावस्था पर्यन्त (रक्षतु) रक्षा करे, (एषां असवः) इन पुरुषोंके प्राण (मा यमं गुः) यमको न प्राप्त हों ॥ १८५ ॥

सूर्य प्रकाशसे आयु दीर्घ होती है ।

अथर्वा । यमः । पुरो विराट् सतः पंक्तिः ।

१८६ पर्णो राजापिधानं चरूणामूर्जो बलं सह ओजो न आगन् ।
आयुर्जीवेभ्यो विदधद् दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥

अथर्व. १८।४।५३

(पर्णः राजा) पालक राजा (चरूणां अपिधानं) चरुओंका ढक्कन है, (ऊर्जः) अन्न, (बलं) बल (सहः) शत्रुको नष्ट करनेका सामर्थ्य (ओजः) ओज ये सब (नः आगन्) हमें प्राप्त हों, (शतशारदाय दीर्घायुत्वाय) सौ वर्षकी दीर्घायुके लिए (जीवेभ्यः) जीवितोंके लिए (आयुः विदधत्) आयु करे ॥ १८६ ॥

अन्न, बल, सामर्थ्य और ओज प्राप्त करके दीर्घ जीवन प्राप्त करनेका यत्न करना चाहिये ।

अथर्वा । पितरः । आस्तार पंक्तिः ।

१८७ आ यात पितरः सोम्यासो गम्भीरैः पथिभिः पितृयाणैः ।
आयुरस्मभ्यं दधतः प्रजां च रायश्च
पोषैरभि नः सचध्वम् ॥ अथर्व. १८।४।६२

(सोम्यासः पितरः) हे सोमपान करनेवाले पितरो ! (गंभीरैः) गंभीर (पितृयाणैः पथिभिः) पितृयाण मार्गोंसे (आयात) आओ, (अस्मभ्यं आयुः, प्रजां च रायः च दधतः) हमारे लिए आयुष्य, प्रजा तथा धन सम्पत्ति दो, (पोषैः) अन्य पुष्टियोंसे (नः) हमें (अभि सचध्वम्) चारों ओरसे युक्त करो ॥ १८७ ॥

दीर्घ आयु, धन, पोषण और सुप्रजा इनको प्राप्त करना चाहिये ।

अथर्वा । बृहस्पतिः । त्रिष्टुप् ।

१८८ परि धत्त धत्त नो वर्चसेमं जरामृत्युं कृणुत दीर्घमायुः ।
बृहस्पतिः प्रायच्छद्वास एतत् सोमाय राज्ञे परिधातवा उ ॥

अथर्व. १९।२४।४

(परि धत्त) वस्त्र पहनाओ, (नः इमं वर्चसा धत्त) हमारे इसको

तेजके साथ धारण करो, (जरामृत्युं दीर्घं आयुः कृणुत) वृद्धावस्थाके पश्चात् इसको मृत्यु आवे, और दीर्घ आयु प्राप्त हो, बृहस्पतिने (राज्ञे सोमाय परिधातवे उ) राजा सोमके पहननेके लिए (एतत् वासः प्रायच्छत्) वह वस्त्र दिया है ॥ १८८ ॥

जीर्ण वृद्धावस्थाके पश्चात् मृत्यु आवे। उसके पूर्व नहीं। ऐसी दीर्घ आयु प्राप्त करनी चाहिये।

अथर्वा । ब्रह्मणस्पतिः । त्रिष्टुप् ।

१८९ जरां सु गच्छ परिधत्स्व वासो
भवा गृष्टीनां अभिशस्ति पा उ ।
शतं च जीव शरदः पुरूची रायश्च पोषमुपसंव्ययस्व ॥
अथर्व. १९।२४।५

(जरां सु गच्छ) बुढापेको भली प्रकार प्राप्त हो, (वासः परि धत्स्व) वस्त्र पहनो, (गृष्टीनां अभि-शस्ति-पा उ भव) प्रजाओंका विनाशसे बचानेवाला हो, (शतं च जीव शरदः पुरूचीः) दीर्घ सौ वर्ष जीवित रह (रायः च पोषं उपसंव्ययस्व) धन और पुष्टिको प्राप्त हो ॥ १८९ ॥

धन और पोषणके साथ दीर्घ आयु प्राप्त करनी चाहिये। लोगोंका विनाशसे बचाव करना चाहिये।

अथर्वा। ब्रह्मणस्पतिः । त्रिष्टुप् ।

१९० परीदं वासो अधिथाः स्वस्तयेऽ-
भूर्वापीनामभिशस्ति पा उ ।
शतं च जीव शरदः पुरूचीर्वसूनि
चारुर्वि भजासि जीवन् ॥ अथर्व. १९।२४।६

(स्वस्तये इदं वासं परि अधिथाः) अपने कल्याणके लिए यह वस्त्र तूने पहना है, (वापीनां अभि शस्ति पा उ भव) कुंओंका विनाशसे बचाव करनेवाला तू हो गया है, (पुरूचीः शरदः शतं च

जीव) दीर्घ सौ वर्ष तक तू जीवित रह (जीवन् चारु वसूनि वि भजासि) जीवित रह कर सुन्दर धनोंको अपने मित्रोंमें बांट ॥ १९० ॥

अथर्वा । अग्निः हिरण्यं च । त्रिष्टुप् ।

१९१ अग्नेः प्रजातं परि यद्धिरण्यममृतं दध्रे अधि मर्त्येषु ।
य एनद्वेद स इदेनमर्हति जरामृत्युर्भवति यो बिभर्त्ति ॥

अथर्व. १९।२६।१

(अग्नेः प्रजातं) अग्निसे उत्पन्न हुआ (यत् हिरण्यं) जो सोना है वह (मर्त्येषु अमृतं परि दध्रे) मानवोंमें अमृत रखता है, (यः एनत् वेद) जो यह जानता है, (सः इत् एनं अर्हति) वही इसे धारण कर सकता है, (यः बिभर्तिः जरामृत्युः भवति) जो इसे धारण करता है, वह वृद्धावस्थाके पश्चात् मरता है ॥ १९१ ॥

शरीर पर सुवर्ण धारण करनेसे दीर्घ जीवन प्राप्त होता है।

अथर्वा ।अग्निः हिरण्यं च । त्रिष्टुप् ।

१९२ यद्धिरण्यं सूर्येण सुवर्णं प्रजावन्तो मनवः पूर्व ईषिरे ।
तत्त्वा चन्द्रं वर्चसा सं सृजत्यायुष्मान्भवति यो बिभर्त्ति ॥

अथर्व. १९।२६।२

(यत् हिरण्यं सुवर्णं) जिस उत्तम रंगवाले सोनेको (प्रजावन्तः पूर्वे मनवः सूर्येण ईषिरे) प्रजाओंके समेत पहले मनुष्योंने सूर्यसे पाया (तत् त्वा) वह तुझे (चन्द्रं वर्चसा सं सृजति) चमकता हुआ तेजसे युक्त करता है, (यः बिभर्ति आयुष्मान् भवति) जो इसे धारण करता है वह दीर्घायुवाला होता है ॥ १९२ ॥

अथर्वा । हिरण्यं । अनुष्टुप् ।

१९३ आयुषे त्वा वर्चसे त्वौजसे च बलाय च ।
यथा हिरण्यतेजसा विभासासि जनाँ अनु ॥

अथर्व. १९।२६।३

(आयुषे त्वा) आयुष्यके लिए तुझे (वर्चसे त्वा) तेजके लिए

तुझे (ओजसे च बलाय च) शक्ति और बलके लिए तुझे मैं पहनता हूँ (यथा) इसे धारण करके (जनां अनु) लोगोंमें (हिरण्य तेजसा विभासासि) सोनेके तेजसे तू चमकता रह ॥ १९३ ॥

शरीर पर सुवर्ण धारण करनेसे दीर्घ आयु, तेज, ओज और बल प्राप्त होता है।

अथर्वा । दर्भमणिः । अनुष्टुप् ।

१९४ इमं बध्नामि ते मणिं दीर्घायुत्वाय तेजसे ।
दर्भं संपत्नदम्भनं द्विषतस्तपनं हृदः ॥ अथर्व. १९।२८।१

(दीर्घायुत्वाय तेजसे) दीर्घायुकी प्राप्ति और तेजस्विताके लिए (इमं मणिं ते बध्नामि) इस मणिको तेरे शरीरपर बांधता हूँ, (दर्भं सपत्नदम्भनं) यह दर्भमणि शत्रुका नाश करती है, और (द्विषतः हृदः तपनं) द्वेषीके हृदयमें सन्ताप उत्पन्न करनेवाला है ॥ १९४ ॥

दर्भमणिको शरीरपर धारण करनेसे दीर्घायु तथा तेजस्विता प्राप्त होती है। इससे सब शत्रु दूर होते हैं। दर्भमणि तैयार करनेकी विधि संशोधन करके निश्चित करनी चाहिये।

अथर्वा । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

१९५ वर्च आ धेहि मे तन्वां३ सह ओजो वयो बलम् ।
इन्द्रियायं त्वा कर्मणे वीर्याय प्रतिगृह्णामि शतशारदाय ॥
अथर्व. १९।३७।२

(मे तन्वां) मेरे शरीरमें (वर्चः सहः) तेज और साहस (ओजः, वयः, बलं) ओज, शक्ति और बल (आ धेहि) स्थापन कर, (इन्द्रियाय) इन्द्रिय सामर्थ्यके लिए (कर्मणे वीर्याय) कर्म शक्ति और वीर्यके लिए (शत शारदाय) सौ वर्षकी आयुके लिए (त्वा प्रति गृह्णामि) तुझे मैं धारण करता हूं ॥ १९५ ॥

अग्नि— चित्रक औषधि, निम्ब, भल्लातक, अग्नि। यहां भल्लातक अभीष्ट होगा। वैद्य इसका विचार करें। शतभल्लातक, सहस्रभल्लातक ऐसे

प्रयोग दीर्घ आयुके लिये वैद्यक ग्रंथोंमें कहे हैं। इनसे साहस, ओज, बल आदि प्राप्त होकर दीर्घ आयु प्राप्त होती है।

अथर्वा। अग्निः। अनुष्टुप्।

१९६ ऊर्जे त्वा बलाय त्वौजसे सहसे त्वा।
अभिभूयाय त्वा राष्ट्रभृत्याय पर्यूहामि शतशारदाय॥

अथर्व. १९।३७।३

(ऊर्जे त्वा बलाय त्वा) सत्वके लिए बलके लिए (ओजसे सहसे त्वा) सामर्थ्य और साहसके लिये (अभिभूयाय त्वा राष्ट्रभृत्याय) शत्रुको हराने और राष्ट्र सेवा करनेके लिए तथा (शतशारदाय) सौ वर्षकी आयुके लिए तुझे मैं (पर्यूहामि) पहनता हूँ॥ १९६॥

सिन्धुद्वीपः। अग्निः। अनुष्टुप्।

१९७ सं मांग्ने वर्चसा सृज सं प्रजया समायुषा।
विद्युर्मे अस्य देवा इन्द्रो विद्यात् सह ऋषिभिः॥

अथर्व. ७।८९।२

हे अग्ने! (मा वर्चसा प्रजया आयुषा) मुझे तेज, सन्तति और आयुसे (सं सृज) संयुक्त कर (देवाः अस्य मे विद्युः) देव यह मेरा हेतु जानें, तथा (ऋषिभिः सह इन्द्रः विद्यात्) ऋषियोंके साथ इन्द्र मुझे जाने॥ १९७॥

सिन्धुद्वीपः। आपः। गायत्री।

१९८ आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे३ मम।
ज्योक्च सूर्यं दृशे॥ अथर्व. १।६।३

हे (आपः) जलो! (भेषजं पृणीत) औषध दो और (मम तन्वे) मेरे शरीरके लिए (वरूथं) संरक्षण दो जिससे मैं (ज्योक् सूर्यं दृशे) दीर्घ कालतक सूर्यको देखता रहूं॥ १९८॥

जल चिकित्सा करनेसे रोग दूर होते हैं और दीर्घ आयु मिलती है।

भृग्वंगिराः । चन्द्रमाः । अनुष्टुप् ।

१९९ आयुषायुष्कृतां जीवायुष्मान्जीव मा मृथाः ।
प्राणेनात्मन्वतां जीव मा मृत्योरुदगा वशम् ॥
अथर्व. १९।२७।८

(आयुष्कृतां आयुषा जीव) आयु बनानेवालोंकी आयुसे तू जीवित रह, तू (आयुष्मान् जीव) दीर्घायुवाला होकर जीवित रह (मा मृथाः) मर मत, (आत्मन्वतां प्राणेन जीव) आत्मावालोंके प्राणोंसे जीवित रह (मृत्योः वशं मा उदगाः) मृत्युके वशमें न जा ॥ १९९ ॥

ब्रह्मा । सूर्यः । अनुष्टुप् ।

२०० परि त्वा रोहितैर्वर्णैर्दीर्घायुत्वाय दध्मसि ।
यथायमरपा असदथो अहरितो भुवत् ॥ अथर्व. १।२२।२

(रोहितैः वर्णैः) लाल रंगोंसे (त्वा दीर्घायुत्वाय परिदध्मसि) तुझे दीर्घायुके लिए घेरते हैं, (यथा अयं अ-रपः) जिससे यह नीरोग हो जाए और (अ-हरितः भुवत्) पीलिया रोगसे मुक्त हो जाए॥२००॥

यह वर्ण चिकित्साका उपदेश देनेवाला मंत्र है। पीलक रोगकी चिकित्सा लाल रंगसे होती है और वह रोगी नीरोग हो दीर्घ आयुको प्राप्त करता है।

ब्रह्मा । आशापालाः (वास्तोष्पतिः) । परानुष्टुप् त्रिष्टुप् ।

२०१ स्वस्ति मात्र उत पित्रे नो अस्तु
स्वस्ति गोभ्यो जगते पुरुषेभ्यः ।
विश्वं सुभूतं सुविदत्रं नो अस्तु
ज्योगेव दृशेम सूर्यम् ॥ अथर्व. १।३१।४

(नः मात्रे उत पित्रे स्वस्ति अस्तु) हमारे माता तथा पिताके लिए कल्याण हो, तथा (गोभ्यः जगते पुरुषेभ्यः स्वस्ति (गौवोंके लिए, चलने फिरनेवालोंके लिए और पुरुषोंके लिए सुख हो, (नः विश्वं सुभूतं

सुविदत्रं अस्तु) हम सबके लिए सब प्रकारका ऐश्वर्य और उत्तम ज्ञान हो, और हम (सूर्यं ज्योक् एव दृशेम) सूर्यको बहुत काल तक देखते रहें अर्थात् हम दीर्घायुषी हों ॥ २०१ ॥

ब्रह्मा । प्राणापानायूंषि । एक पादासुरी त्रिष्टुप् ।

२०२ प्राणापानौ मृत्योर्मा पातं स्वाहा ॥ अथर्व. २।१६।१

(प्राणापानौ मृत्योः मा पातं) प्राण और अपान मृत्युसे मेरी रक्षा करें, (स्वा-हा) मैं आत्म समर्पण करता हूं ॥ २०२ ॥

ब्रह्मा । प्राणापानायूंषि । एकपादासुरी त्रिष्टुप् ।

२०३ आयुरस्यायुर्मे दाः स्वाहा ॥ अथर्व. २।१७।४

(आयुः असि) तू आयु अर्थात् जीवनशक्ति है, (आयुः मे दाः) मुझे जीवनशक्ति दे ॥ २०३ ॥

ब्रह्मा भृग्वंगिराश्च । आयुष्याम् । अनुष्टुप् ।

२०४ प्र विशतं प्राणापानावनड्वाहाविव व्रजम् ।
व्यन्ये यन्तु मृत्यवो यानाहुरितराञ्छतम् ॥ अथर्व ३।११।५

हे (प्राणापानो) प्राण और अपान ! (प्र विशतं) प्रवेश करो, जिस प्रकार (अनड्वाहौ व्रजं इव) बैल गोशालासे प्रवेश करते हैं, (अन्ये मृत्यवः वि यन्तु) दूसरे अनेक अपमृत्यु दूर हो जावें, (यान् इतरान् शतं आहुः) जिनको इतर सौ प्रकारके कहा जाता है ॥ २०४ ॥

प्राणायामके अभ्यास करनेसे प्राण और अपानकी शक्ति बढती है और प्राण तथा अपानकी शक्ति बढनेसे सब रोग दूर होते हैं और दीर्घ आयु प्राप्त होती है ।

ब्रह्मा भृग्वंगिराः । आयुष्यम् । अनुष्टुप् ।

२०५ इहैव स्तं प्राणापानौ माप गातमितो युवम् ।
शरीरमस्यांगानि जरसे वहतं पुनः ॥ अथर्व. ३।११।६

हे (प्राणापाना) प्राण और अपान ! (युवं इह एव स्तं) तुम

दोनों यहीं पर रहो, (इतः मा अप गातं) यहांसे दूर मत जाओ, (अस्य शरीरं) इसका शरीर और (अंगानि) सब अवयव (जरसे पुनः वहतं) वृद्धावस्थाके लिए फिर ले चलो ॥ २०५ ॥

ब्रह्मा भृग्वंगिराः । आयुष्यम् । उष्णिक्बृहतीगर्भा पथ्यापंक्तिः ।

२०६ जरायै त्वा परिददामि जरायै नि धुवामि त्वा ।
जरा त्वा भद्रा नेष्ट व्यन्ये यन्तु मृत्यवो
यानाहुरितराञ्छतम् । अथर्व. ३।११।७

(त्वा जरायै परि ददामि) तुझे वृद्धावस्थाके लिए अर्पण करता हूं, (त्वा जरायै नि धुवामि) तुझको वृद्धावस्थाके लिए पहुंचाता हूं । (त्वा जरा भद्रा नेष्ट) तुझे वृद्धावस्था सुख देवे, (अन्ये मृत्यवः वि यन्तु) अन्य अपमृत्यु दूर हो जावें, (यान् इतरान् शतं आहुः) जिनको इतर सौ प्रकारके कहा जाता है ॥ २०६ ॥

त्वा जरा भद्रा नेष्ट— तुझे वृद्ध अवस्था सुखकारक प्राप्त हो । प्रयत्न इसलिये करने चाहिये कि वृद्धावस्था सुखकारक हो । शरीरके किसी अंगमें वृद्धावस्थामें कोई कष्ट न हो । तारुण्यमें सब अंगोंको योग्य व्यायाम देनेसे यह अवस्था प्राप्त होती है । वृद्ध अवस्थामें मालीश भी करवानी चाहिये ।

ब्रह्मा भृग्वंगिराश्च । आयुष्यम् । त्र्यवसाना षट्पदा बृहतीगर्भा जगती ।

२०७ अभि त्वा जरिमाहित गामुक्षणमिव रज्ज्वा ।
यस्त्वा मृत्युरभ्यधत्त जायमानं सु पाशया ।
तं ते सत्यस्य हस्ताभ्यामुदमुंचद् बृहस्पतिः ॥
अथर्व. ३।११।८

(उक्षणं गां इव रज्ज्वा) जैसे बैलको अथवा गौको रस्सीसे बांध देते हैं, उस प्रकार (जरिमा त्वा अभि आहित) बुढापेने तुझको बांधा है, (यः मृत्युं जायमानं त्वा सुपाशया अभ्यधत्त) जिस मृत्युने उत्पन्न होते हुए ही तुझको उत्तम पाशसे बांध रखा है, (ते तं) तेरे उस

+

मृत्युको (सत्यस्य हस्ताभ्यां बृहस्पतिः उदमुंचत्) सत्यके दोनों हाथोंसे बृहस्पति छुडा देता है ॥ २०७ ॥

प्रत्येक मनुष्यके साथ मृत्यु बंधा रहता है। बृहस्पति अर्थात् ज्ञानपति अपने प्रयत्नसे उस मृत्युके संबंधको ढीला करके मृत्युको दूर कर सकता है। ज्ञानसे यह बन सकता है।

ब्रह्मः। शाला। शक्वरीगर्भा जगती।

२०८ ऋतेन स्थूणामधि रोह वंशोग्रो
विराजन्नप वृङ्क्ष्व शत्रून्।
मा ते रिषन्नुपसत्तारो गृहाणां
शाले शतं जीवेम शरदः सर्ववीराः ॥ अथर्व. ३।१२।६

हे (वंश) वांस! तू (ऋतेन स्थूणां अधिरोह) अपने सीधेपनसे अपने आधार पर चढ और (उग्रः विराजन् शत्रून् अपवृङ्क्ष्व) उग्र बनकर प्रकाशता हुआ शत्रुओंको हटा दे। (ते गृहाणां उप-सत्तारः मा रिषन्) तेरे घरोंके आश्रयसे रहनेवाले हिंसित न हों, हे शाले! हम (सर्ववीराः शतं शरदः जीवेम) सब वीरोंसे युक्त होकर सौ वर्ष तक जीवें ॥ २०८ ॥

'वंश' वांशका नाम है। मानव शरीरमें 'पृष्ठ वंश' पीठमें एक वांस है। उस पृष्ठ वंशको सरल सीधा रखनेसे मृत्यु दूर हो सकती है। बैठते, चलते, फिरते, सोते आदि सब व्यवहार करते समय इस पीठके वांसको सीधा रखना चाहिये और टेढा होने नहीं देना चाहिये।

ब्रह्मा। अग्निः। अनुष्टुप्।

२०९ वि देवा जरसावृतन् वि त्वमग्ने अरात्या।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥ अथर्व. ३।३१।१

(देवाः जरसा वि अवृतन्) देव वृद्धावस्थासे दूर रहते हैं। (अग्ने! त्वं अ-रात्या वि) हे अग्ने! तू कंजूसीसे तथा शत्रुसे दूर रह, (अहं सर्वेण पाप्मना वि) मैं सब पापोंसे दूर रहूं, और (आयुषा सं) दीर्घ आयुसे संयुक्त होऊं ॥ २०९ ॥

वृद्धावस्थाको दूर करना यह देवत्वका लक्षण है। कंजूसीको और सब प्रकारके शत्रुओंको तथा सब पापोंको दूर करना चाहिये। इससे देवत्व प्राप्त होता है और दीर्घजीवन प्राप्त होता है।

ब्रह्मा। शक्तः। अनुष्टुप्।

२१० व्यार्त्या पवमानो वि शक्रः पापकृत्यया।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा॥
अथर्व. ३।३१।२

(पवमानः आर्त्या वि) शुद्धता करनेवाला पुरुष पीडासे दूर रहता है, (शक्रः पाप-कृत्यया वि) समर्थ मनुष्य पाप कर्मसे दूर रहता है, उसी प्रकार सब पापोंसे और सब रोगोंसे मैं दूर रहूं और (आयुषा सं) दीर्घायुसे सम्पन्न होऊं॥ २१०॥

पीडा और पाप कर्मोंसे दूर रहनेसे, सब रोग दूर होते हैं और दीर्घायुष्य प्राप्त होता है।

ब्रह्मा। आयुः। अनुष्टुप्।

२११ आयुष्मतामायुष्कृतां प्राणेन जीव मा मृथाः।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा॥ अथर्व.३।३१।८

(आयुष्मतां आयुष्कृतां प्राणेन जीव) दीर्घायु बढानेवाले और आयुष्य बढानेवाले जो होते हैं उनके प्राणके साथ तू जीता रह, (मा मृथाः) मत मर, मैं भी उसी प्रकार सब पापोंको और रोगोंको दूर करके (आयुषा सं) दीर्घायुवाला बनूं॥ २११॥

अपनी आयु बढानेवाले जो पुरुषार्थी वीर हैं, उनके अन्दर जो उत्साहमयी जीवन शक्ति होती है वैसी शक्ति प्राप्त करनी चाहिये और जलदी न मरनेकी इच्छा शक्तिको प्रबल करनी चाहिये। इस प्रकार करनेसे मनुष्यकी आयु दीर्घ होती है।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२१२ प्राणेन प्राणतां प्राणेहैव भव मा मृथाः ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥

अथर्व. ३।३१।९

(प्राणतां प्राणेन प्राण) जीवित रहनेवालोंके प्राणसे तू जीवित रह (इह एव-भव) यहीं प्रभावशाली हो, और (मा मृथाः) मत मर, उसी प्रकार मैं सब पापों और रोगोंको दूर करके (आयुषा सं) दीर्घायु बनूं ॥ २१२ ॥

इसी पृथिवीपर प्रभावशाली बनकर रहना चाहिये अपनी जीवन-शक्तिको जो प्रभावी बनाते हैं, उनके समान अपनी प्राण शक्तिको प्रभावी बनानी चाहिये । जिससे शीघ्र मत्यु आ जाय ऐसा कोई कार्य नहीं करना चाहिये । ऐसा करनेसे दीर्घ आयु प्राप्त होती है ।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२१३ उदायुषा समायुषोदोषधीनां रसेन ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥ अथर्व.३।३१।१०

(आयुषा उत्) आयुष्यसे उन्नति प्राप्त कर, (आयुषा सं) दीर्घायुसे युक्त हो, (ओषधीनां रसेन उत्) औषधियोंके रससे उन्नति प्राप्त कर, इसी रीतिसे मैं भी सब पापों और रोगोंसे दूर होकर दीर्घायुवाला बनूं ॥ २१३ ॥

औषधियोंके रसोंका सेवन करो । ये औषधियां आयुष्यकी वृद्धि करनेवाली हों । इस ओषधियोंके रसके सेवनसे आयुष्यकी वृद्धि निःसंदेह होगी ।

ब्रह्मा । पर्जन्यः । अनुष्टुप् ।

२१४ आ पर्जन्यस्य वृष्ट्योदस्थामामृता वयम् ।
व्यहं सर्वेण पाप्मना वि यक्ष्मेण समायुषा ॥ अथर्व३।३१।११

(वयं पर्जन्यस्य वृष्ट्या) हम पर्जन्यकी वृष्टिसे (आ उत् अस्थाम)

उन्नतिको प्राप्त करें और (अमृताः) अमर हों, (अहं सर्वेण पाप्मना वि) मैं सब पापोंसे दूर रहूँ, (यक्ष्मेण वि) यक्ष्मादि रोगोंसे दूर रहूँ, (आयुषा सं) और दीर्घायुसे युक्त होऊँ ॥ २१४ ॥

हमें पापोंसे बचना चाहिये। इससे रोग दूर होते हैं। पर्जन्यसे उत्पन्न हुए धान्य खाकर पुष्ट होना चाहिये और आयुष्य बढानेका उपाय करना चाहिये।

ब्रह्मा। आत्मा। विराडुष्णिक्बृहतीगर्भा पंचपदा जगती।

२१५ सूर्यो मे चक्षुर्वातः प्राणोऽन्तरिक्षमात्मा पृथिवी शरीरम्।
अस्तृतो नामाहमयमस्मि
स आत्मानं निदधे द्यावापृथिवीभ्यां गोपीथाय ॥

अथर्व. ५।९।७

(सूर्यः मे चक्षुः) सूर्य मेरी आंख है, (वातः प्राणः) वायु प्राण है, (अन्तरिक्षं आत्मा) अन्तरिक्ष आत्मा है, और (पृथिवी शरीरं) पृथ्वी मेरा शरीर है, (अ-स्तृतः नाम अयं अहं अस्मि) अमर नामवाला यह मैं हूं (द्यावापृथिवीभ्यां गोपीथाय) द्यावापृथिवी द्वारा सुरक्षित होनेके लिए (सः आत्मानं निदधे) वह मैं अपने आपको निःशेष देता हूं ॥ २१५ ॥

सूर्यसे आंख बनी है, वायुसे प्राण बना है, पृथिवीसे स्थूल शरीर बना है, इस तरह सब अंग अन्य देवताओंसे बने हैं। इस शरीरमें आत्मा अमर है और वह इस शरीरका शासक है। मैं आत्मा हूं यह जानकर, इस शरीरका संचालन करनेवाला मैं हूं यह समझकर इस शरीरको दीर्घजीवी बनाना चाहिये।

ब्रह्मा । आत्मा । पुरस्कृतित्रिष्टुब्बृहतीगर्भा चतुष्पदा व्यवसाना जगती ।

२१६ उदायुरुद्बलमुत्कृत् कृत्यामुन्मनीषामुदिन्द्रियम् ।
आयुष्कृदायुष्पत्नी स्वधावन्तौ गोपा मे स्तं गोपायतं मा ।
आत्मसदौ मे स्तं मा मा हिंसिष्टम् ॥ अथर्व. ५।९।८

मेरी (आयुः उत्) आयु उत्तम (बलं उत्) बल उत्तम (कृतं उत्) किया हुआ कर्म उत्तम (कृत्यां उत्) काटनेकी शक्ति उत्तम (मनीषां उत्) बुद्धि उत्तम (इन्द्रियं उत्) इन्द्रियें उत्तम होवें । (आयुष्कृत् आयुष्पत्नी) आयुकी वृद्धि करनेवाले और जीवनका पालन करनेवाले तथा (स्वधावन्तौ) अपनी धारक शक्ति बढानेवाले तुम दोनों द्यावापृथिवी (मे गोपास्तं) मेरे रक्षक होवो, (मा गोपायतां) मेरी रक्षा करो, (मे आत्मसदौ स्तं) मेरेमें रहनेवाले होवो और (मा मा हिंसिष्टं) मेरा विनाश कभी न करो ॥ २१६ ॥

मेरी आयु, बल, कर्म कर्मशक्ति, बुद्धि इंद्रिय ये सब उत्तम अवस्थामें रहें । ये सब आयुकी वृद्धि करें । किसी भी कारण मेरी आयु कम न हो ।

ब्रह्मा । दैव्या ऋषयः । त्रिष्टुप् ।

२१७ मा नो हासिषुर्ऋषयो दैव्या ये
तनूपा ये नस्तन्वस्तनूजाः ।
अमर्त्या मर्त्यां अभि नः सचध्वमायुर्धत्त प्रतरं जीवसे नः ॥
अथर्व. ६।४१।३

(ये तनूपाः) जो शरीरकी रक्षा करनेवाले हैं, (ये नः तन्वः तनूजाः) जो हमारे शरीरमें उत्पन्न हुए हैं, वे (दैव्याः ऋषयः) दिव्य ऋषि (नः मा हासिषुः) हमें न छोडें । ये (अमर्त्याः मर्त्यान् नः अभि सचध्वं) अमर देव हम मरनेवालोंसे मिलकर रहें, (नः प्रतरं आयुः जीवसे धत्त) हमें उत्कृष्ट आयु दीर्घ जीवनके लिए देवें ॥ २१७ ॥

शरीरमें शरीरके रक्षक ये दिव्य सप्त ऋषि–सात इंद्रियां हैं । वे ऋषि दिव्य शक्तिसे युक्त हैं । वे प्रयत्न करके हमारी आयु बढावें ।

कबन्धः । सान्तपनाग्निः । अनुष्टुप् ।

२१८ अग्नेः सान्तपनस्याहमायुषे पदमा रभे ।
अद्धातिर्यस्य पश्यति धूममुद्यन्तमास्यतः ॥ अथर्व. ६।७६।२

(सान्तपनस्य अग्नेः पदं) तपनेवाले अग्निके पदको मैं (आयुषे आरभे) आयुष्यके लिए प्राप्त करता हूं । (यस्य आस्यतः) जिसके मुखसे (उद्यन्तं धूमं अद्धातिः पश्यति) निकलनेवाले धुंएको सत्यज्ञानी देखता है ॥ २१८ ॥

अग्निकी उष्णता शरीरको धारण करती है । वह शरीरमें रहे और शरीरको दीर्घजीवी बनावे ।

कबन्धः । सान्तपनाग्निः । अनुष्टुप् ।

२१९ नैनं घ्नन्ति पर्यायिणो न सन्नां अव गच्छति ।
अग्नेर्यः क्षत्रियो विद्वान्नाम गृह्णाति आयुषे ॥ अथर्व. ६।७६।४

(यः विद्वान् क्षत्रियः) जो ज्ञानी क्षत्रिय (अग्नेः नाम आयुषे गृह्णाति) अग्निका नाम आयुके लिए लेता है, (एनं) इस मनुष्यको (पर्यायिणः न घ्नन्ति) घेरनेवाले शत्रु मार नहीं सकते, और (सन्नान् न अवगच्छति) समीप बैठनेवाले इसको जानते भी नहीं ॥ २१९ ॥

अथर्वा । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

२२० ज्येष्ठघ्न्यां जातो विचृतोर्यमस्य
मूलबर्हणात् परि पाह्येनम् ।
अत्येनं नेषद् दुरितानि विश्वा
दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥ अथर्व. ६।११०।२

(ज्येष्ठ-घ्न्यां जातः) ज्येष्ठका नाश करनेवालीमें यह उत्पन्न हुआ (विचृतोः यमस्य मूल बर्हणात्) विशेष हिंसक यमके मूल छेदनसे (एनं परि पाहि) इसकी रक्षा कर । (विश्वा दुरितानि एनं अति नेषत्) सब दुःखोंसे इसे पार कर और (दीर्घायुत्वाय शतशारदाय) सौ वर्षकी दीर्घायुके लिए इसको पहुंचाओ ॥ २२० ॥

कोई पाप मनुष्यके पास न आवे। अर्थात् मनुष्य कभी पाप न करे। और दीर्घायु प्राप्त करे।

ब्रह्मा। आयुः। अनुष्टुप्।

२२१ उप प्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतीवृधम्।
अगन्म बिभ्रतो नमो दीर्घमायुः कृणोतु मे ॥ अथर्व. ७।३२।१

(प्रियं पनिप्नतं) प्रिय स्तुतिके योग्य (युवानं आहुतीवृधं) तरुण और आहुतियोंसे बढनेवाले अग्निके समीप (नमः बिभ्रतः उप अगन्म) अन्न धारण करते हुए हम प्राप्त होते हैं। वह (मे दीर्घं आयुः कृणोतु) मेरी दीर्घ आयु करे ॥ २२१ ॥

यज्ञका अग्नि जिसमें उत्तम हविका अर्पण होता है वह यज्ञाग्नि हमारी आयु दीर्घ करे।

ब्रह्मा। मरुतः, पूषा, बृहस्पतिः। अनुष्टुप्।

२२२ सं मा सिंचन्तु मरुतः सं पूषा सं बृहस्पतिः।
सं मायमग्निः सिंचतु प्रजया च
धनेन च दीर्घमायुः कृणोतु मे ॥ अथर्व. ७।३३।१

(मरुतः मा सं सिंचन्तु) मरुत् मेरे ऊपर प्रजा और धनका सिंचन करे, (पूषा बृहस्पतिः सं सं) पूषा और बृहस्पति मेरे ऊपर उसीका उत्तम रीतिसे सिंचन करें, (अयं अग्निः प्रजया च धनेन च मा सं सिंचतु) यह अग्नि मेरे ऊपर प्रजा और धनका उत्तम सिंचन करे, और (मे दीर्घं आयुः कृणोतु) मेरी आयु दीर्घ करे ॥ २२२ ॥

सब देव मेरी आयु दीर्घ करनेमें मुझे सहायता देवें।

ब्रह्मा । आयुः, बृहस्पतिः, अश्विनौ । त्रिष्टुप् ।

२२३ अमुत्रभूयादधि यद् यमस्य बृहस्पतेरभिशस्तेरमुंचः ।
प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्मद्
देवानामग्ने भिषजा शचीभिः ॥ अथर्व. ७।५३।१

हे बृहस्पते ! हे अग्ने ! तू (यत् अमुत्र-भूयात्) जो परलोकमें होनेवाले (यमस्य अभिशस्तेः अमुंचः) यमकी यातनाओंसे मुक्त करता है, हे (देवानां भिषजौ अश्विनौ) देवोंके वैद्य अश्विनी देवो ! (शचीभिः मृत्युं अस्मत् प्रति औहतां) शक्तियोंसे मृत्युको हमसे दूर करो ॥ २२३ ॥

वैद्य अपनी औषधियोंकी शक्तियोंसे मृत्युको दूर करें और हमारी आयु दीर्घ करें ।

ब्रह्मा । आयुः त्रिष्टुप् ।

२२४ सं क्रामतं मा जहीतं शरीरं
प्राणापानौ ते सयुजाविह स्ताम् ।
शतं जीव शरदो वर्धमानोऽग्निष्टे
गोपा अधिपा वसिष्ठः ॥ अथर्व. ७।५३।२

हे प्राण और अपानो ! (सं क्रामतां) शरीरमें उत्तम प्रकार संचार करो, (शरीरं मा जहीतं) शरीरको मत छोडो, वे दोनों (इह ते सयुजौ स्ताम्) यहां तेरे सहचारी होकर रहें, (वर्धमानः शरदः शतं जीव) बढता हुआ तू सौ वर्ष जीवित रह, (ते अधिपाः वसिष्ठः गोपाः अग्निः) तेरा अधिपति निवासक और रक्षक तेजस्वी देव है ॥ २२४ ॥

प्राणायाम करनेसे दीर्घ जीवन होता है । 'श्वास' अन्दर जानेवाले प्राणको कहते हैं और 'उच्छ्वास' बाहेर आनेवाले प्राणको कहते हैं । ये श्वास और उच्छ्वास (पूरक और रेचक) जहांतक हो वहांतक दीर्घ

करने चाहिये। बीचमें थोडा कुंभक करना चाहिये। प्रातः काल, मध्याह्नमें और सायंकाल, यह प्राणायाम करनेसे दीर्घ जीवन प्राप्त होनेमें सहायता होती है।

ब्रह्मा। आयुः। भुरिक्।

२२५ आयुर्यत् ते अतिहितं पराचैरपानः
प्राणः पुनरा तावितां।
अग्निष्टदाहार्निर्ऋतेरुपस्थात्
तदात्मनि पुनरा वेशयामि ते ॥ अथर्व. ७।५३।३

(ते यत् आयुः पराचै अतिहितं) तेरी जो आयु विरुद्ध गतियोंसे घट गयी है, उस स्थान पर (तो प्राणः अपानः पुनः आ इतां) वे प्राण और अपान पुनः आवें, (अग्निः निर्ऋतेः उपस्थात् तत् पुनः आहाः) वह तेजस्वी देव दुर्गतिके समीपसे पुनः लाता है, (ते आत्मनि तत् पुनः आवेशयामि) तेरे अन्दर उसको पुनः हम स्थापित करते हैं ॥ २२५ ॥

दुराचार करनेसे आयु कम होती है। अतः दुराचार नहीं करने चाहिये। पर दुराचार हो गये, तो भी पुनः दीर्घ श्वसन–प्राणायाम आदि योग्य रीतिसे करनेसे आयु दीर्घ होती है। अतः जिनके जीवनमें दुराचार हुए है वे पुनः प्राणायामादि करने लग जांय तो अवश्य लाभ होगा।

ब्रह्मा। आयुः। उष्णिग्गर्भार्षी पंक्तिः।

२२६ मेमं प्राणो हासीन्मो अपानोवहाय परा गात्।
सप्तर्षिभ्य एनं परि ददामि त
एनं स्वस्ति जरसे वहन्तु ॥ अथर्व. ७।५३।४

(इमं प्राणः मा हासीत्) इसको प्राण न छोडे, और (अपानः अवहाय परा मा गात्) अपान भी इसे छोडकर दूर न जावे, (सप्तर्षिभ्यः

एनं परिददामि) सात ऋषियोंके समीप इसको देता हूं, (ते एनं जरसे स्वस्ति वहन्तु) वे इसे वृद्धावस्था तक सुख पूर्वक ले जावें ॥ २२६ ॥

प्राण और अपान शरीरमें ठीक रहने चाहिये। प्राणायामसे प्राण और अपान ठीक होते हैं। प्राणकी गति योग्य करनेसे अपानकी गति ठीक होती है। सात ऋषि दो आंख, दो कान, दो नाकके छेद और एक मुख ये हैं। प्राण ठीक होनेसे ये सात ऋषि उत्तम कार्य करते हैं। प्राण और ये इन्द्रिय मिलकर दीर्घ जीवन करनेमें सहायता करते हैं। ये इंद्रिय सदाचारमें रखने चाहिये और प्राणायामका अभ्यास करना चाहिये। जिससे दीर्घ जीवन सिद्ध होता है।

ब्रह्मा। आयुः। अनुष्टुप्।

२२७ प्र विशतं प्राणापानावनड्वाहाविव व्रजम्।
अयं जरिम्णः शेवधिररिष्ट इह वर्धताम् ॥

अथर्व. ७।५३।५

हे प्राण और अपान! (व्रजं अनड्वाहो इव प्रविशतं) जैसे गोशालामें बैल घुमते हैं, उस प्रकार तुम दोनों शरीरमें प्रविष्ट होवो, (अयं जरिम्णः शेवधिः) यह प्राण वार्धक्य तककी पूर्ण आयुका खजाना है, यह (इह अरिष्टः वर्धतां) यहां न घटता हुआ बढे ॥ २२७ ॥

प्राण और अपान शरीरमें वेगसे घुसें। प्राण छातीमें प्रविष्ट होता है और अपान मलाशयमें कार्य करता है। शौच जानेके समय उच्छ्वास करके प्राणको जहांतक होसके वहां तक बाहेर ही रोका जाय, तो जलदी शौच आता है और शोचाशय एकदम स्वच्छ होता है। प्राणके बाह्य कुंभक करनेसे शौच शुद्धि होनेमें बडी सहायता होती है। प्राणायामसे छातीमें रक्त शुद्ध होता है। इस तरह प्राण और अपान शरीरमें बडा महत्वका कार्य करते हैं। इनका योग्य रीतिसे आयाम किया जाय, तो शरीर दीर्घायु प्राप्त करके सुखी हो सकता है।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२२८ आ ते प्राणं सुवामसि परा यक्ष्मं सुवामि ते ।
आयुर्नो विश्वतो दधदयमग्निर्वरेण्यः ॥ अथ. ७।५३।६

(ते प्राणं आ सुवामसि) तेरे प्राणको मैं प्रेरित करता हूं, (ते यक्ष्मं परा सुवामि) तेरे क्षय रोगको मैं दूर करता हूं, (अयं वरेण्यः अग्निः) यह श्रेष्ठ अग्नि (नः आयुः विश्वतः दधत्) हमारे अन्दर आयु सब प्रकारसे धारण करे ॥ २२८ ॥

शरीरमें प्राणायाम द्वारा प्राणको शरीर रक्षणके कार्यमें लगाना चाहिये। प्राणायामसे रक्त शुद्ध होता है, जिससे अनेक रोग दूर होते हैं। तथा शरीरकी उष्णता रूपी 'वरेण्य अग्निः' शरीरमें कार्य करनेके योग्य अवस्थामें रहता है। यही अग्नि मानवोंकी आयु वीर्य करता है।

प्राणायामसे प्राणको बलवान् बनाना, रोगोंको दूर करना, मन उत्साहित रखना और आयुको बढाना ये मानवके कर्तव्य यहां बताये हैं।

ब्रह्मा । आत्मा । त्रिष्टुप् ।

२२९ को अस्या नो द्रुहोऽवद्यवत्या
उन्नेष्यति क्षत्रियो यस्य इच्छन् ।
को यज्ञकामः क उ पूर्त्तिकामः
को देवेषु वनुते दीर्घमायुः अथर्व. ७।१०३।१

(कः प्रजापतिः क्षत्रियः वस्य इच्छन्) प्रजापालक क्षत्रिय प्रजाका धन बढानेकी इच्छा करता हुआ (अस्याः अवद्यवत्याः द्रुहः नः उत् नेष्यति) परस्परके द्रोह रूप इस निंदनीय दुर्गतिसे हमें ऊपर उठावेगा, (कः= प्रजापतिः यज्ञकामः) प्रजापालनरूप यज्ञकर्ता (उ कः पूर्त्तिकामः) और वही प्रजापालक हमारी पूर्णता करनेवाला (देवेषु कः दीर्घं आयुः वनुते) देवोंके बीचमें प्रजापालक ही दीर्घायु देता है ॥ २२९ ॥

ब्रह्मा । आयुः । त्रिष्टुप् ।

२३० अन्तकाय मृत्यवे नमः प्राणा अपाना इह ते रमन्ताम् ।
इहायमस्तु पुरुषः सहासुना सूर्यस्य भागे अमृतस्य लोके ॥
अथ. ८।१।१

(मृत्यवे अन्तकाय नमः) मृत्यु रूपसे सबका अन्त करनेवाले परमेश्वरको नमस्कार है, हे मनुष्य ! (ते प्राणाः अपानाः इह रमन्तां) तेरे प्राण और अपान यहां शरीरमें आनन्दसे रहें, (अयं पुरुषः असुना सह) यह मनुष्य प्राणके साथ (इह अमृतस्य लोके सूर्यस्य भागे अस्तु) इस अमृतके स्थान रूपी सूर्यके प्रकाशके भागमें रहे ॥ २३० ॥

प्राण और अपान इस शरीरमें कार्यक्षम स्थितिमें रहें। अपना अपना कार्य उत्तम रीतिसे करते रहें। यह मनुष्य उत्तम बलवान प्राण शक्तिके साथ जहां सूर्यप्रकाश होता है वहां रहे। सूर्यप्रकाश अमृतका स्थान है अतः सूर्यप्रकाशमें रहनेवाला मनुष्य दीर्घजीवन प्राप्त कर सकता है। अर्थात् सूर्यप्रकाश जहां न हो ऐसे स्थानमें रहनेवाला मनुष्य अल्प आयु होता है।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२३१ इह तेऽसुरिह प्राण इहायुरिह ते मनः ।
उत त्वा निर्ऋत्याः पाशेभ्यो दैव्या वाचा भरामसि ॥
अथर्व. ८।१।३

(इह ते असुः) यहां तेरा जीवन (इह प्राणाः इह आयुः) यहां प्राण यहां आयु और (इह ते मनः) यहां तेरा मन स्थिर रहे, (दैव्या वाचा निर्ऋत्या पाशेभ्यः) दिव्य बाणोंके द्वारा अधोगतिके फांसोंसे (त्वा उत् भरामसि) तुझे ऊपर स्थापित करते हैं ॥ २३१ ॥

वाणी, मन, जीवन, प्राण और आयु विनाशके पाशोंसे हमें बचावें और हमारे अन्दर दीर्घ आयु स्थापित करें।

ब्रह्मा । आयुः । प्रस्तारपंक्तिः ।

२३२ उत्क्रामातः पुरुषः माव पत्था
मृत्योः पड्वीशमवमुंचमानः ।
मा च्छित्था अस्माल्लोकादग्नेः सूर्यस्य संदृशः ॥

अथर्व. ८।१।४

हे पुरुष ! (अतः उत् क्राम) यहांसे ऊपर चढ (मा अवपत्थाः) नीचे मत गिर, (मृत्योः पड्वीशं अवमुंचमानः) मृत्युकी बेडीसे अपने आपको छुडाता हुआ) (अस्मात् लोकात्) इस लोकसे तथा (अग्नेः सूर्यस्य संदृशः) अग्नि और सूर्यके दर्शनसे अपने आपको (मा छित्थाः) दूर मत रख ॥ २३२ ॥

उन्नति करनी चाहिये, नीचे गिरना नहीं चाहिये । इस लोकमें अग्नि और सूर्यके दर्शनसे कभी दूर रहना नहीं चाहिये । ये ही दीर्घ जीवन देनेवाले देव हैं ।

ब्रह्मा । आयुः । त्रिष्टुप् ।

२३३ तुभ्यं वातः पवतां मातरिश्वा तुभ्यं वर्षन्त्वमृतान्यापः ।
सूर्यस्ते तन्वे शं तपाति त्वा मृत्युर्दयतां मा प्र मेष्ठाः ॥

अथर्व. ८।१।५

(मातरिश्वा वातः तुभ्यं पवतां) अन्तरिक्षमें रहनेवाला वायु तेरे लिए शुद्धता करे, (आपः तुभ्यं अमृतानि वर्षन्तां) जल तेरे लिए अमृतकी वृष्टि करे, (सूर्यः ते तन्वे शं तपाति) सूर्य तेरे शरीरके लिए सुखकर तपता है, (मृत्युः त्वां दयतां) मृत्यु तुझ पर दया करे, और तू (मा प्रमेष्ठाः) मत मर ॥ २३३ ॥

वायु, जल, सूर्य मनुष्यका संरक्षण करें । मृत्यु इस मनुष्यसे दूर रहे अर्थात् इसको न मारे ।

ब्रह्मा । आयुः । त्रिष्टुप् ।

२३४ उद्यानं ते पुरुष नावयानं जीवातुं ते दक्षतातिं कृणोमि ।
आ हि रोहेममृतं सुखं रथं
अथ जिर्विर्विदथमा वदासि ॥ अथर्व. ८।१।६

हे पुरुष ! (ते उत्-यानं) तेरी उन्नतिकी ओर गति हो, (न अव-यानं) अवनतिकी ओर गति न होवे, इसलिए मैं (ते जीवातुं दक्षतातिं कृणोमि तुझे जीवन और बल देता हूं, (इमं अमृतं सुखं रथं आरोह) इस अमरत्व देनेवाले सुखकारक शरीर रूपी रथपर चढ, (अथ जिर्विः) और जब तू वृद्ध होगा, तब (विदथं आवदासि) विज्ञानका उपदेश करेगा ॥ २३४ ॥

हे मनुष्य ! तू उन्नत हो, कभी अवनतिके मार्गसे न जा। तुझे दीर्घ जीवन और बल प्राप्त हो। इस शरीररूपी रथ पर चढ और दीर्घ जीवनके मार्गसे आगे बढ। इस तरह जब तू वृद्ध होगा तब तू अपने जीवनमें प्राप्त किये अनुभवोंका उपदेश दूसरोंको मार्ग बतानेके लिये करेगा।

ब्रह्मा । आयुः । त्रिपदा विराड् गायत्री ।

२३५ मा ते मनस्तत्र गान्मा तिरो भूत्
मा जीवेभ्यः प्र मदो मानुं गाः पितॄन् ।
विश्वे देवा अभिरक्षन्तु त्वेह ॥ अथ. ८।१।७

(ते मनः तत्र मा गात्) तेरा मन उस निषिद्ध मार्गमें न जावे, और वहां (मा तिरः भूत्) लीन न होवे, (जीवेभ्यः मा प्रमदः) जीवोंके सम्बन्धमें प्रमाद न कर (पितॄन् मा अनुगाः) पितरोंके पीछे न जा अर्थात् मर मत, (इह विश्वे देवाः त्वा अभि रक्षन्तु) यहां सब देव तेरी रक्षा करें ॥ २३५ ॥

हीन मार्गसे चलना नहीं। हीन मार्गमें रमना नहीं। अन्य मानवोंका अहित करना नहीं। उनका जितना हो उतना हित ही करना चाहिये। मृत्युके मार्गसे जाना नहीं। दीर्घ जीवन जिससे प्राप्त हो सकता है उस मार्गसे ही जाना चाहिये।

ब्रह्मा। आयुः। विराट्पथ्याबृहती।

२३६ मा गतानामा दीधीथा ये नयन्ति परावतम्।
आ रोह तमसो ज्योतिः एह्या ते हस्तौ रभामहे॥

अथर्व. ८।१।८

(गतानां मा आदीधीथाः) मरे हुओंके लिए विलाप मत कर, क्योंकि (ये परावतं नयन्ति) वे तो दूर ले जाते हैं, अतः (इहि आ) यहां आ और (तमसः ज्योतिः आरोह) अन्धकारको छोड प्रकाशमें आ, (ते हस्तौ रभामहे) तेरे हाथोंको हम पकडते हैं॥ २३६॥

प्रकाशके मार्गसे चलना चाहिये। अन्धकारके मार्गसे कदापि नहीं जाना चाहिये।

ब्रह्मा। आयुः। त्रिष्टुप्।

२३७ मैतं पन्थामनु गा भीम एष येन पूर्वं नेयथ तं ब्रवीमि।
तम एतत् पुरुष मा प्रपत्था भयं परस्तादभयं ते अर्वाक्॥

अथर्व. ८।१।१०

(एतत् पन्थां अनु मा गाः) इस बुरे मार्गका अनुसरण मत कर, (भीमः एषः) यह भयंकर मार्ग है, (येन पूर्वं न ईयथ) जिससे पहिले नहीं जाते हैं, (तं ब्रवीमि) उस विषयमें मैं कहता हूं कि, हे पुरुष! (एतत् तमः) यह अन्धकारका मार्ग है, उस मार्गमें (मा प्रपत्थाः) मत जा, (ते परस्तात् भयं) तेरे लिए आगे भय है, (अर्वाक् ते अभयं) और इधर अभय है॥ २३७॥

भयानक मार्गसे जाना नहीं। भय जहां न हो उसी मार्गसे जाना चाहिये।

ब्रह्मा । आयुः । प्रस्तारपंक्तिः ।

२३८ जीवेभ्यस्त्वा समुद्रे वायुरिन्द्रो
धाता दधातु सविता त्रायमाणः ।
मा त्वा प्राणो बलं हासीद् असुं तेऽनु ह्वयामसि ॥

अथर्व. ८।१।१५

(त्रायमाणः धाता सविता वायुः इन्द्रः) रक्षक, पोषक, प्रेरक, जीवन साधक प्रभु (जीवेभ्यः त्वा सं-उद्रे दधातु) सब प्राणियोंके लिए तथा तेरे लिए पूर्ण उत्कृष्टता धारण करे। (त्वा प्राणः बलं मा हासीत्) तुझे प्राण न छोडे (ते असुं अनु ह्वयामसि) तेरे प्राणको हम अनुकूलताके साथ बुलाते हैं ॥ २३८ ॥

प्राणका बल कम हो ऐसा नहीं करना चाहिये। प्राणका बल बढे ऐसा व्यवहार करना चाहिये।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२३९ उत् त्वा द्यौरुत्पृथिव्युत् प्रजापतिरग्रभीत् ।
उत् त्वा मृत्योरोषधयः सोमराज्ञीरपीपरन् ॥

अथर्व. ८।१।१७

(द्यौः उत्) द्युलोक (पृथिवी उत्) पृथिवी और (प्रजापतिः त्वा उत् अग्रभीत्) प्रजापालक देव तुझे ऊपर उठावे। (सोमराज्ञीः ओषधयः) सोम राजावाली औषधियां (त्वा मृत्योः उत् अपीपरन्) तुझे मृत्युसे ऊपर उठावें अर्थात् तेरी रक्षा करें ॥ २३९ ॥

औषधियोंके सेवनसे मृत्युका भय दूर होता है और दीर्घ आयु प्राप्त होती है।

+

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप्

२४० अयं देवा इहैवास्त्वयं मामुत्र गादितः ।
इमं सहस्रवीर्येण मृत्योरुत् पारयामसि ॥ अथ. ८।१।१८

हे (देवाः) देवो ! (अयं इह एव अस्तु) यह यहां इस लोकमें ही रहे, (अयं इतः अमुत्र मा गात्) यह यहांसे वहां परलोकमें न जावे, (सहस्रवीर्येण इमं मृत्योः उत् पारयामसि) हजारों बलोंसे युक्त उपायसे इस मनुष्यको मृत्युसे हम पार कराते हैं ॥ २४० ॥

यह मनुष्य इस लोकमें दीर्घ काल तक रहे, जलदी परलोकमें न जावे। सहस्रों उपायोंको करके मनुष्यका मृत्युसे बचाव करना योग्य है।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२४१ उत् त्वा मृत्योरपीपरं सं धमन्तु वयोधसः ।
मा त्वा व्यस्तकेश्यो मा त्वाधरुदो रुदन् ॥ अथ. ८।१।१९

(मृत्योः त्वा उत् अपीपरं) मृत्युसे तुझको हम पार कराते हैं, (वयोधसः सं धमन्तु) अन्न अथवा आयुको धारण करनेवाले देव तुझे पुष्ट करें। (व्यस्तकेश्यः अध-रुदः) बालोंको खोलकर बुरी तरहसे रोनेवाली स्त्रियां (मा त्वा रुदन्, मा त्वा) तेरे लिए न रोयें अर्थात् तेरी मृत्युके कारण इन पर रोनेका प्रसंग न आवे ॥ २४१ ॥

मृत्युसे दूर होकर योग्य अन्नका सेवन करके अपनी आयुको बढाना चाहिये।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२४२ आहार्षमविदं त्वा पुनरागाः पुनर्नवः ।
सर्वाङ्ग सर्वं ते चक्षुः सर्वमायुश्च तेऽविदम् ॥
अथर्व. ८।१।२०

(त्वा आहार्षं) मैं तुझे लाया हूं, (त्वा अविदं) मैंने तुझे पुनः प्राप्त किया है, (पुनः नवः पुनः आगाः) फिर नया होकर फिर आ गया

है, हे (सर्वाङ्ग) सम्पूर्ण अंगोंवाले मनुष्य ! (ते सर्वं चक्षुः) तेरी पूर्ण दृष्टि और (ते सर्वं आयुः च) तेरी पूर्ण आयु तेरे लिए (अविदं) प्राप्त कराई है ॥ २४२ ॥

मैंने तुझे मृत्युसे बचाया है। अब तू नया सा हो गया है। तेरे सब अंग निर्दोष हुए हैं। चक्षु आदि तेरे इंद्रिय नवीन जैसे हुए हैं और तुझे पूर्ण आयु प्राप्त हुई है। औषधि सेवन तथा योगके अभ्याससे सब शरीर पुनः तरुण हो सकता है और दीर्घ जीवन प्राप्त हो सकता है।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप ।

२४३ व्यवात् ते ज्योतिरभूदप त्वत् तमो अक्रमीत् ।
अप त्वन्मृत्युं निर्ऋतिं अप यक्ष्मं नि दध्मसि ॥
अथर्व. ८।१।२१

अब (त्वत् तमः व्यवात्) तेरे पाससे अन्धकार चला गया है, (अप अक्रमीत्) तेरेसे दूर चला गया है, (ते ज्योतिः अभूत्) तेरा प्रकाश फैल गया है, (त्वत् निर्ऋतिं मृत्युं अप नि दध्मसि) तेरेसे दुर्गति और मृत्युको हम दूर हटाते हैं, तथा तेरेसे (यक्ष्मं अप नि दध्मसि) रोगको हम दूर करते हैं ॥ २४३ ॥

रोग आदिको हटाना चाहिये। अन्य विकृतियां भी हटानी चाहिये। अंधकार और दुर्गतिको दूर करना चाहिये और दीर्घ आयुको प्राप्त करनेके जो साधन हों उनको आचरणमें लाना चाहिये।

ब्रह्मा । आयुः । भुरिक् ।

२४४ आ रभस्वेमाममृतस्य श्रुष्टिं
अच्छिद्यमाना जरदष्टिरस्तु ते ।
असुं त आयुः पुनरा भरामि
रजस्तमो मोप गा मा प्रमेष्ठाः ॥ अथर्व. ८।२।१

(इमां अमृतस्य श्रुष्टिं आरभस्व) इस अमृत रसके पानको प्रारम्भ कर, (ते जरत्-अष्टिः अच्छिद्यमाना अस्तु) तेरी वृद्धावस्था तक

जीवन भोग अविच्छिन्न रीतिसे रहें (ते असुं आयुः पुनः आ भरामि) तेरे प्राण और जीवनको मैं तेरे अन्दर पुनः भरता हूं, (रजः तमः मा उपगाः) भोग और अज्ञानके पास न जा, (मा प्र मेष्ठाः) मर मत ॥२४४॥

औषधिके अमृत रसका पान करो। उत्तम वृद्धावस्थाको स्वास्थ्य पूर्ण रीतिसे प्राप्त करो और दीर्घ आयुको पूर्ण आरोग्यके साथ प्राप्त करो।

ब्रह्मा। आयुः। भुरिक्।

२४५ जीवतां ज्योतिरभ्येह्यवाङ् आ त्वा हरामि शतशारदाय।
अवमुंचन्मृत्युपाशानशस्तिं
द्राघीय आयुः प्रतरं ते दधामि ॥ अथर्व. ८।२।२

(जीवतां ज्योतिः अवाङ् अभि एहि) जीवित मनुष्योंकी ज्योति इस ओरसे प्राप्त कर, (त्वा शतशारदाय आ हरामि) तुझे सौ वर्षकी आयुके लिए लाता हूं (मृत्युपाशान् अशस्तिं अवमुंचन्) मृत्युके पाशों और अकीर्तीको हटाता हुआ (ते प्रतरं द्राघीयः आयुः दधामि) मैं तेरे लिए उत्कृष्ट दीर्घ आयु देता हूं ॥ २४५ ॥

जीवनकी ज्योति प्राप्त करो। पूर्ण सौ वर्षोंका जीवन तुझे प्राप्त हो। मृत्युके पाशोंको तोडकर नया जीवन प्राप्त करके दीर्घायु बनकर रहो।

ब्रह्मा। आयुः। आस्तारपंक्तिः।

२४६ वातात् ते प्राणमविदं सूर्याच्चक्षुरहं तव।
यत् ते मनस्त्वयि तद् धारयामि
सं वित्स्वाङ्गैर्वद जिह्वयालपन् ॥ अथर्व. ८।२।३

(वातात् ते प्राण अविदं) वायुसे तेरे प्राणको प्राप्त किया है, (अहं सूर्यात् तव चक्षुः) मैंने सूर्यसे तेरे नेत्रको प्राप्त किया, (यत् ते मनः त्वयि तद् धारयामि) जो तेरा मन है उसको मैं तेरे अन्दर धारण कराता हूं (अंगैः संवित्स्व) अपने सब अवयवोंको प्राप्त हो, (जिह्वया आलपन् वद) जिह्वासे शब्दोच्चार करता हुआ तू बोल ॥ २४६ ॥

वायुसे प्राण, सूर्यसे नेत्र इस तरह अन्य देवोंसे अन्य अवयव बने हैं। इन देवताओंके अंशोंसे बने अपने सब अवयवोंको धारण कर और इन शरीरस्थ देवोंका संचालक मैं हूं, यह तू मनमें समझ और जिह्वासे इस तत्वज्ञानका उपदेश कर। इससे तेरा बल बढेगा और दीर्घायु प्राप्त होगी।

ब्रह्मा। आयुः। प्रस्तारपंक्तिः।

२४७ प्राणेन त्वा द्विपदां चतुष्पदां
अग्निमिव जातमभि सं धमामि।
नमस्ते मृत्यो चक्षुषे नमः प्राणाय तेऽकरम् ॥ अथर्व. ८।२।४

(जातं अग्निं इव) अभी उत्पन्न हुए अग्निके समान (त्वा द्विपदां चतुष्पदां प्राणेन संधमामि) द्विपाद और चतुष्पादोंके प्राणसे जीवन देता हूं, हे मृत्यो! (ते चक्षुषे नमः) तेरी नेत्र इन्द्रियके लिए नमस्कार और (ते प्राणाय नमः अकरं) तेरे प्राणके लिए नमन करता हूं ॥ २४७ ॥

शरीरमें दस प्राणोंमें 'प्राण' मुख्य है। तथा इन्द्रियोंमें 'नेत्र' मुख्य है। इनकी श्रेष्ठता जानकर इनको प्रणाम किया जाय अर्थात् इनकी शक्ति श्रेष्ठ कार्योंमें लगायी जाय। कभी बुरी प्रवृत्तिमें इनको न प्रयुक्त किया जाय। सब प्राणियोंमें यही प्राणकी शक्ति कार्य कर रही है, जिससे सब पशु पक्षी तथा मानव जीवित रहते हैं। इस प्राणका कार्य देखकर अपने अन्दरके प्राणको बलवान् बनाना चाहिये।

ब्रह्मा। आयुः। अनुष्टुप्।

२४८ अयं जीवतु मा मृतेमं समीरयामसि।
कृणोम्यस्मै भेषजं मृत्यो मा पुरुषं वधीः ॥ अथर्व. ८।२।५

(अयं जीवतु) यह पुरुष जीवित रहे, (मा मृत) न मरे, (इमं सं ईरयामसि) इसको हम सचेत करते हैं, (अस्मै भेषजं कृणोमि) इसके लिए मैं औषध बनाता हूं, हे मृत्यो! (पुरुषं मा वधीः) इस पुरुषका वध न कर ॥ २४८ ॥

मैं जलदी मरूंगा नहीं, शरीरमें दोष हुआ, तो मैं औषधिका सेवन करके उन दोषोंको अपने शरीरसे हटा दूंगा और मृत्युको दूर करके दीर्घ जीवन प्राप्त करूंगा।

ब्रह्मा। आयुः। भुरिक्।

२४९ अधि ब्रूहि मा रमथाः सृजेमं
तवैव सन्त्सर्वहाया इहास्तु।
भवाशर्वौ मृडतं शर्म यच्छतं अपसिध्यं दुरितं धत्तमायुः॥
अथ. ८।२।७

(अधि ब्रूहि) तू उपदेश कर, (मा रमथाः) बुरा बर्ताव न कर, (इमं सृज) इस पुरुषको जगत्में चला, (तव एव सन्) तेरा ही होकर यह (सर्वहायाः इह अस्तु) पूर्ण आयु तक यहां रहे, (भवा-शर्वौ) हे भव और शर्व! तुम दोनों (मृडतं) सुखी करो, (शर्म यच्छतं) सुख दो, (दुरितं अपसिध्य) पापको दूर करके (आयुः धत्तं) दीर्घायु धारण कराओ॥ २४९॥

पापको दूर कीजिये। अपने शरीरसे पाप न हो ऐसा निश्चय कीजिये। संपूर्ण जीवनमें सुखसे रहो और दूसरोंको सुख दो। अपनी आयुको दीर्घ करके धारण करो।

ब्रह्मा। आयुः। पुरस्ताज्ज्योतिष्मती जगती।

२५० अस्मै मृत्यो अधि ब्रूहीमं दयस्वोदितोयमेतु।
अरिष्टः सर्वाङ्गः सुश्रुज्जरसा
शतहायन आत्मना भुजमश्नुताम्॥ अथ. ८।२।८

हे मृत्यो! (अस्मै अधि ब्रूहि) इसको उपदेश कर, (इमं दयस्व) इस पर दया कर, (अयं इतः उत् एतु) यह इस विपत्तिसे ऊपर उठे, और (अ-रिष्टः सर्वाङ्गः) पीडा रहित सब अंगोंसे पूर्ण (सु-श्रुत्)

उत्तम ज्ञान या श्रवण शक्तिसे युक्त होकर (जरसा शतहायनः) वृद्धावस्थामें सौ वर्षसे युक्त होकर (आत्मना भुजं अश्नुतां) अपनी शक्तिसे भोगोंको प्राप्त करे ॥ २५० ॥

अपने आपको विपत्तिसे दूर रखो। विपत्ति आ गयी तो अपने प्रयत्नसे उसको दूर करो। अपने सब अवयव नीरोग और पुष्ट करके उनको धारण करो। इस प्रकार सौ वर्षकी पूर्ण आयुको धारण करके भोगोंको योग्य रीतिसे भोगो और आनंदसे दीर्घ आयुका उपभोग करो।

ब्रह्मा। आयुः। पंचपदा जगती।

२५१ देवानां हेतिः परि त्वा वृणक्तु
पारयामि त्वा रजस उत् त्वा मृत्योरपीपरम्।
आरादग्निं क्रव्यादं निरूहं जीवातवे ते परिधिं दधामि ॥
अथर्व. ८।२।९

(देवानां हेतिः त्वा परिवृणक्तु) देवोंके शस्त्र तुझे दूर रखें, (त्वा रजसः पारयामि) तुझे रजोगुणसे पार करता हूं (त्वा मृत्योः उत् अपीपरं) तुझे मृत्युसे उठाया है, तू मृत्युसे दूर हो चुका है, (क्रव्यादं अग्निं आरात् निरूहं) मांसभक्षक अग्निको दूर रखता हूं, (ते जीवातवे परिधिं दधामि) तेरे जीवनके लिए मर्यादा निश्चित करता हूं ॥ २५१ ॥

मारक शस्त्र तेरे पास न आ जांय। भोगोंमें तू लिप्त न हो। मृत्युसे तुझे ऊपर उठाया है। मांसभक्षक अग्नि अर्थात् प्रेतको जलानेवाला अग्नि तुझसे दूर किया है। अर्थात् तू जलदी नहीं मरेगा। तेरी जीवनकी मर्यादा सुदीर्घ की है।

ब्रह्मा। आयुः। विष्टारपंक्तिः।

२५२ कृणोमि ते प्राणापानौ जरां मृत्युं दीर्घमायुः स्वस्ति।
वैवस्वतेन प्रहितान् यमदूतान् चरतोप सेधामि सर्वान् ॥
अथर्व. ८।२।११

(ते प्राणापानौ जरां मृत्युं दीर्घं आयुः स्वस्ति कृणोमि) तेरे

लिए प्राण, अपान, बुढापा, दीर्घ आयु और अन्तमें मृत्यु कल्याणमय करता हूं। (वैवस्वतेन प्रहितान् चरतः सर्वान् यमदूतान्) विवस्वान् सूर्यसे उत्पन्न कालके भेजे हुए सर्वत्र संचार करनेवाले सब यमदूतोंको (अपसेधामि) मैं दूर करता हूं ॥ २५२ ॥

प्राण और अपान बलशाली हों। वृद्धावस्थाके पीछे मृत्यु हो। दीर्घ आयु प्राप्त हो और सुखमय जीवन हो। यमके दूत दूर हो जांय। वे इस मनुष्यको न ले जांय।

ब्रह्मा। आयुः। त्रिष्टुप्।

२५३ अग्नेष्टे प्राणममृतादायुष्मतो वन्वे जातवेदसः।
यथा न रिष्या अमृतः सजूरसः
तत् ते कृणोमि तदु ते समृध्यताम् ॥ अथर्व. ८।२।१३

(अमृतात् आयुष्मतः जातवेदसः अग्नेः) अमर आयुवाले जातवेद अग्निसे (ते प्राणं वन्वे) तेरे प्राणको प्राप्त करता हूं, (यथा अमृतः न रिष्याः) जिससे अमर होकर तू विनष्ट नहीं होगा, (सजूः असः) उसके दीर्घ जीवनके साथ रह, (तत् ते समृध्यतां) वह तेरा कार्य समृद्धि युक्त होवे ॥ २५३ ॥

दीर्घ आयु प्राप्त करनेके लिये प्राणायामसे प्राणका बल बढाओ। उससे मनुष्य दीर्घ जीवनसे युक्त होवे। दीर्घ आयु प्राप्त करनेका मनुष्यका वह प्रयत्न सफल हो। मनुष्य दीर्घायु होकर यहां आनन्दके साथ रहे।

ब्रह्मा। आयुः। अनुष्टुप्।

२५४ शिवौ ते स्तां व्रीहियवावबलासावदोमधौ।
एतौ यक्ष्मं वि बाधेते एतौ मुंचतो अंहसः ॥

अथर्व. ८।२।१८

(व्रीहियवौ ते शिवौ) चावल और जौ तेरे लिए कल्याणकारी और (अ-बलासौ अदो-मधौ स्तां) कफ न करनेवाले और खानेके लिए सुखदायक हों, (एतौ यक्ष्मं वि बाधेते) ये दोनों रोगका नाश करते हैं, और (एतौ अंहसः मुंचतः) ये दोनों पापसे मुक्त करते हैं ॥ २५४ ॥

चावल और जौ कल्याण करनेवाले हैं। ये कफको दूर करते हैं और जीवनका आनन्द देते हैं। शरीरके रोगको ये दूर करते हैं और पाप करनेकी इच्छाको नष्ट कर देते हैं।

ब्रह्मा। आयुः। सतः पंक्तिः।

२५५ शतं तेऽयुतं हायनान् द्वे युगे त्रीणि चत्वारि कृण्मः।
इन्द्राग्नी विश्वे देवास्ते अनुमन्यन्तामहृणीयमानाः।

अथ. ८।२।२१

(ते शतं हायनान्) तेरी सौ वर्षकी आयु जिससे (द्वे युगे) दिन रात्रीकी दो सन्धियां हैं, तथा (त्रीणि) सर्दी, गर्मी और वृष्टि ये तीन काल और (चत्वारि) बाल्य तारुण्य, मध्यम और वृद्ध ये चार अवस्थायें हैं, इस प्रकार आयुको (अ-युतं कृण्मः) अटूट अथवा अखण्डित करते हैं, (इन्द्राग्नी विश्वे देवाः अहृणीयमानाः) इन्द्र अग्नि और सब देव संकोच न करते हुए (ते अनुमन्यंतां) तेरी आयुका अनुमोदन करें ॥ २५५ ॥

तेरी सौ वर्षकी आयुमें सब दिन और रात्री, सर्दी, गर्मी और वृष्टि तथा बाल्य, तारुण्य, मध्यम और वृद्ध अवस्था ये सब सुख कर हों। इनमें किसी प्रकार कष्ट न हो।

ब्रह्मा। आयुः। पुस्तारद्बृहतीः।

२५६ शरदे त्वा हेमन्ताय वसन्ताय ग्रीष्माय परि दद्मसि।
वर्षाणि तुभ्यं स्योनानि येषु वर्धन्त ओषधीः॥

अथर्व. ८।२।२२

(शरदे हेमन्ताय वसन्ताय ग्रीष्माय) शरद, हेमन्त, वसन्त और ग्रीष्म इन ऋतुओंके लिए (त्वा परि दद्मसि) तुझे हम सौंप देते हैं, (येषु ओषधीः वर्धन्ते) जिस ऋतुमें औषधियां बढती हैं, वह (वर्षाणि तुभ्यं स्योनानि) वृष्टिका ऋतु भी तुम्हारे लिए सुखकारी हो ॥ २५६ ॥

सब ऋतु तुम्हारे लिये सुखकर हों। इनमें वृक्ष वनस्पतियां और औषधियां जिस प्रकार बढती हैं उस प्रकार तुम भी बढते रहो। सब वर्ष तुम्हारे लिये आनंद देनेवाले हों।

ब्रह्मा। आयुः। अनुष्टुप्।

२५७ मृत्युरीशे द्विपदां मृत्युरीशे चतुष्पदाम्।
तस्मात् त्वां मृत्योर्गोपतेः उद्धरामि स मा बिभेः॥

अथर्व. ८।२।२३

(मृत्युः द्विपदां ईशे) मृत्यु द्विपादों पर प्रभुत्व करता है, (मृत्युः चतुष्पदां ईशे) मृत्यु चौपायों पर भी अधिकार चलाता है, (तस्मात् गोपतेः मृत्योः) उस जगत्के स्वामी मृत्युसे (त्वां उद्धरामि) तुझे ऊपर उठाता हूं, (सः मा बिभेः) वह तू अब मृत्युसे मत डर॥ २५७॥

सब द्विपाद और चतुष्पदों पर मृत्युका स्वामित्व है। यह सत्य है। पर योग साधनसे उस मृत्युको दूर करके दीर्घ आयु प्राप्त कर सकते हैं। मत डरो और वह साधना करो।

ब्रह्मा। आयुः। अनुष्टुप्।

२५८ सोऽरिष्ट न मरिष्यसि न मरिष्यसि मा बिभेः।
म वै तत्र म्रियन्ते नो यन्त्यधमं तमः॥ अथर्व. ८।२।२४

हे (अ-रिष्ट) अहिंसित मनुष्य! (सः न मरिष्यति) वह तू नहीं मरेगा, (न मरिष्यसि, मा बिभेः) नहीं मरेगा, अतः मत डर। (तत्र न वै म्रियन्ते) वहां निश्चयसे नहीं मरते. तथा (अधमं तमः न यन्ति) हीन अन्धकारके प्रति भी नहीं जाते॥ २५८॥

जो डरता नहीं, वह दीर्घायु प्राप्त कर सकता है। धैर्य धारण करनेसे हीन अन्धकार दूर हो सकता है, और प्रकाशका मार्ग दीख सकता है, जिस परसे जानेसे मृत्युका भय दूर होकर दीर्घ आयु प्राप्त हो सकती है। जो डरता रहेगा उसकी मृत्यु शीघ्र होगी, अतः भयभीत होना हानिकारक है।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२५९ सर्वो वै तत्र जीवति गौरश्वः पुरुषः पशुः ।
यत्रेदं ब्रह्म क्रियते परिधिर्जीवनाय कम् ॥ अथ. ८।२।२५

(यत्र इदं ब्रह्म) जहां यह ज्ञान और (जीवनाय कं परिधिः क्रियते) जीवनके लिए सुखमयी मर्यादाकी जाती है, (तत्र) वहां (गौः अश्वः पशुः पुरुषः) गाय घोडा पशु और मनुष्य (सर्वः वै जीवति) सब कोई जीवित रहता है ॥ २५९ ॥

ज्ञान प्राप्त करना और जीवनकी मर्यादा सुदीर्घ करनेके उपाय योग्य रीतिसे करना । इससे सबकी आयु बढ सकती है ।

ब्रह्मा । आयुः । आस्तारपंक्तिः ।

२६० परि त्वा पातु समानेभ्यो अभिचारात् सबन्धुभ्यः ।
अमित्रिर्भवामृतोऽतिजीवो मा ते हासिषुरसवः शरीरम् ॥
अथ. ८।२।२६

(समानेभ्यः सबन्धुभ्यः) समान बान्धवोंसे होनेवाले (अभिचारात् त्वा परिपातु) हमलेसे तेरी रक्षा होवे, तू (अ-मित्रिः अमृतः वा अतिजीवः) अक्षीण अमर और दीर्घजीवी हो, (असवः ते शरीरं मा हासिषुः) प्राण तेरे शरीरको न छोडें ॥ २६० ॥

अपने बांधवोंसे होनेवाले हमलोंसे अपनी रक्षा करो । क्षीण न होओ, मरनेका विचार न करो । दीर्घ जीवन प्राप्त करनेका संकल्प करो और उसके लिये प्रयत्न करो । ऐसा करनेसे प्राण जल्दी नहीं छोडेंगे और तुम्हें दीर्घ आयु प्राप्त होगी ।

ब्रह्मा । आयुः । अनुष्टुप् ।

२६१ ये मृत्यव एकशतं या नाष्ट्रा अतितार्याः ।
मुंचन्तु तस्मात् त्वां देवा अग्नेर्वैश्वानरादधि ॥
अथ. ८।२।२७

(ये एकशतं मृत्यवः) जो एक सौ एक मृत्यु हैं, (या अतितार्याः नाष्ट्राः) जो पार करने योग्य तथा नाश करनेवाली हैं, (तस्मात्) उससे (देवाः वैश्वानरात् अग्नेः) सब देव वैश्वानर अग्निकी शक्तिसे (त्वां) तुझे (अधिमुंचन्तु) मुक्त करें ॥ २६१ ॥

सैंकडों मृत्यु हैं जिनको दूर करना चाहिये। सब मनुष्योंमें रहनेवाला और उनके जीवनोंको दीर्घ करनेवाला अग्नि है, उसको अनुकूल करनेसे मृत्यु दूर होकर दीर्घ आयु प्राप्त हो सकती है।

ब्रह्मा। ऋषभः। त्रिष्टुप्।

२६२ पिशङ्गरूपो नभसो वयोधा
ऐन्द्रः शुष्मो विश्वरूपो न आगन्।
आयुरस्मभ्यं दधत् प्रजां च रायश्च पोषैरभि नः सचताम् ॥

अथर्व. ९।४।२२

(पिशंगरूपः) चमकीले रूपवाला (वयो-धाः) अन्नको धारण करनेवाला (विश्वरूपः) अनेक रूपोंवाला (ऐन्द्रः शुष्मः) इन्द्रका बल (नभसः नः आगन्) द्युलोकसे हमारे पास आया है, वह (आयुः प्रजां च रायः च) आयु, प्रजा और धन (अस्मभ्यं दधत्) हमारे लिए धारण करता हुआ (पोषैः न अभि सचताम्) पुष्टियोंसे युक्त होकर हमें प्राप्त हो ॥ २६२ ॥

इन्द्रका तेजस्वी बल मनुष्योंको आयु, प्रजा और धन देता है। वह पुष्टिके साथ मनुष्योंको प्राप्त हो।

ब्रह्मा। ओदनः। त्रिष्टुप्।

२६३ यज्ञं दुहानं सदमित् प्रपीनं पुमांसं धेनुं सदनं रयीणाम्।
प्रजामृतत्वमुत दीर्घमायू रायश्च पोषैरूप त्वा सदेम ॥

अथ. ११।१।३४

(यज्ञं दुहानं प्रपीनं सदं इत्) यज्ञ करनेवाला सदा समृद्ध (रयीणां सदनं धेनुं) सम्पत्तिका घर ऐसी गौ है,हम (त्वा पुमांसं) तुझ पुरुषके पास (पोषैः प्रजा अमृतत्वं उत दीर्घं आयुः) पुष्टियोंसे प्रजाकी पुष्टि और उनकी दीर्घ आयु (रायः च उप सदेम) और धन लेकर आते हैं ॥ २६३ ॥

यज्ञ करनेवाला सदा समृद्ध, संपत्तिका घर जैसा होता है। तुझ यज्ञ कर्ताके पास पुष्टि, प्रजा, अमरत्व, दीर्घायु और धनके साथ हम आते हैं। यज्ञ करनेसे पुष्टि होती है, सुसंतान प्राप्त होती है, दीर्घायु होती है और धन भी मिलता है।

ब्रह्मा। ब्रह्मचारी। अनुष्टुप्।

२६४ ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत।
इन्द्रो ह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत् ॥ अथर्व. ११।५।१९

(ब्रह्मचर्येण तपसा) ब्रह्मचर्य रूपी तपसे (देवाः) देवोंने (मृत्युं उप अघ्नत) मृत्युको दूर किया। (इन्द्रः ह) इन्द्र भी (ब्रह्मचर्येण) ब्रह्मचर्यके द्वारा (देवेभ्यः स्वः आभरत्) देवोंके लिए सुख ले आया ॥ २६४ ॥

ब्रह्मचर्य पालन रूप तपसे देवोंने मृत्युको दूर किया था। उस तरह जो ब्रह्मचर्य पालन करेंगे वे दीर्घायु प्राप्त कर सकते हैं।

ब्रह्मा। अध्यात्मं। पंचपदा विराड्गर्भा जगती।

२६५ दिवस्पृष्ठे धावमानं सुपर्णं
अदित्याः पुत्रं नाथकाम उपयामि भीतः।
स नः सूर्य प्रतिर दीर्घमायुः मा रिषाम सुमतौ ते स्याम ॥
अथ. १३।२।३७

(दिवः पृष्ठे धावमानं सुपर्णं अदित्याः पुत्रं) द्युलोककी पीठपर दौडनेवाले पक्षीके समान अदितिके पुत्रके पास (नाथकामः भीतः उप-

यामि) रक्षणकी इच्छा करनेवाला भयभीत हुआ मैं शरणमें जाता हूं। हे सूर्य ! (सः नः दीर्घं आयुः प्रतिर) वह तू हमें दीर्घ आयु प्रदान कर, (ते सुमतौ स्याम, मा रिषाम) तेरी उत्तम बुद्धिमें हम रहें और हमारा नाश न हो ॥ २६५ ॥

आकाशमें दौडनेवाले सूर्यकी मैं शरण जाता हूं, वह हमें दीर्घ आयु देवे। सूर्यकी सुमति हमारे विषयमें रही, तो हमारा नाश कभी नहीं होगा। हम दीर्घायु बनेंगे।

ब्रह्मा। आदित्यः। त्र्यवसाना।

२६६ विषासहिं सहमानं सासहानं सहीयांसम्।
सहमानं सहोजितं स्वर्जितं गोजितं संधनाजितम्।
ईड्यं नाम ह्व इन्द्रमायुष्मान् भूयासम् ॥ अथ. १७।१।१

(विषासहिं) अत्यन्त समर्थ (सहमानं) अत्यन्त बलवान् (सासहानं) नित्य विजयी (सहीयांसं) शत्रुको दबानेवाला (सहमानं) महा बलिष्ठ (सहोजितं) बलसे दिग्विजय करनेवाले (स्वः-जितं) अपने सामर्थ्यसे जीतनेवाले, (गो-जितं) भूमि, इन्द्रियों और गौओंको जीतनेवाले, (संधनाजितं) धनको जीतकर प्राप्त करनेवाले (ईड्यं नाम इन्द्रं) प्रशंसनीय यशवाले प्रभुकी मैं (ह्वे) प्रशंसा करता हूं, जिससे मैं (आयुष्मान् भूयासं) दीर्घायुवाला होऊं ॥ २६६ ॥

इन्द्रके गुण मैं गाता हूं। वह इन्द्र सामर्थ्यवान्, बलवान्, विजयी, शत्रुको दबानेवाला, सामर्थ्यसे दिग्विजयी, जीतनेवाला, गौओंको जीतकर लानेवाला, धन जीतनेवाला है। इन गुणोंका चिंतन मैं करता हूं जिससे मैं विजयी और दीर्घायु होता हूं।

ब्रह्मा । आदित्यः । जगती ।

२६७ प्रजापतेरावृतो ब्रह्मणा वर्मणाहं
कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च ।
जरदष्टिः कृतवीर्यो विहायाः सहस्रायुः सुकृतश्चरेयम् ॥
अथ. १७।१।२७

(अहं प्रजापतेः ब्रह्मणा वर्मणा आवृतः) मैं प्रजापतिके ज्ञान रूप कवचसे आवृत्त होकर (कश्यपस्य ज्योतिषा वर्चसा च) और सर्वदर्शक वेदके तेज और बलसे युक्त होकर (जरदष्टिः कृतवीर्यः) वृद्धावस्था तक वीर्यवान् रहता हुआ (विहायोः सहस्रायुः) विविध कर्मोंसे युक्त सहस्रायु–पूर्णायु–होकर (सुकृतः चरेयम्) उत्तम पुण्यकर्म करता हुआ व्यवहार करूं ॥ २६७ ॥

मैं ज्ञान प्राप्त करके, उस ज्ञानसे अपने कर्तव्य करके, वृद्धावस्था तक जानेवाला पूर्णायु होकर विचरता हूं ।

ब्रह्मा । विश्वेदेवा । बृहतीगर्भा ।

२६८ मा नो मेधां मा नो दीक्षां मा नो हिंसिष्टं यत्तपः ।
शिवाः नः सन्त्वायुषे शिवाः भवन्तु मातरः ॥
अथर्व. १९।४।३०

(नः मेधां मा) मेरी बुद्धिको मत नष्ट करो, (नः दीक्षां मा) मेरी दीक्षाको नष्ट मत करो, (नः यत् तपः) और हमारा जो तप है, उसे (मा हिंसिष्टं) मत समाप्त करो, (मातरः) मातायें–जल धारायें (आयुषे शिवाः सन्तु) हमारी आयुके लिए कल्याणकारिणी होवें, तथा (नः शिवाः भवन्तु) हमारे लिए कल्याण करनेवाली हों ॥ २६८ ॥

मेरी बुद्धि दीक्षा और मेरा तप नष्ट न हो । वह सतत चलता रहे । जीवनकी धाराएं मेरी दीर्घायु करनेवाली तथा मेरा कल्याण करनेवालीं हों । बुद्धि, दक्षता तथा द्वन्द्व सहन करनेकी शक्ति इनसे कल्याण होता है और दीर्घ आयु प्राप्त होती है ।

ब्रह्मा । यज्ञः । त्रिष्टुप् ।

२६९ घृतस्य जूतिः समना सदेवा संवत्सरं हविषा वर्धयन्ती ।
श्रोत्रं चक्षुः प्राणोच्छिन्नो नो अस्तु
अच्छिन्ना वयमायुषो वर्चसः ॥ अथर्व. १९।५८।१

(समना सदेवा) मन लगाकर दैवीशक्तियोंके साथ (घृतस्य जूतिः) घी की अविच्छिन्न गति (हविषा संवत्सरं वर्धयन्ती) हविसे संवत्सरको बढाती है, (नः श्रोत्रं, चक्षुः, प्राणः, अच्छिन्नः अस्तु) हमारी कान, आंख और प्राणकी शक्तियां अविच्छिन्न रहें, (आयुषः वर्चसः वयं अच्छिन्नाः) आयु और तेजसे हम अविच्छिन्न हों ॥ २६९ ॥

गौके घीसे हम हवन करते रहें, इससे हमारे कान, नेत्र और प्राण बलवान् हों और हम दीर्घ आयुसे संपन्न हों।

ब्रह्मा । ब्रह्मणस्पतिः । विराट् पथ्याबृहती ।

२७० तनूस्तन्वा मे सहे दतः सर्वमायुरशीय ।
स्योनं मे सीद पुरुः पृणस्व पवमानः स्वर्गे ॥
अथर्व. १९।६१।१

(मे तनूः तन्वा) मेरा शरीर मोटा हो। (दतः सहे) शत्रुओंका मैं पराभव करूं, मुझे दबानेवालेको मैं अपने सामर्थ्यसे दूर करता हूं, (सर्वं आयुः अशीय) मैं पूर्ण आयुको प्राप्त करूं (मे स्योनं सीद) मेरे सुखदायी स्थान पर बैठ, (पुरुः पृणस्व) अपने आपको परिपूर्ण कर, मैं (पवमानः स्वर्गे) पवित्र होता हुआ सुखपूर्ण स्थानमें रहूं ॥ २७० ॥

मेरा शरीर अच्छा हो, शत्रुओंका पराभव मैं करूं, पूर्ण आयु मैं प्राप्त करूं। मैं परिपूर्ण बनूं। पवित्र बनकर मैं सुखपूर्ण स्थानमें रहूं। ये विचार मनमें धारण करनेसे मनुष्य दीर्घायु होता है।

ब्रह्मा । ब्रह्मणस्पतिः । विराडुपरिष्टाद्बृहती ।

२७१ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवान् यज्ञेन बोधय ।
आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं यजमानं च वर्धय ॥
अथ. १९।६३।१

हे (ब्रह्मणस्पते) ज्ञानके स्वामिन् । (उत्तिष्ठ) उठो, (देवान् यज्ञेन बोधय) यज्ञसे देवोंको जगाओ, तथा (आयुः प्राणं प्रजां पशुं कीर्तिं यजमानं च वर्धय) आयुः, प्राण, प्रजा पशु और कीर्त्तीके द्वारा यजमानको बढाओ ॥ २७१ ॥

यज्ञ करनेसे आयु, प्राणशक्ति, सुप्रजा निर्माण करनेकी शक्ति, पशु और कीर्ति प्राप्त होती है ।

ब्रह्मा । अग्निः । अनुष्टुप् ।

२७२ एतास्ते अग्ने समिधस्त्वमिद्धः समिद्भव ।
आयुरस्मासु धेह्यमृतत्वमाचार्याय ॥ अथ. १९।६४।४

हे अग्ने (एता ते समिधः) ये तेरे लिए समिधायें हैं, (त्वं इद्धः) तू प्रदीप्त होकर (समित् भव) तेजस्वी हो, (अस्मासु आयुः धेहि) हमें आयुष्य दे, और (आचार्याय अमृतत्वं) आचार्यके लिए अमरपन दे ॥ २७२ ॥

समिधाओंसे प्रदीप्त हुआ यज्ञाग्नि हमें दीर्घायु करता है और हमारे आचार्यको अमरत्व देता है ।

+

ब्रह्मा । सूर्यः । प्राजापत्या गायत्री ।

२७३ पश्येम शरदः शतम् । जीवेम शरदः शतम् ।
बुध्येम शरदः शतम् । रोहेम शरदः शतम् ।
पूषेम शरदः शतम् । भवेम शरदः शतम् ।
भूयेम शरदः शतम् । भूयसीः शरदः शतात् ।

अथ. १९।६७।१–८

हम (शरदः शतं पश्येम, जीवेम, बुध्येम, रोहेम, पूषेम, भवेम, भूयेम) सौ वर्ष तक देखें, जीवें, ज्ञान लें, बढें पुष्ट हों, अच्छी तरह रहें, सजते रहें। (शरदः शतात् भूयसीः) सौ वर्षसे अधिक भी हम जीवें ॥ २७३ ॥

सौ वर्ष तथा उससे भी अधिक जीवें और पुष्ट होकर हम बलवान् तथा दीर्घायु हों ।

ब्रह्मा । आपः । आसुर्यनुष्टुप् ।

२७४ जीवा स्थ जीव्यासं सर्वमायुर्जीव्यासम् । अथर्व. १९।६९।१

हे जलो ! (जीवाः स्थ) तुम जीवन देनेवाले हो, तुम्हारी कृपासे मैं (जीव्यासं, सर्वं आयुः जीव्यासं) जीवूं और सम्पूर्ण आयु जीवूं ॥ २७४ ॥

मे जीवित रहूंगा । सब आयुष्य प्राप्त करूंगा और दीर्घ आयु होऊंगा ।

ब्रह्मा । इन्द्रसूर्यदेवाः । गायत्री ।

२७५ इन्द्र जीव सूर्य जीव देवा जीवा जीव्यासमहम् ।
सर्वमायुर्जीव्यासम् ॥ अथर्व. १९।७०।१

हे इन्द्र ! हे सूर्य ! हे देवो ! (जीव, जीव, जीव) जियो, और (अहं) मैं भी (जीव्यासम्) जीऊं (सर्वं आयुः जीव्यासम्) मैं सम्पूर्ण आयु जीऊं ॥ २७५ ॥

मैं दीर्घ जीवन प्राप्त करूं और दीर्घायु उपभोगूं ।

ब्रह्मा । गायत्री । त्र्यवसाना पंचपदातिजगती ।

२७६ स्तुता मया वरदा वेदमाता
प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम् ।
आयुः प्राणं प्रजां कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसं ।
मह्यं दत्त्वा व्रजत ब्रह्मलोकम् ॥ अथर्व. १९।७१।१

(मया वरदा वेदमाता स्तुता) मैंने वर देनेवाली वेदमाताकी स्तुति की, वह वेदमाता (प्रचोदयन्तां द्विजानां) प्रेरणा देनेवाले द्विजोंको (पावमानी) पवित्र करनेवाली है, तुम (मह्यं) मुझे (आयुः, प्राणं, प्रजां, पशुं, कीर्तिं द्रविणं, ब्रह्मवर्चसं) आयु, प्राण, प्रजा, पशु, यश, धन और ब्रह्मचर्यसको (दत्त्वा) देकर (ब्रह्मलोकं व्रजत) ब्रह्मलोकको जाओ ॥ २७६ ॥

वेद माताका अध्ययन मैंने किया है वह मुझे दीर्घायु, प्राणका बल, सुप्रजा, गौ आदि पशु, कीर्ति, धन और ब्रह्मज्ञान देवे ।

वसिष्ठः । उषा । त्रिष्टुप् ।

२७७ उषा अप स्वसुस्तमः सं वर्तयति वर्तनिं सुजातता ।
अया वाजं देवहितं सनेम मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥
अथर्व. १९।१२।१

(उषा) उषा (सुजातता) उत्तम रीतिसे उत्तम होनेके कारण (वर्तनिं सं वर्तयति) मार्गको सम्यक् रीतिसे दर्शाती है और (स्वसुः तमः अप) अपनी बहिन रात्रीके अन्धकारको दूर करती है, (अया देवहितं वाजं सनेम) इस उषासे हम देवोंके लिए हितकारक बल प्राप्त करें (सुवीराः शतहिमाः मदेम) उत्तम वीर सन्तानोंसे युक्त होकर हम सौ वर्ष तक आनन्द प्रसन्न युक्त रहें ॥ २७७ ॥

उषः कालमें उठनेसे सौ वर्षकी आयु प्राप्त हो सकती है। उषा दीर्घायु प्राप्त करनेके मार्गको ठीक रीतिसे बताती है। (अया देवहितं वाजं सनेम) उषः कालमें उठनेसे इंद्रियोंके लिये हित करनेवाला बल प्राप्त होता है जिससे सब इंद्रियां अच्छी रहती हैं और दीर्घायु भी प्राप्त हो सकती है।

शन्तातिः। पवमानः। गायत्री।

२७८ पवमानः पुनातु मा क्रत्वे दक्षाय जीवसे।
अथो अरिष्टतातये। अथर्व. ६।१९।२

(क्रत्वे, दक्षाय, जीवसे) कर्म, बल और दीर्घ आयुके लिए (अथो अरिष्टतातये) और कल्याणके विस्तारके लिए (पवमानः मा पुनातु) पवित्र करनेवाला देव मुझे पवित्र करे॥ २७८॥

कर्तृत्व शक्ति, बल, दीर्घायु तथा आपत्तिको दूर करनेके लिये सोमरस सहायक होता है।

अंगिराः। पृथिव्याग्नी। पंक्तिः।

२७९ पृथिवी धेनुस्तस्या अग्निर्वत्सः।
सा मेऽग्निना वत्सेनेषमूर्जं कामं दुहाम्।
आयुष्प्रथमं प्रजां पोषं रयिं स्वाहा॥ अथर्व. ४।३९।२

(पृथिवी धेनुः) भूमि गाय है, (तस्याः अग्निः वत्सः) उसका अग्नि बछडा है, (सा अग्निना वत्सेन) वह भूमि अग्निरूपी बछडेसे (इषं ऊर्जं कामं दुहां) अन्न और बल इच्छाके अनुसार देवे, और (प्रथमं आयुः) उत्तम आयु (प्रजां पोषं रयिं) सन्तान पुष्टि और धन प्रदान करे, (स्वाहा) मैं आत्मसमर्पण करता हूं॥ २७९॥

भूमि धेनु है, उसका पुत्र अग्नि है। इसमें यज्ञ करनेसे अन्न, बल, दीर्घ आयु, प्रजा, पुष्टि और धन प्राप्त होता है। उससे मैं स्वाहा करके यज्ञ करता हूं।

अंगिराः प्रचेताः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

२८० अग्निः प्रातः सवने पात्वस्मान्
वैश्वानरो विश्वकृद्विश्वशंभूः ।
स नः पावको द्रविणे दधातु
आयुष्मन्तः सहभक्षाः स्याम ॥ अथर्व. ६।४७।१

(वैश्वानरः) सब मनुष्योंको आगे ले चलनेवाला (विश्वकृत्) सम्पूर्ण जगत्को रचनेवाला, (विश्वशंभूः) सबका कल्याण करनेवाला (अग्निः) अग्नि (प्रातः सवने अस्मान् पातु) प्रातः कालके यज्ञमें हमारी रक्षा करे, (सः पावकः) वह पवित्र करनेवाला अग्नि (नः द्रविणे दधातु) हमें धनोंमें स्थापित करे, तथा हम (सहभक्षाः) एक साथ खानेवाले होकर (आयुष्मंतः स्याम) दीर्घायुवाले हों ॥ २८० ॥

सहभक्षाः आयुष्मन्तः स्याम– एक साथ खानेवाले होकर हम दीर्घायु वाले हों । एकतासे बल बढता है, और बलसे दीर्घायु प्राप्त होती है ।

अंगिराः प्रचेताः । विश्वेदेवाः । त्रिष्टुप् ।

२८१ विश्वे देवा मरुत इन्द्रो अस्मान्
अस्मिन् द्वितीये सवने न जह्युः ।
आयुष्मन्तः प्रियमेषां वदन्तो वयं देवानां सुमतौ स्याम॥
अथर्व. ६।४७।२

(विश्वेदेवाः मरुतः इन्द्रः अस्मान्) सम्पूर्ण देव, मरुत् और इन्द्र हमें (अस्मिन् द्वितीये सवने) इस दूसरे सवनमें (न जह्युः) न छोडें । (प्रियं वदन्तः आयुष्मन्तः) प्रिय बोलनेवाले तथा दीर्घायुवाले होकर (वयं) हम (एषां देवानां सुमतौ स्याम) इन देवोंकी सुमतिमें रहें अर्थात् उनका उत्तम आशीर्वाद हमें मिले ॥ २८१ ॥

हम आपसमें प्रिय भाषण करें । देवोंकी अच्छी बुद्धि प्राप्त करें और दीर्घायु प्राप्त करें ।

अंगिराः । जंगिडमणिः । अनुष्टुप् ।

२८२ कृत्यादूषण एवायमथो अरातिदूषणः ।
अथो सहस्वान् जंगिडः प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥

अथर्व. १९।३४।४

(अयं कृत्यादूषणः एव) यह मणि विनाशक शक्तिको दूर करनेवाला (अथ) और (अरातिदूषणः) शत्रुओंको दूर करनेवाला है । (अथ सहस्वान् जंगिडः) और यह सामर्थ्यवान् जंगिडमणि (नः आयूंषि प्रतारिषत्) हमारी आयु बढावे ॥ २८२ ॥

जंगिडमणि विनाशक शक्तिको दूर करता है, शत्रुको दूर करता है, सामर्थ्य बढाता है और आयुष्य दीर्घ करता है ।

शौनकः (संपत्कामः) । अग्निः । ककुम्मती बृहती ।

२८३ मय्यग्रे अग्निं गृह्णामि सह क्षत्रेण वर्चसा बलेन ।
मयि प्रजां मय्यायुर्दधामि स्वाहा मय्यग्निम् । अथर्व. ७।८२।२

(अग्ने मयि क्षत्रेण वर्चसा बलेन सह अग्निं गृह्णामि) पहिले मैं अपने अन्दर क्षात्रशौर्य, ज्ञानके तेज और बलके साथ रहनेवाले अग्निका ग्रहण करता हूं, (मयि प्रजां) अपने अन्दर प्रजाको (मयि आयुः) अपने अन्दर आयुको (मयि अग्निं) अपने अन्दर अग्निको (दधामि) धारण करता हूं ॥ २८३ ॥

अग्नि मुझे सुसंतान, और दीर्घायु देता है । इसलिये मैं क्षात्रबल, तेज और सामर्थ्य प्राप्त करनेके लिये यज्ञसे अग्निकी उपासना करता हूं ।

शुक्रः । कृत्यादूषणं । जगतीगर्भा त्रिष्टुप् ।

२८४ ऐन्द्राग्नं वर्म बहुलं यदुग्रं विश्वे देवा नाति विध्यन्ति सर्वे ।
तन्मे तन्वं त्रायतां सर्वतो
बृहदायुष्मां जरदष्टिर्यथासानि ॥ अथर्व. ८।५।१९

(सर्वे विश्वे देवाः) सब देव (यत् न अतिविध्यन्ति) जिसको

अतिक्रमण नहीं कर सकते, (तत् उग्रं बहुलं ऐन्द्राग्नं बृहत् वर्म) वह वीर बडा इन्द्र और अग्निका बडा कवच (मे तन्वं सर्वतः त्रायतां) मेरे शरीरका सब ओरसे रक्षा करें (यथा) जिससे मैं (जरदष्टिः) वृद्धावस्था तक कार्य करनेवाला होकर (आयुष्मान् असानि) दीर्घायु होऊं ॥ २८४ ॥

कवच शरीरका संरक्षण करता है। मैं वृद्धावस्थातक अच्छी तरह जीवित रह कर दीर्घायुषी बनूंगा, ऐसा मनका निश्चय करना चाहिये।

शुक्रः । इन्द्रः । विराट् त्रिष्टुप् ।

२८५ अस्मिन्निन्द्रो नि दधातु नृम्णं
इमं देवासो अभि संविशध्वम् ।
दीर्घायुत्वाय शतशारदाय आयुष्मान् जरदष्टिर्यथासत् ॥

अथर्व. ८।५।२१

(अस्मिन् इन्द्रः नृम्णं नि दधातु) इसमें इन्द्र बल स्थापित करे, (देवासः इमं अभि संविशध्वं) देव इसमें प्रविष्ट हों, (यथा) जिससे (शतशारदाय दीर्घायुत्वाय) सौ वर्षकी दीर्घायुके लिए (आयुष्मान् जरदष्टिः असत्) दीर्घ जीवी और वृद्धावस्था तक सुदृढ रहें ॥ २८५ ॥

मानव शरीरमें अंगों और अवयवोंमें देवोंके अंश आकर रहते हैं। वे शरीरको सौ वर्षतक जीवन चलानेकी सहायता करें। वृद्धावस्थामें भी शरीर अच्छा कार्यक्षम रहे।

भरद्वाजः । इन्द्रः । त्रिष्टुप् ।

२८६ प्रत्यंचमर्कमनयं शचीभिः आदित्
स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ।
अया वाजं देवहितं सनेम मदेम शतहिमाः सुवीराः ॥

अथर्व. २०।६३।३

(शचीभिः प्रत्यंचं अर्कं अनयन्) अपनी शक्तियों के साथ वे सूर्यको इधर लाये (आत् इत् इषिरां स्वधां पर्यपश्यन्) इसके पश्चात्

प्रिय स्वधाको उन्होंने देखा (अया देवहितं वाजं सनेम) इससे देवोंके रखे हुए बलको उन्होंने प्राप्त किया, हम (सु-वीराः शतहिमाः मदेम) अच्छे पुत्रपौत्रोंके साथ सौ वर्ष आनन्दसे रहें ॥ २८६ ॥

उत्तम वीर पुत्रपौत्रोंके साथ सौ वर्षतक अच्छी तरह आनंदके साथ रहें।

शम्भुः । जरिमा, आयुः । जगती ।

२८७ तुभ्यमेव जरिमन्वर्धतामयं मेममन्ये
मृत्यवो हिंसिषुः शतं ये ।
मातेव पुत्रं प्रमना उपस्थे मित्र एनं मित्रियात्पात्वंहसः ॥
अथर्व. २।२८।१

हे (जरिमन्) वृद्धावस्था ! (तुभ्यं एव अयं वर्धतां) तेरे लिए ही यह मनुष्य बढे, (इमं ये अन्ये शतं मृत्यवः) इसको जो ये सौ अपमृत्यु हैं, (मा हिंसिषु) मत हिंसित करें। (प्र-मनाः माता पुत्रं उपस्थे इव) प्रसन्न मनवाली माता पुत्रको जैसे गोदीमें लेती है, उसी प्रकार (मित्रः मित्रियात् एनसः एनं पातु) मित्र मित्र सम्बन्धी पापसे इसको बचावे ॥ २८७ ॥

माता जैसे पुत्रका बचाव करती है, उस तरह वृद्धावस्था मनुष्यके शरीरका संरक्षण करे, इसको दीर्घ आयु तक ले जावे और कार्यक्षम रखे।

शम्भुः । जरिमा, आयुः । त्रिष्टुप् ।

२८८ मित्र एनं वरुणो वा रिशादा जरामृत्युं कृणुतां संविदानौ ।
तदग्निर्होता वयुनानि विद्वान्
विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति ॥ अथर्व. २।२८।२

(मित्रः रिशादसः वरुणः वा) मित्र और शत्रुनाशक वरुण (संविदानौ एनं जरामृत्युं कृणुतां) दोनों मिलकर इसको वृद्धावस्थाके पश्चात् मरनेवाला करें। (होता वयुनानि विद्वान्) दाता और सब कर्मोंको यथावत् जाननेवाला अग्नि (तत् विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति) उसे सब देवोंके जन्मोंको कहता है ॥ २८८ ॥

मित्र तथा वरुण इस मनुष्यको वृद्ध अवस्थातक सुखसे ले जांय। मित्र तथा वरुण ये दो प्राण अपान हैं। इनकी सुस्थितिसे मनुष्य दीर्घजीवी हो सकता है।

शम्भुः। जरिमा। त्रिष्टुप्।

२८९ त्वमीशिषे पशूनां पार्थिवानां
ये जाता उत वा ये जनित्राः।
मेमं प्राणो हासीन्मो अपानो
मेमं मित्रा वधिषुर्मो अमित्राः। अथर्व. २।२८।३

(ये जाताः उत वा ये जनित्राः) जो जन्मे हैं और जो जन्मनेवाले हैं, उन (पार्थिवानां पशूनां त्वं ईशिषे) पृथ्वीके ऊपरके प्राणियोंका तू स्वामी है। (इमं प्राणः मा अपानः च मा हासीत्) इसको प्राण और अपान न छोडें, (मित्राः इमं मा वधिषुः) मित्र इसे न मारें, (मा अमित्राः) शत्रु भी न मारें ॥ २८९ ॥

शत्रु और मित्र इस मनुष्यको न मारें। प्राण और अपान इस मनुष्यको न छोडें अर्थात् दीर्घ कालतक इसके शरीरमें योग्य रीतिसे कार्य करके इसको दीर्घायु बनावें।

शम्भुः। द्यावापृथिवी। त्रिष्टुप्।

२९० द्यौष्ट्वा पिता पृथिवी माता जरामृत्युं कृणुतां संविदाने।
यथा जीवा अदितेरुपस्थे
प्राणापानाभ्यां गुपितः शतं हिमाः ॥ अथर्व. २।२८।४

(द्यौः पिता पृथिवी माता संविदाने) द्यौ पिता और पृथ्वी माता मिलकर (त्वा जरामृत्युं कृणुतां) तुझे वृद्धावस्थाके बाद मरनेवाला करें, (यथा अदितेः उपस्थे) जिससे मातृभूमिकी गोदमें (प्राणापानाभ्यां गुपितः) प्राण और अपानसे सुरक्षित होकर तू (शतं हिमाः जीवाः) सौ वर्षतक जीवित रह ॥ २९० ॥

द्युलोक और पृथिवी अर्थात् यह संपूर्ण विश्व सहायता करके इस मनुष्यको दीर्घजीवी बनावे। प्राण और अपानसे यह मनुष्य संरक्षित होकर सौ वर्षतक जीवित रहे।

शम्भुः। मित्रोवरुणौ। भुरिक्।

२९१ इममग्न आयुषे वर्चसे नय प्रियं रेतो वरुण मित्रराजन्।
माते वास्मा अदिते शर्म यच्छ
विश्वे देवा जरदष्टिर्यथासत् ॥ अथर्व. २।२८।५

हे (अग्ने मित्र वरुण राजन्) अग्ने, मित्र और वरुण राजा! (प्रियं रेतः) प्रिय भोग और वीर्यका बल देकर (इमं आयुषे वर्चसे नय) इसको दीर्घ आयुष्य और तेज प्राप्तिके लिए ले चल, हे (अदिते) आदि शक्ति! तू (माता इव अस्मै शर्म यच्छ) माताके समान इसे सुख दे, हे विश्वे देवो! (यथा जरदष्टिः असत्) यह मनुष्य जिससे वृद्धावस्था तक जीवित रहे वैसी सहायता करो ॥ २९१ ॥

वीर्यका संवर्धन करके दीर्घ आयुष्य और तेज प्राप्त करना चाहिये। माता जैसे पुत्रका पालन करती है, उस तरह सृष्टि रूपी माता इस मानवको वृद्धावस्था तक ले जानेमें सहायता करे।

प्रजापतिः। अतिमृत्युः। त्रिष्टुप्।

२९२ यमोदनं प्रथमजा ऋतस्य
प्रजापतिस्तपसा ब्रह्मणेऽपचत्।
यो लोकानां विधृतिर्नाभिरेषात्
तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥ अथर्व. ४।३५।१

(ऋतस्य प्रथमजाः प्रजापतेः) ऋत नियमका पहला प्रवर्तक प्रजापति (ब्रह्मणे यं ओदनं अपचत्) ब्रह्मके लिए जिस अन्नको पकाता रहा, (यः लोकानां विधृतिः) जो लोकोंको विशेषरूपसे धारण करता है, और (न अभिरेषात्) जो कभी किसीको हानि नहीं पहुंचाता (तेन ओदनेन मृत्युं अतितराणि) उस अन्नसे मैं मृत्युको पार करूं ॥ २९२ ॥

अन्नसे मानवोंके शरीरोंकी धारणा और पुष्टि होती है। अतः यह अन्न योग्य रीतिसे पकाना चाहिये। इस योग्य रीतिसे पकाये अन्नसे कोई हानि नहीं होती और उसके सेवनसे मृत्यू दूर किया जा सकता है।

प्रजापतिः। अतिमृत्युः। त्रिष्टुप्।

२९३ येनातरन्भूतकृतोऽति मृत्युं यमन्वविन्दन्तपसा श्रमेण।
यं पपाच ब्रह्मणे ब्रह्म पूर्वं तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम्॥
अथर्व. ४।३५।२

(येन भूत-कृतः मृत्युं अतितरन्) जिससे भूतोंके बनानेवाले मृत्युके पार हो गए (यं तपसा श्रमेण अन्वविन्दन्) जिसे तप और परिश्रमसे प्राप्त किया (यं पूर्वं ब्रह्म ब्रह्मणे पपाच) जिसको पहले ब्रह्मने ब्रह्मके निमित्त पकाया (तेन ओदनेन मृत्युं अति तराणि) उस अन्नसे मैं मृत्युको पार करूं॥ २९३॥

प्रजापतिः। अतिमृत्युः। भुरिज्जगती।

२९४ यो दाधार पृथिवीं विश्वभोजसं
पो अन्तरिक्षमा पृणाद्रसेन।
यो अस्तभ्नाद्दिवमूर्ध्वो महिम्ना
तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम्॥ अथर्व. ४।३५।३

(यः विश्वभोजसं पृथिवीं दाधार) जो सबको भोजन देनेवाली पृथ्वीको धारण करता है, (यः रसेन अन्तरिक्षं आ पृणात्) जो रससे अन्तरिक्षको भर देता है, (यः महिम्ना ऊर्ध्वः दिवं अस्तभ्नात्) जो अपनी महिमासे ऊपर ही द्युलोकको धारण किए हुए है। (तेन ओदनेन मृत्युं अति तराणि) उस अन्नसे मैं मृत्युको पार करूं॥ २९४॥

प्रजापतिः । अतिमृत्युः । त्रिष्टुप् ।

२९५ यः प्राणदः प्राणदवान्बभूव
यस्मै लोकाः घृतवन्तः क्षरन्ति ।
ज्योतिष्मती प्रदिशो यस्य सर्वाः;
तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥ अथर्व. ४।३५।५

(यः प्राणदः प्राण-द-वान् बभूव) जो जीवन देनेवाला, प्राण देनेवालोंका स्वामी है, (यस्मै घृतवन्तः लोकाः क्षरन्ति) जिसके लिए घृतयुक्त लोक रस देते हैं, (यस्य सर्वाः प्रदिशः ज्योतिष्मतीः) जिसकी सब विशा और उपविशायें तेजवाली हैं, (तेन ओदनेन मृत्युं अतितराणि) उस अन्नसे मैं मृत्युको पार करूं ॥ २९५ ॥

घी भोजनमें अवश्य होना चाहिये । घी खानेसे तेजस्विता बढती है और मृत्यु दूर किया जा सकता है ।

प्रजापतिः । अतिमृत्युः । त्रिष्टुप् ।

२९६ यस्मात्पक्वादमृतं सम्बभूव यो गायत्र्या अधिपतिर्बभूव ।
यस्मिन्वेदा निहिता विश्वरूपाः
तेनौदनेनाति तराणि मृत्युम् ॥ अथर्व. ४।३५।६

(यस्मात् पक्वात् अमृतं सं बभूव) जिस परिपक्वसे अमृत उत्पन्न हुआ, (यः गायत्र्याः अधिपतिः बभूवः) जो गायत्रीका अधिपति हुआ (यस्मिन् विश्वरूपाः वेदाः निहिताः) जिसमें सब प्रकारके वेद निहित हैं, (तेन ओदनेन अति तराणि मृत्युं) उस अन्नसे मैं मृत्युको पार करूं ॥ २९६ ॥

उत्तम परिपक्व अन्नसे अमरपन लानेवाला रस उत्पन्न होता है । जिस अन्नमें सब प्रकारके ज्ञान देनेवाले वेद रहते हैं, उस अन्नसे मृत्युको दूर करूं । अन्न स्मरण शक्ति बढानेवाला होता है । उस अन्नसे अपनी स्मरण शक्ति बढानी चाहिये । और आयु बढानेका उपाय करना चाहिये ।

प्रजापतिः । अस्तृतमणिः । पंचपदा ज्योतिष्मती त्रिष्टुप् ।

२९७ प्रजापतिष्ट्वा बध्नात्प्रथमं अस्तृतं वीर्याय कम् ।
तत्ते बध्नाम्यायुषे वर्चस ओजसे च
बलाय चास्तृतस्त्वाभि रक्षतु ॥ अथर्व. १९।४६।१

(प्रजापतिः) प्रजापतिने इस (प्रथमं कं अस्तृतं) मुख्य और सुख देनेवाले अस्तृत मणिको (वीर्याय) बलके लिए (त्वा बध्नात्) तुझे बांधा, (तत् ते आयुषे) उसी मणिको तेरी आयुके लिए (वर्चसे ओजसे) तेजके लिए, सामर्थ्यके लिए (बलाय च) और बलके (बध्नामि) बांधता हूं, (अस्तृतः त्वा अभि रक्षतु) अस्तृत मणि तेरी रक्षा करे ॥ २९७ ॥

अस्तृत मणिको शरीर पर बांधनेसे वीर्य, आयु, ओज और बल मनुष्यका बढता है ।

अस्तृत मणि तैयार करनेकी विद्याकी खोज करनी चाहिये । 'अस्तृत' का अर्थ 'न थकनेवाला' है ।

भृगुः । अग्निः । भुरिगार्षी पंक्तिः ।

२९८ पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः पुनर्ब्रह्मा वसुनीतिरग्ने ।
पुनस्त्वा ब्रह्मणस्पतिराधाद् दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ॥
अथ. १२।२।६

हे अग्ने ! (आदित्याः रुद्राः वसवः) आदित्य, रुद्र और वसु (वसुनीतिः, ब्रह्मा, ब्रह्मणस्पतिः) धन देनेवाला ब्रह्मा और ब्रह्मणस्पति (शतशारदाय दीर्घायुत्वाय त्वा पुनः अधात्) सौ वर्षकी दीर्घायुके लिए तुझे पुनः स्थापित करते हैं ॥ २९८ ॥

भृगुः । अग्निः । अनुष्टुप् ।

२९९ अस्मिन्वयं संकसुके अग्नौ रिप्राणि मृज्महे ।
अभूम यज्ञियाः शुद्धाः प्रणि आयूंषि तारिषत् ॥
अथर्व. १२।२।१३

(अस्मिन् संवसुके अग्नौ) इस विवाहके अग्निमें (वयं रिप्राणि मृज्महे) हम अपने सब दोषोंको शुद्ध करते हैं, इससे (यज्ञियाः शुद्धाः अभूम) हम पवित्र और शुद्ध होते हैं, वह (न. आयूंषि प्र तारिषत्) हमारी आयु बढावे ॥ २९९ ॥

यज्ञ करनेसे सब दोष दूर होते हैं। इस तरहसे प्राप्त हुई पवित्रता आयुको बढाती है।

भृगुः । मृत्युः । त्रिष्टुप् ।

३०० इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम् ।
शतं जीवन्तः शरदः पुरूचीस्तिरो मृत्युं दधतां पर्वतेन ॥
अथ. १२।२।२३

(जीवेभ्यः इमं परिधिं दधामि) जीवोंके लिए मैं यह मर्यादा देता हूं, (एषां अपरः एतं अर्थं मा नु गात्) इनमेंसे कोई एक भी इस अर्थके पार कभी न जावे, (शतं शरदः पुरूचीः जीवन्तः) अति दीर्घ सौ वर्षोंका जीवन अनुभव करते हुए (पर्वतेन मृत्युं तिरो दधतां) पर्वतके द्वारा मृत्युको अन्तर्हित रखें ॥ ३०० ॥

मानवोंकी आयुष्य मर्यादा परमेश्वरसे निश्चित की है। कोई मनुष्य नीच बनकर इस आयुरूपी धनको न खो बैठे। सौ वर्षकी दीर्घ आयु प्राप्त करें और पृष्ठवंशरूपी पर्वतके नीचे मृत्युको दबाकर रखें। पृष्ठवंशको सीधा-सरल रखनेसे दीर्घ आयु प्राप्त होती है।

भृगुः । मृत्युः । त्रिष्टुप् ।

३०१ आ रोहताय्युर्जरसं वृणाना अनुपूर्वं यतमाना यति स्थ ।
तान् वस्त्वष्टा सु जनिमा स
जोषाः सर्वमायुर्नयतु जीवनाय ॥ अथ. १२।२।२४

(जरसं वृणानाः आयुः आरोहत) वृद्धावस्थाको स्वीकर करते हुए दीर्घ आयुको प्राप्त करो, (अनुपूर्वं यतमानाः यति स्थ) एकके

पीछे दूसरा सिद्धि तक प्रयत्न करता रहे, यत्नमें रहे (सुजनिमा सजोषाः त्वष्टा) उत्तम जन्मवाला उत्साहवाला त्वष्टा (तानू वः जीवनाय सर्वं आयुः नयतु) आप सबको दीर्घ जीवनके लिए पूर्ण आयुतक ले जावे ॥ ३०१ ॥

आयु वृद्ध होनेतक शरीरको अच्छी तरह सुरक्षित रखो। अनुकूलताके अनुसार प्रयत्न करके दीर्घ आयु प्राप्त करें।

भृगुः । मृत्युः । त्रिष्टुप् ।

३०२ यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथर्तवं ऋतुभिर्यन्ति साकम् ।
यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषाम् ॥
अथ. १२।२।२५

(यथा अहानि अनुपूर्वं भवन्ति) दिन जिस प्रकार एक के पीछे दूसरे आते हैं (यथा ऋतवः ऋतुभिः साकं यन्ति) जैसी ऋतु ऋतुओंके पीछे चलती हैं, (यथा पूर्वं अपरः न जहाति) जैसे पहिलेको दूसरा नहीं छोडता, हे धाता ! (एवा एषां आयूंषि कल्पय) इसी प्रकार इनकी आयु निश्चित कर ॥ ३०२ ॥

जैसे दिन एकके पीछे दूसरा क्रमसे आता है, जिस प्रकार एक ऋतु दूसरेके पश्चात् आता ही है, जिस तरह आदमीके पीछे आदमी जाता रहता है, इस प्रकार पूर्ण आयुष्यके दिन एकके पीछे एक आते जांय और पूर्ण आयु प्राप्त हो। बीचमें किसी कारण विघ्न उत्पन्न न हो।

भृगुः । मृत्युः । त्रिष्टुप् ।

३०३ वैश्वदेवीं वर्चस आ रभध्वं शुद्धा भवन्तः शुचयः पावकाः ।
अतिक्रामन्तो दुरिता पदानि शतं हिमाः सर्ववीरा मदेम ॥
अथ. १२।२।२८

(शुद्धाः शुचयः पावकाः भवन्तः) शुद्ध पवित्र और मलरहित होकर (वर्चसे वैश्वदेवीं आरभध्वं) कल्याणके लिए विश्वदेवकी उपासना आरम्भ करो, (दुरिता पदानि अतिक्रामन्तः) पापके स्थानोंको दूर करते हुए (सर्ववीराः शतं हिमाः मदेम) सब वीरोंके समेत हम सौ वर्ष तक आनन्दसे रहें ॥ ३०३ ॥

आचरणसे शुद्ध बनो, तेजस्वी बननेके लिये दिव्य विद्याको सीखो, पाप के आचरणको दूर करो और उत्तम वीर पुत्रोंसे युक्त होकर सौ वर्षकी आयुको प्राप्त करो ।

भृगुः । मृत्युः । त्रिष्टुप् ।

३०४ आसीना मृत्युं नुदता सधस्थेऽथ
जीवासो विदथमा वदेम । अथ. १२।२।३०

(आसीना मृत्युं नुदत) आसनादि करते हुए मृत्युको दूर करो, (अथ जीवासः सधस्थे विदथं आवदेम) और यदि जीवोगे तो अपने घरमें यज्ञकी बात करोगे ॥ ३०४ ॥

मृत्युको दूर करनेका यत्न करो । जीवित रह कर यज्ञ करनेकी इच्छा करो । यज्ञसे दीर्घायु प्राप्त होती है ।

भृगुः । मृत्युः । त्रिष्टुप् ।

३०५ व्याकरोमि हविषाहमेतौ तौ ब्रह्मणा व्यहं कल्पयामि ।
स्वधां पितृभ्यो अजरां कृणोमि
दीर्घेणायुषा समिमान्त्सृजामि ॥ अथर्व. १२।२।३२

(अह एतौ हविषा व्याकरोमि) मैं इन दोनोंको हविसे विशेष उन्नत करता हूं (ब्रह्मणा अहं विकल्पयामि) ज्ञानसे मैं इसकी विशेष कल्पना करता हूं, (पितृभ्यः अजरां स्वधां कृणोमि) पितरोंके लिए मैं अविनाशी

स्वकीय धारक शक्ति बढाता हूँ, (इमान् दीर्घेण आयुषा सं सृजामि) इनको दीर्घायुसे युक्त करता हूँ ॥ ३०५ ॥

मैं यज्ञ करता हूं, उस यज्ञमें उत्तम हविर्द्रव्योंका हवन करता हूं और उस यज्ञसे दीर्घ आयु प्राप्त करता हूं ।

भृगुः । अग्निः । जगती ।

३०६ जीवानामायुः प्र तिर त्वमग्ने पितॄणां
लोकमपि गच्छन्तु ये मृताः ।
सुगार्हपत्यो वितपन्नरातिमुषामुषां श्रेयसीं धेह्यस्मै ॥
अथर्व. १२।२।४५

हे अग्ने ! (त्वं जीवतां आयुः प्र तिर) तू जीवोंकी आयु निर्विघ्नताके साथ पार कर दे, तथा (ये मृताः पितॄणां लोकं अपि गच्छन्तु) जो मर गये हैं, वे पितृलोकमें जावें । (सुगार्हपत्यः अरातिं वितपन्) उत्तम गार्हपत्य अग्नि शत्रुको ताप देवे (उषां उषां अस्मै श्रेयसीं धेहि) प्रत्येक उषःकाल इसके लिए कल्याणमय कर देवे ॥ ३०६ ॥

जीवित मनुष्योंको यज्ञका अग्नि दीर्घ आयु देवे । गार्हपत्य अग्नि प्रत्येक घरमें प्रदीप्त होकर शत्रूको दूर करे । प्रत्येक उषःकाल इस यज्ञकर्ताको कल्याण देनेवाला हो ।

भृगुः । अग्निः । पंचपदा ककुम्मती ।

३०७ वाचस्पते पृथिवी नः स्योना
स्योना योनिस्तल्पा नः सुशेवा ।
इहैव प्राणः सख्ये नो अस्तु तं त्वा परमेष्ठिन्
पर्यग्निरायुषा वर्चसा दधातु ॥ अथर्व. १३।१।१७

हे (वाचस्पते) वाणीके स्वामिन् अग्ने ! (नः पृथिवी स्योना) हमारे लिए पृथिवी सुखकर हो, (योनिः स्योना) घर कल्याणकारी हो,

+

(नः तल्पा सुशेवा) हमारे लिए बिछौने सुख कर हों, (इह एव नः सख्ये प्राणः अस्तु) यहीं पर हमारी मित्रतामें प्राण रहें, हे परमेष्ठिन् ! (तं त्वा अग्निः आयुषा वर्चसा परि दधातु) उस तुझे यह अग्नि आयु और तेजसे युक्त करे ॥ ३०७ ॥

पृथिवी, घर, बिछोना सुखकर हों। आपसकी मित्रतामें सुखकारक जीवन हो। हम दीर्घ आयु और तेजस्वितासे युक्त होकर यहां रहें।

भृगुः । (आयुष्कामः) । दर्भः । अनुष्टुप् ।

३०८ शतकाण्डो दुश्च्यवनः सहस्रपर्ण उत्तिरः ।
दर्भो य उग्र ओषधिस्तं ते बध्नाम्यायुषे ॥ अथर्व. १९।३२।१

(शतकाण्डः दुश्च्यवनः) सौ काण्डोंवाला, जिसका हटाना कठिन है, (सहस्रपर्णः) हजारों पत्तोंवाला (उत्तिरः) ऊपर आनेवाला (दर्भः यः उग्रः ओषधिः) दर्भ यह एक उग्र औषधि है (तं ते आयुषे बध्नामि) उसको तुझे आयु बढानेके लिए बांधता हूं ॥ ३०८ ॥

दर्भ आयु बढानेवाली औषधि है। उसको शरीर पर बांधनेसे आयु बढती है।

भृगुः । दर्भः । आस्तारपंक्तिः ।

३०९ तीक्ष्णो राजा विषासही रक्षोहा विश्वचर्षणिः ।
ओजो देवानां बलमुग्रमेतत्तं ते बध्नामि जरसे स्वस्तये ॥
अथर्व. १९।३३।४

(तीक्ष्णः राजा) वीर राजा (विषासहिः) शत्रुको हरानेवाला (रक्षो हा) राक्षसोंको मारनेवाला (विश्वचर्षणिः) सब मानवोंका हित करनेवाला (देवानां ओजः) देवोंका यह सामर्थ्य है (तं ते) उसे तेरे शरीर पर (जरसे स्वस्तये बध्नामि) वृद्धावस्थाकी प्राप्तिके लिए और कल्याणके लिए बांधता हूं ॥ ३०९ ॥

दर्भ शत्रुओंका पराभव करनेवाला, राक्षसोंको मारनेवाला, मानवोंका हित करनेवाला दैवी शक्तिसे युक्त है। उसको शरीरपर बांधनेसे वृद्धावस्था तककी दीर्घ आयु मिलती है और कल्याण होता है।

भृगुः। दर्भः। अनुष्टुप्।

३१० दिवि ते तूलमोषधे पृथिव्यामसि निष्ठितः।
त्वया सहस्रकाण्डेनायुः प्र वर्धयामहे ॥ अथ. १९।३२।३

हे ओषधे! (ते तूलं दिवि) तेरी चोटी आकाशमें हैं, (पृथिव्यां निष्ठितः असि) पृथ्वीमें तू स्थिर है, (त्वया सहस्रकाण्डेन) तुझ सहस्रकाण्डसे युक्तके द्वारा (आयुः प्रवर्धयामहे) हम अपनी आयु बढाते हैं ॥ ३१० ॥

सहस्र काण्डोंसे युक्त दर्भको शरीर पर बांधनेसे आयु बढती है।

भृगुः। दर्भः। जगती।

३११ सहस्रार्घः शतकाण्डः पयस्वानपामग्निर्वीरुधां राजसूयम्।
स नोऽयं दर्भः परि पातु विश्वतो
देवो मणिरायुषा सं सृजाति नः ॥ अथर्व. १९।३३।१

(सहस्र अर्घः) हजारों प्रकारसे मूल्यवान् (शतकाण्डः) सौ काण्डोंवाला (पयस्वान्) दूधसे परिपूर्ण (अपां अग्निः) जलोंमें रहनेवाला अग्नि (वीरुधां राजसूयं) औषधियोंका राजसूय यज्ञ जैसा (सः अयं दर्भः) वह यह दर्भमणि (नः विश्वतः परिपातु) हमें चारों ओरसे सुरक्षित रखे, (देवः मणिः नः आयुषा सं सृजाति) यह दिव्य मणि हमें आयुके साथ संयुक्त करे ॥ ३११ ॥

दर्भका मणि शरीर पर बांधनेसे सब प्रकारसे संरक्षण मिलता है और आयुको बढाता है।

भृगुः । आंजनम् । अनुष्टुप् ।

३१२ आयुषोऽसि प्रतरणं विप्रं भेषजमुच्यसे ।
तदाँजन त्वं शंताते शमापो अभयं कृतम् ॥

अथर्व. १९।४४।१

(आयुषः प्रतरणं असि) तू आयुका बढानेवाला है, (विप्रं भेजषं उच्यसे) तू विशेष स्फूर्तिवाला औषध कहलाता है, (तत् आंजन ! त्वं शंताते) वह हे आंजन ! तू शान्ति बढानेवाला है, हे (आपः) जलो ! (अभयं शं कृतम्) मेरे लिए निर्भयता और सुख करो ॥ ३१२ ॥

अंजन एक उत्तम औषध है । वह शान्ति देता है और निर्भयता उत्पन्न करता है ।

भृगुः । अग्निः । त्रिष्टुप् ।

३१३ प्रातः प्रातर्गृहपतिर्नो अग्निः सायं सायं सौमनसस्य दाता।
वसोर्वसोर्वसुदान एधीन्धानास्त्वा शतंहिमा ऋधेम ॥

अथर्व. १९।५५।४

(प्रातः प्रातः) प्रति प्रातःकाल (अग्निः नः गृहपतिः) अग्नि हमारा गृहपति है, वह (सायं सायं सौमनसस्य दाता) प्रत्येक सायंकालमें उत्तम मनका दाता होता है, वह (वसोः वसोः वसुदानः) हमें प्रत्येक उत्तम वस्तुका देनेवाला हो, तथा (एधि) बढे, (त्वा इन्धानाः शतं हिमाः ऋधेम) तुझे प्रदीप्त करनेवाले हम सौ वर्ष समृद्ध होते रहें ॥ ३१३ ॥

अग्निमें यज्ञ किया जाता है । प्रत्येक घरमें यह यज्ञाग्नि होता है । इसको प्रदीप्त करके उसमें हवन करनेवाले सौ वर्ष जीवित रहते हैं ।

ऋषिः– उन्मोचनः आयुष्कामः । देवता– आयुः । अनुष्टुप् ।

३१४ आवर्तस्त आवर्तः परावर्तस्त आवर्तः ।
इहैव भव मा नु गा ना पूर्वाननु गाः
पितॄनसुं बध्नामि ते दृढम् ॥ अथ. ५।३०।१

(ते आवर्तः आवर्तः) तेरे समीपसे समीप और (ते परावर्तः आवर्तः तेरेसे बहुत दूर रहनेवाले (ते असुं बध्नामि) तेरे प्राणको मैं दृढ बांधता हूं, (इह एव भव) यहीं रह (पूर्वान् मा नु गाः) पूर्वजोंके पीछे न जा, (मा पितॄन् अनु गाः) पितरोंके पीछे न जा अर्थात् शीघ्र मत मर ॥ ३१४ ॥

उन्मोचनः । आयुः । अनुष्टुप् ।

३१५ यत्ते माता यत्ते पिता जामिर्भ्राता च सर्जतः ।
प्रत्यक् सेवस्व भेषजं जरदष्टिं कृणोमि त्वा ॥
अथर्व. ५।३०।५

(यत् ते माता) जिस औषधिको तेरी माता (यत् ते पिता) जिसे तेरे पिता (जामिः भ्राता च सर्जतः) तेरी बहिनें व भाई बनाते हैं, उस (भेषजं प्रत्यक् सेवस्व) औषधिका ठीक प्रकारसे सेवन कर, (त्वा जरदष्टिं कृणोमि) मैं तुझे वृद्धावस्था तक रहनेवाला बनाता हूं ॥ ३१५ ॥

योग्य औषधिका योग्य रीतिसे सेवन करनेसे दीर्घ आयु प्राप्त होती है ।

उन्मोचनः । आयुः । अनुष्टुप् ।

३१६ इहैधि पुरुष सर्वेण मनसा सह ।
दूतौ यमस्य मानु गा अधि जीवपुरा इहि ॥ अथ. ५।३०।६

हे पुरुष ! (सर्वेण मनसा सह इह एधि) सम्पूर्ण मनके साथ यहां

रह, (यमस्य दूतौ मा अनु गाः) यमके दूतोंके पीछे मत जा, (जीव पुराः अधि इहि) जीवकी पुरीमें निवास कर ॥ ३१६ ॥

अपने मनकी सम्पूर्ण शक्ति रोगनिवृत्तिमेंही विश्वाससे लगाई जावे, कोई मनुष्य यम दूतोंके वशमें न जावे, और इस शरीरमें- अर्थात् जीवात्माकी नगरीमें दीर्घकाल तक रहे।

उन्मोचनः । आयुः । त्रिष्टुप् ।

३१७ मा बिभेर्न मरिष्यसि जरदष्टिं कृणोमि त्वा ।
निरवोचमहं यक्ष्ममङ्गेभ्यो अंगज्वरं तव ॥ अथ. ५।३०।८

(मा बिभेः न मरिष्यसि) मत डर, तू नहीं मरेगा, (जरदष्टिं त्वा कृणोमि) वृद्ध अवस्था तक रहनेवाला तुझे मैं करता हूं, (तव अंगेभ्यः अंगज्वरं यक्ष्मं अहं निरवोचं) तेरे अंगोंसे शरीरके ज्वरको और क्षयरोगको मैं बाहर निकाल देता हूं ॥ ३१७ ॥

हे मनुष्य ! तेरे शरीरसे रोगको मैं दूर करता हूं। तू मत डर, तू मरेगा नहीं। मैं तुझे पूर्ण आयुतक जीवित रहनेवाला बनाता हूं। मनमें ऐसा विश्वास रखनेसे दीर्घायु प्राप्त होती है।

उन्मोचनः । आयुः । त्रिष्टुप् ।

३१८ अयमग्निरुपसद्य इह सूर्य उदेतु ते ।
उदेहि मृत्योर्गम्भीरात् कृष्णाच्चित् तमसस्परि ॥
अथ. ५।३०।११

(अयं अग्निः उपसद्यः) यह अग्नि उपासनाके योग्य है, (इह ते सूर्यः उदेतु) यहां तेरे लिए सूर्य उदय होवे, (गंभीरात् कृष्णात् तमसः मृत्योः चित्) गहरे काले अन्धकार रूपी मृत्युसे भी (परि उदेहि) परे उदयको प्राप्त हो ॥ ३१८ ॥

मृत्युसे दूर रहो। घरमें अग्नि प्रदीप्त करके उसमें हवन करो। सूर्यका उदय होनेपर उसके प्रकाशमें रहो। इससे मृत्युका भय दूर होगा और दीर्घ आयु मिलेगा।

उन्मोचनः। आयुः। विराट् प्रस्तारपंक्तिः।

३१९ प्राणेनाग्ने चक्षुषा सं सृजेमं समीरय तन्वा सं बलेन।
वेत्थामृतस्य मा नु गान्मा नु भूमिगृहो भुवत्॥

अथ. ५।३०।१४

हे अग्ने! (प्राणेन चक्षुषा सं सृज) प्राण और चक्षुसे संयुक्त कर (तन्वा बलेन इमं सं ईरय) शरीर और बलसे इसको प्रेरित कर (अमृतस्य वेत्थ) तू अमृतको जानता है, (मा नु गात्) तेरा प्राण न चला जावे, (भूमिगृहः मा नु भुवत्) भूमिको घर करनेवाला न हो अर्थात् मरकर मिट्टीमें न मिल॥ ३१९॥

'भूमिगृह' भूमिमें गाडा हुआ न हो। अर्थात् तू न मर। प्राण, आंख शरीर इनके बल बढाओ और दीर्घायु रूपी अमरत्वको प्राप्त करो।

उन्मोचनः। आयुः। अनुष्टुप्।

३२० मा ते प्राण उपदसन् मो अपानोऽपि धायि ते।
सूर्यस्त्वाधिपतिर्मृत्योरुदायच्छतु रश्मिभिः॥

अथ. ५।३०।१५

(ते प्राणः मा उपदसत्) तेरा प्राण नष्ट न होवे, (ते अपानः मो अपि धायि) तेरा अपान न आच्छादित होवे, (अधिपतिः सूर्यः रश्मिभिः त्वा उत् आयच्छतु) अधिपति सूर्य किरणोंसे तुझे ऊपर उठावे॥ ३२०॥

भावार्थ— तेरा प्राण और अपान तेरे शरीरमें बढतासे रहे, सूर्य अपनी किरणोंसे तुझे ऊपर उठावे अर्थात् जीवन देवे।

उन्मोचनः । आयुः । त्र्यवसाना षट्पदा जगती ।

३२१ अयं लोकः प्रियतमो देवानामपराजितः ।
यस्मै त्वमिह मृत्यवे दिष्टः पुरुष जज्ञिषे ।
स च त्वानु ह्वयामसि मा पुरा जरसो मृथाः ॥

अथ. ५।३०।१७

(अयं अपराजितः लोकः देवानां प्रियतमः) यह पराजित न होनेवाला लोक देवोंका प्यारा है, (यस्मै मृत्यवे दिष्टः पुरुषः त्वं इह जज्ञिषे) जिस लोककी मृत्युको निश्चित प्राप्त होनेवाला तू पुरुष यहां उत्पन्न होता है, (सः च त्वा अनु ह्वयामसि) वह तुझे बुलाता हूं, और कहता हूं कि (जरसः पुरा मा मृथाः) बुढापेसे पहले मत मर ॥ ३२१ ॥

तू देवोंका प्रिय है, यद्यपि तू इस मृत्युलोकमें जन्म लेनेके कारण मरनेवाला है, तथापि हम यह ही कहते हैं कि तू वृद्धावस्थाके पहिले न मर ।

द्रुह्वणः । निर्ऋतिः । जगती ।

३२२ यत् ते देवी निर्ऋतिराबबन्ध दामं ग्रीवास्वविमोक्यं यत् ।
तत्ते विष्याम्यायुषे वचसे बलायादोमदमन्नमाद्धि प्रसूत ॥

अथ. ६।६३।१

(देवी निर्ऋतिः) दुर्गतिने (यत् यत् अविमोक्यं दाम) जो जो सहज ही में न छूटनेवाला बन्धन (ते ग्रीवासु आ बबन्ध) तेरी गर्दन में बांधा है, वह (ते आयुषे बलाय वर्चसे विष्यामि) तेरी आयु, बल और तेजस्विताके लिए मैं खोलता हूं । अब तू (प्रसूतः अदो-मदं अन्नं अद्धि) आगे बढकर हर्षदायक अन्नका तू भोग कर ॥ ३२२ ॥

तेरे गलेमें मृत्युका पाश बांधा है। उसको मैं खोलता हूं। अब तू मृत्यु-पाशसे छूटा है। तू आयु बल और तेजस्विता प्राप्त कर। और दीर्घायु होकर यहां रह।

अगस्त्यः। मेखला। अनुष्टुप्।

३२३ यां त्वा पूर्वे भूतकृत ऋषयः परिबेधिरे।
सा त्वं परि ष्वजस्व मां दीर्घायुत्वाय मेखले॥

अथ. ६।१३३।५

(यां त्वा पूर्वे भूतकृतः ऋषयः परिबेधिरे) जिस तुझे पूर्वकालके भूतोंको बनानेवाले ऋषि बांधते रहे, (सा त्वं दीर्घायुत्वाय मां परिषजस्व) वह तू दीर्घायुके लिए मुझे आलिंगन दे॥ ३२३॥

भावार्थ— ऋषिलोग इस मेखलाको बांधते हैं, अतः यह मेखला हमें दीर्घायु प्रदान करे।

वामदेवः। दधिक्राः। अनुष्टुप्।

३२४ दधिक्राव्णो अकारिषं, जिष्णोरश्वस्य वाजिनः।
सुरभि नो मुखा करत्प्र ण आयूंषि तारिषत्॥

अथ. २०।१३७।३

(जिष्णोः वाजिनः दधिक्राव्णः अश्वस्य) विजयी, बलवान् दही जैसे सफेद घोडेकी स्तुति (अकारिषं) की वह (नः मुखा सुरभि करत्) हमारे मुखोंको सुगंधित करे (नः आयूंषि प्रतारिषत्) हमारी आयुओंको बढावे॥ ३२४॥

मुखमें सुगंधि रहनेसे दीर्घ आयु होती है। तथा मुखमें दुर्गंधि होनेसे आयु क्षीण होती है।

नारायणः । पुरुषः । अनुष्टुप् ।

३२५ यो वै तां ब्रह्मणो वेदामृतेनावृतां पुरम् ।
तस्मै ब्रह्म च ब्राह्माश्च चक्षुः प्राणं प्रजां ददुः ॥

अथ. १०।२।२९

(यः वै अमृतेन आवृतां तां ब्रह्मणः पुरं वेद) जो निश्चयसे अमृतसे परिपूर्ण उस ब्रह्मकी नगरीको जानता है, (तस्मै ब्रह्म च ब्राह्माः च चक्षुः प्राणं प्रजां ददुः) उसको ब्रह्म और इतर देव चक्षु प्राण दीर्घायु और सन्तान देते हैं ॥ ३२५ ॥

अपना शरीर अमृतसे भरपूर भरी ब्रह्मकी नगरी है। ऐसा जो जानता है उसको उत्तम दृष्टी, प्राण अर्थात् दीर्घ आयु और उत्तम संतान प्राप्त होते हैं।

नारायणः । पुरुषः । अनुष्टुप् ।

३२६ न वै तं चक्षुर्जहाति न प्राणो जरसः पुरा ।
पुरं यो ब्रह्मणो वेद यस्याः पुरुष उच्यते ॥

अथ. १०।२।३०

(यस्याः पुरुषः उच्यते ब्रह्मणः पुरं य वेद) जिसके कारण आत्माको पुरुष कहते हैं, उस ब्रह्मकी नगरीको जो जानता है, (तं जरसः पुरा चक्षुः न जहाति, न वै प्राणः) उसे वृद्धावस्थाके पूर्व चक्षु छोडता नहीं और न प्राण छोडता है ॥ ३२६ ॥

इस शरीरको यह ब्रह्मकी देवनगरी है ऐसा जो जानता है उसके प्राण वृद्ध आयुके पूर्व उसे नहीं छोडते हैं।

कुत्सः । आत्मा । त्रिष्टुप् ।

३२७ अकामो धीरो अमृतः स्वयंभू रसेन तृप्तो न कुतश्चनोनः ।
तमेव विद्वान्न बिभाय मृत्योरात्मानं धीरमजरं युवानम् ॥

अथ. १०।८।४४

(अकामः धीरः अमृतः स्वयं भूः) निष्काम, धीर, अमर, स्वयंभू (रसेन तृप्तः) रससे सन्तुष्ट वह देव (न कुतश्चन ऊनः) कहींसे भी न्यून नहीं है, (तं एव विद्वान् मृत्योः न बिभाय) उससे जाननेवाला ज्ञानी मृत्युसे डरता नहीं क्योंकि (आत्मानं धीरं अजरं युवानं) वही धीर अजर युवा आत्मा है ॥ ३२७ ॥

अपना आत्मा निष्काम, बुद्धिमान, अमर, स्वयंभू, सदा तृप्त और व्यापक है ऐसा जो जानता है, उसको मृत्युका भय प्राप्त नहीं होता। क्योंकि वह अपने आत्माको बुद्धिमान, जरारहित और तरुण जानता है।

सूर्यासावित्री । आत्मा । त्रिष्टुप् ।

३२८ स्योनं ध्रुवं प्रजायै धारयामि
तेऽश्मानं देव्याः पृथिव्या उपस्थे ।
तमा तिष्ठानुमाद्या सुवर्चा दीर्घं
त आयुः सविता कृणोतु ॥ अथर्व. १४।१।४७

(देव्याः पृथिव्याः उपस्थे) पृथ्वी देवीके पास (ते प्रजायै स्योनं ध्रुवं अश्मानं) तेरी सन्तानके लिए सुखदायी स्थिर पत्थर जैसा (धारयामि) आधार करता हूं, (तं आतिष्ठ) उस पर खडा रह (आनुमाद्याः) आनन्दित हो, (सुवर्चाः) उत्तम तेजसे युक्त हो, और (सविता ते आयुः दीर्घं कृणोतु) सविता तेरी आयु लम्बी बनावे ॥ ३२८ ॥

सूर्य प्रकाश मनुष्यकी आयुको दीर्घ बनाता है।

सूर्या सावित्री । आत्मा । अनुष्टुप् ।

३२९ पुनः पत्नीमग्निरदादायुषा सह वर्चसा ।
दीर्घायुरस्या यः पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥
अथ. १४।२।२

(आयुषा वर्चसा सह) दीर्घायुष्य और तेजके साथ (अग्निः पत्नीं पुनः अदात्) अग्निने पत्नीको पुनः प्रदान किया। (अस्याः यः पतिः) इसका जो पति है, वह (दीर्घायुः शरदः शतं जीवाति) दीर्घायु बनकर सौ वर्ष जीवित रहता है ॥ ३२९ ॥

सूर्यासावित्री। दम्पती। अनुष्टुप्।

३३० इयं नार्युपब्रूते पूल्यानावपन्तिका।
दीर्घायुरस्तु मे पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥

अथ. १४।२।६३

(इयं नारी पूल्यानि आवपन्तिका) यह स्त्री फूले हुए धान्यकी आहुति देती हुई (उप ब्रूते) कहती है, कि (मे पतिः दीर्घायुः अस्तु) मेरा पति दीर्घायु होवे, वह (शरदः शतं जीवाति) सौ वर्ष जीवित रहे ॥ ३३० ॥

सूर्या सावित्री। दम्पती। अनुष्टुप्।

३३१ इहेमाविन्द्र सं नुद चक्रवाकेव दम्पती।
प्रजयैनौ स्वस्तकौ विश्वमायुर्व्यश्नुताम् ॥ अथ. १४।२।६४

हे इन्द्र! (चक्रवाका इव) चकवा चकवीके समान (इमौ दम्पती) इस पति पत्नीको इस संसारमें प्रेरित कर, (एनौ सु-अस्तकौ प्रजया) ये दोनों उत्तम घरवाले होकर सन्तानके साथ (विश्वं आयुः व्यश्नुताम्) सब आयुका उपभोग करें ॥ ३३१ ॥

सूर्या सावित्री। दम्पती। अनुष्टुप्।

३३२ संमले मलं सादयित्वा कम्बले दुरितं वयम्।
अभूम यज्ञियाः शुद्धाः प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥

अथर्व. १४।२।६७

(संमले मलं सादयित्वा) संमलमें मल डालकर और (दुरितं कम्बले) पापको कम्बलमें रखकर (वयं यज्ञियाः शुद्धा अभूम) हम

यज्ञ करने योग्य शुद्ध हों, वह (नः आयूंषि प्रतारिषत्) हमारी आयुओंको दीर्घ बनावे ॥ ३३२ ॥

शुद्ध और पवित्र होनेसे आयु दीर्घ होती है।

सूर्यासावित्री । दम्पती । त्रिष्टुप् ।

३३३ प्र बुध्यस्व सुबुधा बुध्यमाना दीर्घायुत्वाय शतशारदाय ।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो
दीर्घं त आयुः सविता कृणोतु ॥ अथ. १४।२।७५

(सुबुधा बुध्यमाना) उत्तम ज्ञानयुक्त जागती रहकर (शतशारदाय दीर्घायुत्वाय प्रबुध्यस्व) सौ वर्षके दीर्घ जीवनके लिए जागती रह, (गृहान् गच्छ) अपने पतिके घरको जा, (यथा गृहपत्नी असः) गृहस्वामिनी जैसी बनकर रह, (सविता ते आयुः दीर्घं कृणोतु) सविता तेरी आयु दीर्घ करें ॥ ३३३ ॥

सूर्य तेरी आयु दीर्घ करे।

सव्यः । इन्द्रः । जगती ।

३३४ य उदृचीन्द्र देवगोपाः सखायस्ते शिवतमा असाम ।
त्वां स्तोषाम त्वया सुवीरा द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ॥
अथ. २०।२१।११

हे इन्द्र ! (उदृचि) वेदमंत्रके पाठमें (ये देवगोपाः) तुझ देवके द्वारा सुरक्षित हुए जो (ते सखायाः) जो तेरे मित्र हम हैं, वे (शिवतमाः असाम) उत्तम कल्याणसे युक्त हों, (त्वां स्तोषामः) हम तेरी स्तुति करते हैं, (त्वया सुवीराः) तेरे साथ रहनेसे उत्तम वीर पुत्रपौत्रोंसे युक्त होकर हम (द्राघीयः आयुः प्रतरं दधानाः) दीर्घ आयुको अधिक लम्बी बनाकर धारण करनेवाले हों ॥ ३३४ ॥

मनुष्य अपनी दीर्घ आयुको अति दीर्घ बनाकर धारण करे और आनंदसे रहे।